

धरती की पीर

—•—

• • • • •
सब जम्पते हैं सब मरते
हैं । सपु बिराट में मिसता है और
एक दिन तुम और मैं वही बिराट
में भीन हो जाएँगे । इस प्रकाश
के महापुत्र में एकाकार हो जाएँगे
बिसर्जी हम एक ज्योति हैं ।
• • • • •

“यह मेरा पुइहा है।”

“घोर यह मेरी पुइही।”

“तुम्हें मेरा पुइहा पसन्द है?”

“बहुत घोर तुम्हें मेरी पुइही?”

“पसन्द तो है पर नाक जरा जपटी है।

“रामू!” नन्ही बासिका जोश में मड़क उठी। धीमे धीमे लहरी लहरी हुई बोली “घपना मँह कमी घीघे में देखा है, जँहा तू बैठा तेरा पुइहा। बुद तो कापने-वा सुन्दर है घोर पुइहा छि छि छि। मैं ऐसे पुइहे से घपनी पुइही का ब्याह नहीं रखाऊँगी। बेचारी घपने बसम^१ का मुँह देख-देखकर प्राण दे देगी।”

नन्ही बासिका बनना ने घपना मँह दूसरी घोर घुमा लिया। उसके चेहरे पर बाज-सुखम हठ घोर जोश की रेखाएँ नाच उठी थीं। रामू ने पीरे से उठकर हाथ पकड़कर झटके हुए कहा, “तू तो बात

बात में रुक जाती है। मैंने तो वैसे ही कह दिया।” वह बनछा के सम्मुख खड़ा हो गया। हुमार मरे स्वर में बोला “तेरी बुद्धी पूनमपड़ की पछिनी से भी फुटरी^१ है। रूप उसके संग-संग में समाना हुआ है। बनछा ! मेरे बुद्धे की समझ तेरी बुद्धी से पक्की।”

बनछा का रोम-रोम पुलकित हो उठा। रामू की धीरे स्नेह-मयी दृष्टि से देखती हुई कहने लगी “रामू ! अपने बुद्धे की बापत बख्शी से ले पा। देख मेरी बुद्धी बीगणी^२ बनने के लिए कितनी छताबसी हो रही है ?”

रामू के स्वर में उत्साह भर पाया “मैं अभी बापत लाया।

“बाजे-बाजे के साथ लाया।

“मैं बाजे-बाजे के साथ ही भाईना पर तु मी खातिरबारी कोरबार करता। हजर उजर की मुबारकों को हकट्टी कर लेता। पीठ माना नाथ करना। बनछा ! ऐसा आह रबाईना कि बीबबाले बातों ठके घंघुली बजा लेंगे।

बनछा की मुक-मुक से यह भाव प्रकट हो रहा था कि उसे रामू की गारानी पर तरस पा रहा है। अपने स्वर में हल्का क्रोध लाती हुई बोली “तू रहा बटुबप्पू का बटुबप्पू^३ ही। घरे। मेरे कीन-सी चार-क बुझियाँ बैठी है—जो मैं पड़बी बुद्धी के आह में कोर-कसर रझूपी” और वह बुद्धी को अपने गालों से बिपकाकर इस तरह प्यार करने लगी कि बिच तरह कोई माँ अपनी बेटी से प्यार करती है। रामू उसे एकटक देखता रहा। बनछा ने अपनी बुद्धी को जूमते हुए कहा “अह तो मेरी लाइली है। इसके पीछे मैं अपना सब-कुछ दे दूँगी।”

रामू ने मुकते हुए कहा “भण्डा मैं चलता हूँ। तू बापत की धन बानी के लिए तैयार रहना। मैं अभी बापत लेकर आया।”

रामू जाता गया ।

बनसा कुड़िया को अपने दोनों हाथों से पकड़कर एक बार 'बूमर' नाच-नाच उठी । हालाँकि बूमर नाच उसने सही ढंग से नहीं नाचा था लेकिन उस नाच की प्रारंभिक ऊपक उस भरती की नई बेटी में दिलसाई पड़ रही थी ।

बोपहर की बेला । सुनसान गाँव का यह भाग । बध्मा भरती की मौन पीड़ा । मिट्टी की बध्मा । तिलचिन्ता की बध्मा । सुन्नी मझियों की बध्मा की गर्म धाँहें । एक उदास-सा सनी । एक प्रमत्त भ्रम्यता । एक बलवा हुआ साम्राज्य ।

उस असते हुए साम्राज्य में गाँव का कर्मा भूतहा कर्मा ।

सोच कहते हैं कि बिबबा को इतना सताया कि वह कुछ से हारकर मरने में इस कुर् में कूद पड़ी । उसका कूदना था कि कुर् का दाह-सा मीठा पानी बहर हो गया । पानी की बगल सुन समानक दुर्गम देनेवाला जन निकलन समा । तब चारों ओर से यही आवाज उठी "डायन डायन डायन ! उस कर्म किय बैसा फल मिला । यही गरक है—कुर् में कूदना मरना सड़ना धीर घन्ट में भूत बनना ।"

बिबबा डायन हो गई । यहाँ है कि अब भी कभी-कभी मध्य रात्रि को एक आवाज-सी आती है "मैं दुखी हूँ मुझ मत सताओ मत सताओ नहीं तो मैं सारे गाँव का नाच कर दूँगी ।"

उदासामुनी सैनाथ टाण्डव । मृत्यु के पश्चात् कोमल नारी का इतना समानक हिल रूप ।

पर बच्चे निर्मय हैं । भूत धीर प्रेत सभी तो उनकी प्रबोध बुद्धि से भय खाते हैं । यही भूतहा कुर्मा उनका बीड़ा-रूप है । बोपहर की रामसीमा का रंभरंभ । पूरी बोपहरी में क्या-क्या नाटक रहे जाते हैं वे मिलाये नहीं जा सकते—दुल्हा-दुल्हन गुड़हा-गुड़ही रामा-बोर श्यादि ।

बनती बूय में बिहारी बोपहरी । घरों से बाहर धीर पत्थरों के

बछ्ठी हुई यम हुआ के भोंके ।

कुएँ के दोनों छोरों पर दो साँसे^१ हैं । उनकी कच्ची-मक्की बीमारों पर हल्का-हल्का धूरा रंग पड़ा है । बो-बो छोटी सिड़कियाँ हैं और सिड़कियों में बिबाड़ों की बगल बो-बो सड़कियों के कास बनाये हुए हैं ताकि रात-बिरात को कोई उल्लास पुसकर कुएँ के बोतल का सामान मानी कौसी शोल और रस्ती उठाकर न ले जाय ।

“घंकर !” रामू ने अपनी साँस में पाँच रखते ही पूछा ।

“क्या है रामू ?”

“बात पक्की हो गई । बाघत की तैयारी करो ।”

घंकर ने घुटकी बजाते हुए उठर दिया “तो अभी तैयार कर देता हूँ ।”

दोनों अपनी साँस में चुस चये ।

कुएँ के दो साँसे एक बालक और एक बालिका के अधिकार में कर दी जाती थीं । वे दोनों ही उस दिन के नेता होते थे । मात्र रामू बनला की बारी थी इसलिए सारे बालक और बालिकाएँ उनकी आज्ञा मानना अपना बर्तन समझते थे ।

रामू बाघत की तैयारी करने में संलग्न हो गया बनला अपनी बारी और जातिरबारी की । बनला के मन में सम्तास या उत्साह का पारावार था । मचमठी हुई बोली “काली मिट्टी गोमती और पल्ला धात्री और बाबा विनायक को मनायी ।”

बालिकाएँ अपने टूटे-फूटे शब्दों में झूम झूमकर जाने लगी । ऐसा बालूम देता था कि बम्पा बरती की बैरना और मिट्टी के बर्तनारे बाबा बरत में यह स्वर बुझी का तामर है ।

धीरे धीरे सवा—

“पूरब बिता में सूर्य बैचजी समस्त भी
हूँ भी बैचा सहत किरख ने उगरी ।
मासिक तुम बिन घोर नहीं आती
बैच बचारी मोरों का पण पत भी ।”

संघीठ की मासिक समय बीच में ही टूट गई । शक्ति निस्तम्बता ।
परस्पर प्रश्न भरी दृष्टि से एक-दूसरे को देखना । भूला घोर मन-ही
मन कोसना ।

“तुम्हें नहीं आता था फिर बिनायक कुछ ही क्यों किया ?”

“मैंने बोड़े ही किया था घन्ना ने किया ।

घन्ना इस झूठे आरोप से बिड़ गई । अपनी महीन आवाज को मर्म
करती हुई बोली, “मैंने कब छोड़ा था हंगामा तो तू मरती रहती है ।”

इन्ध मूख । तू तू—मैं मैं का बड़ता हुआ तुमसुन मुँह की
तैयारियाँ ।

“छि छि छि तुमका भाव नहीं आती । ये समझी क्या
कहेंगे ? लड़की का भाता छोड़ देंगे ।” बनणा ने बड़प्पन से कहा ।
उसकी मुँह में एक बिपदा राजमाता के दरंग होते थे जो एक घोर
अविचारों की हृदिमय से सबको भावा बेटी है बूझती घोर समस्या के
समाधान के लिए महाम् क्षमता का प्रयोग भी करती है ।

“यह भिन्नी बात-बात पर झगड़ पड़ती है ।”

बनणा झन्ना बड़ी “हाथी बोड़ी हलहल बणी” । मान लो कोई
बात हो भी गई तो उसे धीरे से निपटा लेनी चाहिए । कहीं सड़केवालों
ने छुन लिया तो अपनी नाक कट जावेगी ।”

हा हा हा

घट्टहास परिहास मरी घोर की हँसी ।

बनणा ने बैचा रँकर रामु पंजु हँस-हँसकर उनकी सिस्ती उड़ा

रहे हैं। उसके तन-मन में घाय सब गई।

छोम घाबेस काँपकपी।

मन में घावा कि रामू के बात पकड़ कर लीच धूँ पर सड़की की
माँ छहरी बेचारी। खून का बूँद पीकर रह गई। लेकिन उसने रामू
को बाहर घटना बरकर कहा "तू हैस क्यों रहा है?"

"पैरी हेठी" बिजाने के लिए।"

"भेड़ी बीबे मेरी पवरली"। पीर बनणा ने बीम बाहर निकाल
र घँपुठा बता दिया।

बाय नर के लिए बही शान्ति। बही काँपती हुई सोपहरी। घाक-
। बसता हुआ कर्ण का पत्थर।

रामू ने झुबरी पीर से उज्ज स्वर में कहा "बारात या रही है।

बारत ने प्रस्ताव किया।

बंसे बदन बन्ने ऐसे बन रहे थे जैसे सजे-सजाये बाराती हों।
नकी प्रकृष्ट बात बात बनव की। केहरों पर बीकरी हुई प्रसन्नता
। रेसार्ने कह रही थी हम घरती पर नहीं बन रहे हैं हम बन रहे
घासमान पर।

रामू ने बारात को बेलकर कहा "थीत पाघो!"

बन्ने मीन, बिमुठ पीर बिस्मिल।

समी एक-दूसरे का मुँह बेचते रहे।

रामू ने उत्साह के साथ कहा "मैं शुरू करता हूँ।"

पीठ प्रारम्भ हुआ—

{ "केतरियो नाबो जीबंतो र,
जीबन्ती जीबन्तो होसे जानो-
पिया र होला र "

सड़की के पस की धीरछों ने बूँपट निकाल लिये। मोड़ने ने नहीं

इसलिए अपने कुरतों की सिर पर धसा करके उन्होंने झूठ बनाये ।
इस क्रिया से उनके पैर धीरे कमर उभाड़े हो गये ।

गुहड़ा समुदाय पहुँचा ।

सास बनखा ने लघु घर के लिए बहम्-मरी बुट्टि बाधतियों पर
हावी । अपने हाथ से बूझने की छाती का नाप किया ताकि बूझने की
प्रतिष्ठा का परिवर्तन मिल जाय । कोमले का बना काबल बुझने की धाँसी
में हासा । धाँसी में हास कर ज्योंही उसने अचानक उसके नास पर
लगाया त्योंही बुझने के पस की धीरों बिलबिलाकर हँस पड़ी ।

रामू खँप गया । उसके साधियों पर बुटी बुटी-धी उरासी छा गई ।
भना बुद्धिमानों से मात जाना मर्दों का काम है ? सबने रामू को
बिचकारा ।

सास ने बुझने की नाक पकड़कर घर के भीतर लिया । बना को
मन्नाक सुम्न — "जवाई बी की नाक न बहु जाय ।"

बही बिलबिलाहट ! बही हँसी का फन्कारा धीरे सस्तास की
फिसकारी ।

बुझने और बुझने को धामने-तामने बैठाया गया । मूठे-सन्ने ग्रंथों
का ऊट-नटांग उन्धारण किया गया ।

छेरों का समय धाया ।

रामू ने बुझने की अपनी बीर में लिया धीरे बनखा ने बुझने की ।
लड़की के पसबासों ने बीत गाता चुक किया धीरे लड़के के पसबासों
ने बड़हा करने के बिचार से उनका साथ दिया ।

भहलो तो बेरो ए लाड़ी बाबा सा रो प्यारी,
बुजो तो फरो ए लाम्नी बाबा सा रो प्यारी,
तीजो तो बेरो ए लाड़ी काकी सा रो प्यारी,
बीजो तो बेरो ए लाड़ी बीरा जो रो प्यारी,
पाँचों तो बेरो ए लाड़ी बापा सा रो प्यारी,

झूठ तो फेरो ए लाड़ी भासा जी री सारी
सप्तर्षी तो फेरो ए लाड़ी हुई छे पराई ।”

झ्याह हो गया । मङ्गी पराई हो गई ।

बिदाई की बेसा घाई । बगला ने पागी सपाकर घाँसु बहाए ।

बुन बरबो रीति-रिवाजों में परिवर्तन घाये । लेकिन बिदाई की
बेसा के घाँसु बिरन्तन है, सनावन है, न बड़े ली बहा सिने यमे पर
बहाणा करपी है ।

हुस्निन बिदा हो गई । हुस्ना हुस्निन को घपने घर के भाया ।

बोल करम ।

मूतहा कुर्ये पर नहीं खुशता गौरवता । रह यमे मे केवल रामू धीर
पगला । एक दुसरे के सन्निकट ।

बुज्जाप ।

“रामू ।”

“हूँ ।”

“तू पर नहीं जावेगा ?”

“नहीं मुझे ठेरे बिना घावड़ेगा ? नहीं ।

क्यों ?”

“तू मुझे मोत बोली लगती है ।”

“तुझे मुझ नहीं लगती ?

लगती है ।”

“फिर बाकर डूपाठी ? क्यों नहीं करता । देख सब बसे बसे है ।”

“तू भी बस ।”

“नै ?” बगला अचरज से बड़की मोर देखने लगी । कुछ सक्ती
सक्ती बोली “तेरी भी साक-मीसी हुई लो ?”

“होवे है तुझे येरे घर बसना ही पड़ेगा ।” इच्छूर्वक रामू ने कहा ।

संभले जसका हाथ पकड़ लिया ।

बनग्या ने हारकर कहा : भण्डा, मैं बसती हूँ पर पहले मुझे एक बार भुत को पुकारने दे ।”

बनग्या ने कुर्र के दूने फाटक के छेद में हँ 'हो' किया । उसकी ध्वनि प्रतिध्वनि बनकर यूँब उठी । बनग्या ने अपनी धालों में मय-सा नाचाकर कहा : 'देखा राम ! यह उस काकण^१ की आवाज है । बेसा में बोलती हूँ ठीक वीसा ही वह बोलती है । बड़ी चुड़ैल है ।”

'मेरा भी तो बैठने लगा है बनग्या ।” राम की धालें स्थिर हो गई ।

“फिर भाग ।” पीर दोनों बने वहाँ से भाग लगे हुए ।

मुठहा कर्मा । निर्बलता । सिहखी-कापरी घोषहरी । बंध्या बरती । बसती हुई मिट्टी की बंधा । भोह । बिना मनुष्य वह बरती बरती कहाँ ? समझान नीरबता की बस्ती ।

अमी मनुष्य की सतान से यही मुठहा कर्मा बुझावन बना हुआ था वही जीवन् माचता था धीर अमी भय का डेरा समझान सा !

तब मनुष्य बरती का देवता है, सुहाव है भू पार है ।

घर के द्वार पर पहुँचते-पहुँचते उन दोनों के कपड़ों की आहट मिचमिच हो गई । राम ने मुँह पर हाथ रखकर बनग्या ने संकेत से समझाया कि बोल मत लड़ीं तो तेरी माचड़ी^२ जाय जायगी ।

राम चुप हो गया । दोनों बड़ी सफाई से घर के भीतर घुस पड़े । पर भाग्य का मिजा मिठवा सोढ़े ही है । न मानूम किस्म बेतना से प्रेरित होकर माँ ने पुकारा—“राम है क्या ?”

“हाँ माँ ।”

“तेरे साथे कण^३ है ?”

“बनला !” रामू ने डरते-डरते कहा ।

“हूँ !” माँ ने हुंकार मरी । दाँवों को मलकर दाँवम को ठीक करती हुई बोली—“छोरा” क्यों तू उल्टे रास्ते बनता है ? कभी तेरी इसी बाप के पीछे तेरे बाबा^१ की हडिबर्मा यूँतोगी ।”

“क्यों माँ मैंने ऐसा कीम-सा कसूर किया ?” रामू का जोसा माका बेहारा बिबलु हो गया । उसके स्वर में दर्द भर थापा ।

“तेरा बमला के संग बीसठ बड़ी पछा घब ठीक नहीं है । वह तेरे पाँव के ठाकुर की बेटी है । कहीं ठाकुर सा बिपकी हो नये तो ?” एक झपाट भव माँ की दाँवों में बोल बोल ।

रामू पीर बनला निर्बोक् बैसे रहे । न हिले पीर न डुले । माँ ने बमला को डाँटा “तू भी नहीं मानती क्यों मने की पूँछ की उच्छ इसके पीछे-पीछे बपी पछनी है ? घर से बाहर बला” पाँव रखनेवाली छोरियाँ बोली नहीं होती है, समझो ?”

बमला चुप, मुँठ पीर मिश्रवत् ।

माँ का रोव बीरे बीरे कम होता गया । माँ है न । क्रोध बकर गारा है पर कुवानु भी बस्ती बन जाती है । पुनकारकर बोली “बुपारी नरोदे ?”

दोनों ने सिर झुकाकर स्वीकृति दी ।

माँ बाजरे की रोटी पीर सागरिवा का साव निमालकर देवे ली । दोनों की बाबी-भाबी रोटी भी बाँट दी । बोड़ी-बोड़ी राजड़ी भी । दी ।

तब रामू ने अनुनय-वरे स्वर में कहा, “माँ हम दोनों बने एक गाय का सँ ?”

“नहीं !” माँ ने बड़ककर कहा । रामू का बेहारा बराब हो गया । ती के हृदय पर बहरा भावगत मगा । बमला कपल छठी । मायुत्व

विचलित हो गया।

वह मुसकरा पड़ी 'साब जा लो।'

माँ की इस धाजा पर राम-बनछा को जीवन मिल गया। दोनों साथ-साथ जाने लगे।

राम के पिता बोली में उसी समय प्रवेश किया। बनछा को देखकर बोला 'साब राम को लेकर कहीं गई ली?'

'कूरें पर। बनछा ने कौर नियमित हुए कहा।

'कौन से कूरें पर?'

'भूतवासे।

माँ की आँखें विस्फारित हो गईं। बोली राम-राम करने लगा। जैसे वह प्रभु से प्रार्थना कर रहा है कि इन नादान बच्चों की रक्षा तु ही करना। ये प्रबोध है, नासमझ है, भले-बुरे से चलमिल हैं। तु जमत ठारस है, इनकी रक्षा तेरे हाथ है।

माँ घात नहीं रह सकी। डाँटती हुई बोली, 'तुम वहाँ गये हो क्यों ये?'

बालकों का मोलापन कह जठा 'हम तो वहाँ हर रोज जाते हैं।'

'क्या कहा हर रोज जाते हो? हे भगवान। हे सती माई। इन बाल-भोपालों की रक्षा तेरे ही हाथ है। पल भर के लिए माँ समाधिस्थ बनी रही। फिर झड़पती हुई बोली 'कान जोसकर मुन लो घब यदि मुन से भी डबल बने मये तो बोझ लकड़ी' लेकर उहड़ाने में बन्द कर दूँगी। यह तो ईश्वर की कृपा ही समझो कि उस डाकन की गजर से बने रहे बरना हे भगवान।' एक माँ अपने बच्चों की मुर्दा के बारे में सोच भी नहीं सकती। उसने नेत्र मूँदकर भगवान की धारणा की।

बोली कठोर स्वर में बोला 'रामू! कम से मेरे साथ बैठकर काम में हाथ बटाना। तुमारा का लड़का मारने बनाता नहीं सीखेना तो

दीवानजी ने अपना बोझ वापस चुमाया ।

दूर, बहुत दूर, बूल के बावत उठते हुए नजर प्राये । बूल के बावत जैसे-जैसे प्रासाद के समीप घाटि गये वैसे-वैसे उनके पीछे घाटी हुई प्रहस्य घाटियाँ स्पष्ट होती गई ।

महानारयणामीन रच । स्वर्न घोर रबत का विधित निर्माण ।
ससकी शीष्टि । ससकी अनुपम सज्जा ।

सस पर राजा रिसालू विराजमान थे । ग्रीक धातु । पी-हीन पुलकित उनकी चिन्ती पान्तरिक दुर्बलता की साक्षी दे रहा था । वेस घोर घस्नों की साव-सज्जा से ऐसा प्रतीत होता था कि वे धाबेदह लीं हों । उनके काने कुस्य बेहरे पर चमकती हुई प्रसन्नता उनकी एक साँस से प्रकट हो रही थी ।

रच के पीछे बीस-पन्नीस सैनिक थे । वे भी घस्नों में सुसज्जित थे । उन सैनिकों के बेहरे पर उत्साह की सहरें बीड़ रही थी वैसे वे जिस कार्य के लिए गए थे उसमें सफल होकर प्राये हों ।

रच के तोरुस द्वार पर पहुँचते ही राजा ने गगनमयी स्वर में राजा के स्वागत हेतु कहा "अम्मा अम्मावाता नै ।

बली बली अम्मा ॥

राजा रिसालूजी की । । । ।"

राजा रिसालू का मस्तक अहम् से घुठ गया । शरण घर के लिए उन्होंने आरों घोर दृष्टि बीड़ाई ।

रच प्रासाद के भीतर चला गया ।

प्रासाद विशाल भूभाग में विस्तृत था । उसमें कई भाग थे घोर प्रत्येक भाग का अपना-अपना अलग महत्त्व था । अपनी इच्छानुसार राजा रिसालू विभिन्न भागों में निवास करते थे ।

आज उनका रच रंजमहल के सम्मुख रहा ।

वहाँ के द्योड़ीदार ने अपना मस्तक झुकाकर "अम्मा अम्मावाता नै" कहा ।

यह द्योड़ीदार पचास वर्ष का सनटा था। जीवन के कठोर धम से सत्पन्न उसके चेहरे की झुर्रियाँ उसके धड़ित भिस्वास की छोटक थी। गहरी बंभीर बेंसी हुई धीं धीं माचो कह रही थी 'मैं एक मनुष्य की ऐसी स्वामिभक्त संतान हूँ जिसने अपने स्वामी की आज्ञा पर अपना सर्वस्व द्योम दाना। भारमा, धमितापाएँ धीर सुख स्वीकार कर दिए।

'स्वामिभक्त मैं हूँ धर्म धीर मर्यादा का पालक।'

राजा रिशामु को रब से दो बासियों ने सहारा देकर उतारा। दो अन्य लोगों ने उनके पाँवों के नीचे जाल पाँवड़ा बिछाया ताकि राजाजी के पाँव मैले न हों।

"बतुरसिंह।" राजा रिशामु का भारी-भरकम स्वर गरबा।

'जो हुयम।' द्योड़ीदार की धीं धीं झुक गई।

'रंगमहल का प्रवेश।'

'हो यमा महाराज।

'जो महाराज। राजा रिशामु ने घरने बसे का द्वार बतुरसिंह को दे दिया। बतुरसिंह ने बसे स्वर में कहा 'महाराज की जय महाराज की जय।'

राजा रिशामु सीढ़ियाँ चढ़ने लगे। सीढ़ियाँ बसे काँप रही थीं।

'बतुरसिंह।'

बतुरसिंह का सारा बदन धजात धायाँका से सिहर उठा। राजा रिशामु का सीढ़ियों के बीच में रुकने का मतलब है कि आज वह अपने स्वामिभक्त सेवक से धसतुष्ट हैं। उसने मय-बिकम्पित स्वर में कहा 'हुयम धमदाता।'

'कल कुलदेवी के मन्दिर की प्रथम वर्षगांठ है, उसका समुचित प्रवेश करने के लिए बीबानबी को कह दिया जाय।'

'जो हुयम।' बतुरसिंह के मास पर जो पसीना बगबने मया था वह उसने अपने कुपट्टे के पस्ते से पोंछा।

बस की भाँति बिरटे राजा रिशामु के कबज काँपती हुई

धीड़ियाँ !

राजा रिसालू रनमहल में प्रविष्ट हुए ।

परिवारिका ने मधुर स्वर में कहा—“सम्मा घन्नवाता मे ।”

राजा रिसालू ने छत्रकी ओर देखा तक नहीं । साधारण परिवारिका पर ने दृष्टिपात तक नहीं करते थे ।

टन् टन् टन् टन् टन् टन्

बड़ के घटे ने सूचना दी कि सम्मा व्यर्तित हो गई है ।

रात की कासिमा सृष्टि पर फैमने लगी । छोटे-छोटे जुगनुपों से तारे धाकाध में चमकने लगे । मम-रंधा पुरुष रंग से जीवन की ओर धमसर हो रही थी ।

‘सम्मा घन्नवाता मे सम्मा घन्नवाता मे ।’ इस वादियों की घुमघुर आवाज रनमहल में गूँज उठी ।

फिर एकदम सन्नाटा मूल्मु-सा मौन छात नीरव ।

एक चिरन्तन आसक्त जैसे रंयमहल की प्रत्येक वस्तु में जाग उठा ।

राजा रिसालू ने अपनी दृष्टि सब वादियों पर फेंकी । सबकी बरबर्ते झूठी हुई की बड़े किसी ने पापाण की एक-सी मुठियाँ पककर कम से लड़ी कर दी थीं ।

राजा रिसालू झट्टहास कर उठे । वादियों के उन धीर मन में भ्रम की लहर बीक उठी । सबके हाव रंयवत् सठ कर आबख हो पड़े । निनीत स्वर में कह उठी “सम्मा घन्नवाता ।

रिसालू ने अपना बायाँ हाथ ऊँचा करके कहा “सम्मा ।”

प्रमथमान ।

वादियों के होंठों पर मुसकान जाग उठी । ऐसी जैसी पहरे काके बादलों से बीच बिजली ।

“महासौभाग्य ।” राजा रिसालू ने कहा “इसी प्रकार ही सिष्टता हमें पसन्द है ।”

इसके बाद तीन वादियों ने उनके बदन उतारे धीर कुछ सधामें ठोक

करने लगी।

राजा रिसालू बीबा पर टीकाबस हो बोले, "बन्नु !"

"जी भल्लादा !"

"नृत्य पीर पीठ !"

राजा रिसालू के हाथ में कुम्भूम्बे^१ का प्याला बैठी हुई बन्नु बोली "चतुर्दश पात्र नगर-सेठ बनपति की सुकन्या 'कंचन' का अपहरण कर लाये हैं।"

"सेठ बनपति की कन्या ?" राजा रिसालू के नेत्र विस्फारित हो गए। उनके घम्ट-करण में खोर का धातोड़न-बिभोड़न हुआ। स्वर घबराहट हो गया। वह कुछ देर तक नेत्र मुंदकर घाँट खड़े, फिर घपने को स्वरय करते हुए बोले यह उचित नहीं।

"भल्लादा !" बन्नु की घाँटें तरल हो उठीं। उसे भय था कि कहीं राजा रिसालू की कोपालि की भयावह लपटों में चतुर्दश की जनह उससे न बसना पड़े।

"जामो हूँ एकमात्र बाहिये।

रंगमहल में बिलास का तीरठा हुआ सागर, बैमल का धामार।
एकदम स्मयान में परिवर्तित हो गया। दासियों की पायलों की मंजार मुत्त। रमीली बाखी नुत्त। रिसालू की कठोर धामाज भी मुत्त।
एक घाँटि और स्तब्धता छा गई।

रिसालू धात्रमकव पीछ के सम्मुख धड़े हो गये। बीबा प्रत्यक्ष कमामय घम्टों के भीर स्थित था। घम्टों पर स्वरु का दमकटा हुआ रंग तीरो की धाज को बढ़ा रहा था।

घपने मुत्त को देखकर राजा रिसालू सोच बैठे (मेरी मोय की पालि बीख हो गई मौवन जला गया सीमर्य मे भी मल मोड़ कर बिनाश कर लिया। रोप रह गई बासना, धामाजित। इसी धामाजि मे

मेरे बुढ़ापे की शान्ति धीरे धीरे को छीन रहा है। मैं क्यों नहीं उसका परिचय कर दूँ ?”

उसी क्षण उनके मस्तिष्क में सुकुमार धीरे कीमन वाचना की भाँति छाने लगी। उनकी रंग रंग में क्षणिक शान्ति का आभिर्भास हुआ।

वेचना बिबेक धीरे धीरे उसे जगती की महाभाषा में अस्तित्व-विहीन होते गये।

राजा रिसालू ने कम्पायी की भाँति चीखकर कहा, “बन्नु !”

“अन्नदाता !”

“कर्मन को उपरिष्ठ करो !”

“ओ हृदय !”

बन्नु बनी गई।

राजा रिसालू बेबीनी से रंगमहल में बहसकरपी करने लगे।

ठाकुरल मनुष्य जागता है कि वाचना का प्रपञ्च जितना मधुर होता है उसका अन्त अतना ही विषाद होता है। पर कुछ व्यक्ति इस विद्वान्त के अपवाद बन होते हैं। रिसालू भी एक अपवाद ही थे। अपनी प्रवेद शक्ति के बल पर उन्होंने जितने पाप किये वे मिनाये नहीं जा सकते। प्रजा पर अत्याचार, किसानों का शोषण धीरे छोटे-छोटे राजाओं पर अमानुषिक धाकड़य—ये सब उनके लिए बल थे।

उनकी वाचना यहाँ तक कुत्सित हो चुकी थी कि उनके कुछ देवक भाँवों धीरे छोटे-छोटे बगीचों में जूय-जूयकर इस बात की सूचना राजा रिसालू को देते थे कि समूह ठाकुर के यहाँ अत्यन्त स्वयंती कन्या का अन्त हुआ है, वह राजा रिसालू अपनी तलवार लेकर तुरन्त उससे स्थाई कर बैठे धीरे सब ठाकुर की धाका देते कि वह उस कन्या का कृत की भाँति शोषण करें।

कर्मन ने मछानों से आलोचित रंगमहल में प्रवेश किया। रंगमहल का सीमर्य बहुत ठंडा—कर्मन के धीरे थे।

“सुन्दर !” राजा रिसालू के मुँह से इतना ही निकला।

‘बच्चा घन्नादाता ।’ कंचन ने दालीनता से धिर झुकाकर प्रणाम किया । उसकी धाँसों में मय था । राजा रिसालू की एक धाँस चमक उठी । होंठों पर मुसकराहट खीड़ गई ।

‘कंचन ! हमारा भजन तुम्हें पसन्द है ?’ वह बाहिस्ता से बोले ।

‘हाँ घन्नादाता ! अपने राजा का आसाद किये अच्छा नहीं लगेगा । जब ऐसा भजन मैंने कभी नहीं देखा ।’ वह कुछ समल गई थी ।

‘इसका मतलब है कि हम तुम्हें पसंद हैं ।’

‘जी ।’

राजा रिसालू की वह पुसक उठी । कुसुम्बे के प्यासे को उसकी ओर बढ़ाते हुए बिगोठ स्वर में बोले ‘तब राजा की यह भेंट स्वीकार करो ।’

‘यह क्या है महाराज ?’

‘माहक पेय अफीम का बनाया हुआ मनु पेय’ पीघो में कहता हूँ पीघो जो पीघोमी मिलेगा ।

‘भजन पीजिये !’

‘भजन तो देठा हूँ पर हम एक बात तुम्हारी किसी भी मूरत में स्वीकार नहीं करेंगे ?’ राजा रिसालू ने कुसुम्बे का घूँट कंठ से नीचे छतारा ।

‘क्या ?’

‘तुम्हारी मुक्ति की प्राप्ति ।’ राजा रिसालू की धाँस धमारे की भाँति बहक उठी । कंचन के कमल मुख पर धोखे से स्वेद कणु उभर आये । वह भय से काँपने लगी ।

‘क्यों ?’ कंचन बीस उठी ‘मैं आपके मित्र जनपति की पुत्री हूँ आपकी प्रजा हूँ ।’

‘‘मैंने का आभाप राजा रिसालू को पसन्द नहीं । हम बहुत कम से बहुत अधिक कहने के साथी हैं । विविरोध हमारे मन की तुष्टि नहीं करोगी तो ‘तो’ ’ राजा रिसालू की धाँस बीवार पर लगी

लवार पर जम गई। कंचन का खून मय से बमने लगा। उसने कुछ होने के लिये अपना मुँह जोला पर वाणी प्रबुद्ध हो गई। धनुषों से सफा मुँह जीव गया। पर उसकी भयभीत धारों कह रही थी दो तित ! तेरा पाप तेरा दाय करेगा। तेरा वह जीवन और विषय-सुख बन बादलों में बमकेशाभी शमिनी की तरह बचन और शक्ति। हृत्त का हीरा रेत के महान की नाई है। ये तेरे अन्धकार तु माफ़ कर दे।

पर राजा रियाजु ने भी किया जो सब कर ले पाए थे।

कंचन पर बलात्कार रंजमहल ने हाहाकार, परती के कुंवारेपन। खानास। बेहता का उठता हुआ सुखान धान्नी और पागलपन। रंजमहल के बीचों-बीच बुरे बुरों पर किसी कोमल पक्षी का बिल्ला स्पष्ट। छत्तीस अमलहरा मिट्टी मिट्टी की पोटें हैं। कंचन का मा समर्पण।

और प्रकृति कुछ काल तक काँपती रही।

तब राजा रियाजु ने काँपते स्वर में पुकारा "बतुरसिंह।"

"जो हुक्म।"

"कत नन्दिर के आगे अघराही को हाविर रिजा बाब।"

"कौन अघराही, कैसा अघराही?" बतुरसिंह विस्मित हो गया।

"कंचन ने धाममहत्वा कर ली है।"

"ओह!" बतुरसिंह सारा मानता प्रयत्न गया। वह संमत्ता हुआ बोला "अघराही आपके अत्य और त्याग के दरबार में हाविर हो जावेगा।"

"तेरा पुरस्कार। राजा रियाजु ने अपनी हाथ की स्वर्ण-मुद्रा बतुरसिंह को दे दी। बतुरसिंह के हाँथों पर मुक्तकान नाच उठी जैसे वह समझ रहा था कि वह राजा का सबसे धिन पात्र ही नहीं महापात्र है।

पर वह मनुष्य धार्तिक शक्तता और धन के बल में चढ़कर यंत्र हो गया। सहज मानवीय अनुमतिहीन यंत्र, निर्जीव यंत्र।

तीन

मया प्रभात ।

प्राची में स्फुल्लित घामा । अप्रतिम लीला का फटना । बिखरती हुई उसकी स्फुल्लित लहरें । सृष्टि का धुङ्कार ।

मन्दिर में पतितपावन प्रभु को अगाने की मधुर बंटा-ध्वनि से समस्त नगर में मयी बेतना जागृत हो रही थी । छारे नगरवासी मन्दिर की ओर झोड़ बने या रहे थे । नगर का नियम था कि जब अर्धरात्रि अर्ध-अरामणो प्रभा-वाक्य महाराज मन्दिर से देव-भूजन करके निधन हो हुर सामरिक अपने अन्तर्वाता के अन्त नरके हृतार्थ हो ।

देवते-देवते मन्दिर के सम्मुख बड़ी भीड़ जमा हो गई । एक हस्का हस्का शौसाहत उभरकर आकाश पर छा गया ।

बंटा-ध्वनि क्रमशः बढ़ती जा रही थी । नागरिकों के अस्तक अन्त-भाव से विह्वल होकर झुक गये थे ।

मपाड़ा बजा ।

सबका ध्यान उस ओर बसा गया ।

मगाड़ेवाले ने ठण्ठ स्वर में कहा "घाँठ घाँठ घाँठ । प्रजापतों ।
घाज मन्दिर-स्थापना दिवस की प्रथम वर्षगांठ है । घाज हमारे लिए
महापुष्प पर्व है । तौहार का दिन है । घाज हीन-हीन रखव महापञ्च
सद्वैद्य की भाँति साधारण पूजा नहीं करेंगे बल्कि घाज वह महापूजा करके
घाजके सम्मुख उद्भाषण करेंगे । कुछ श्रीमन्तों सामन्तों एवं उमरावों ने
उनसे निवेदन किया कि वह इस महापर्व पर नृत्य और संवीत का भी
आयोजन करें लेकिन महापञ्च ने घाजने बुद्धि-कीचल का परिचय देते
हुए विनीत स्वर में उनसे कहा है कि धार्मिक उत्सव पर नृत्य-संवीत प्रजा
की मनोवृत्ति को सात्विक विचारवाण से हटाकर वासना की ओर
उन्मुख करते हैं घाज हुए पुनीत पर्व पर नगर की सड़कें और
मंडली द्वारा जयजय मञ्चन कराया जायेगा । प्रजा ने त तिसी बचा-बचाकर तुमुल नाच किया और घाज प्रजा
बत्सल महापञ्च की आज्ञाकारी कर उनके प्रति घाजनी हार्दिक कृतज्ञ
श्रद्धा की ।

बंसी ध्वनि का मधुर स्वर प्रजा के कर्ण-कुहों में मन्त्र का र
उड़ने लगा था । नागरिक भाव-विह्वल होकर झूमने लगे थे । तनी पुन
नमाका बजा । लोभो ने देखा कि साधारण वस्त्र पहने हुए महाराजा
धिराज श्री रिसालू मन्दिर के बाहर पधार रहे हैं ।

तुमुल जयध्वनि चारों ओर नूँव उठी—

"बम्मा धम्मवाता ।

बली-धली बम्मा ॥

राजा रिसालू की जय ॥"

राजा रिसालू ने हाथ ऊँचा करके घाजनी प्रजा को घाँठ किया ।
उन्होंने नमस्कार किया और फिर गम्भीर स्वर में बोले "मेरी पुन स प्रिय
प्रजा । घाज कुलदेवी के मन्दिर की स्थापना का प्रथम पुनीत पर्व है ।
कुलदेवी की प्रसीम कृपा से हमारा नगर सुखी और समृद्ध है । यही

हृष और पी की गरिया बहती हैं ।

“हम इस समय इतना ही कहेंगे कि इस संसार में यदि प्राणी अपना उद्धार चाहता है तो उसे ईश्वर की उपासना में लगे जाना चाहिये । अपनी समस्त इन्द्रियों को इसी की लय में मग्न कर देना चाहिये । हमने अनुभव किया है कि जैसे-जैसे व्यक्ति ईश्वर की उपासना में डूबता जाता है, जैसे-जैसे उसकी प्रभु-दर्शन की भावना तीव्र होती जाती है । यह भावना प्राणी के हृदय में ज्ञान का वह प्रखर पुंज धामोक्षित करती है जो उसे प्रभु के अत्यधिक सामीप्य की अनुमति प्रदान करती है । तब मनुष्य के हृदय का सम्पूर्ण राग-द्वेष, स्नेह, मोह, ईर्ष्या, अहं, और अहम् इस मांति मिटता जाता है, जिस तरह सूरज के प्रकाश से घोर अन्धकार ।

हम निश्चय सेवे के पुत्रों के समीप में यही प्रार्थना करते हैं कि हे मातेश्वरी । हम पर ऐसी कृपा करो कि हमारी वाणी केवल तुम्हारे ही ध्यानमान रहे । हमारे हाथ केवल तुम्हारे ही चरण स्पर्श करें । हमारा मस्तक तुम्हारे ही सम्मुख झुके । हमारे नेत्र सर्वत्र तुम्हारे ही दर्शन करें । हमारे चित्त द्वारा सदा तुम्हारा ही चिन्तन हो । और हमारे हृदय में तुम्हारी ही वाचन मूर्ति का वास हो ।”

इतना कह राजा रिमानु रात हो गये और कुछ देर तक मौन मग्न-मुग्ध मुद्रा में लगे रहे जैसे वह देवी के ध्यान में लो जाना चाहते हैं—(मैं माता के चरणों में झोटेकर कहता हूँ कि यह तब यह मन और यह राज्य सभी तुम्हारे हैं । इन्हें मैं तुम्हें सौंप चुका हूँ । मेरा न राज्य है और न प्रजा सभी तुम्हारे हैं । सबमें तू ही तू है । मैं तो केवल तुम्हारी आज्ञा पर चलनेवाला आकर हूँ । तुम्हारी करुणा की एक बुंद भी हम कुछ भीषी पर गिर जाय तो हमारा कल्याण हो जाय ।”)

लोगों ने देखा कि राजा के नेत्रों में धनु उमड़ता धावे हैं । प्रजा भद्र से राजा के सम्मुख झुक गई ।

उसी राजा का स्वाभाविक कठोर स्वर सुनाई पड़ा “पर प्रजा के यह नहीं बूलना चाहिये कि हम राजा हैं । हमारे अपने

हमारा अपना अपना धर्म है। वह धर्म है कि प्रजा की राज्य की समृद्धि के लिये राजनीति का सहारा लेना। अर्थात् घोर धर्म को मिटाना प्रजा में जैसे असन्तोष घोर मित्रोह का दमन करना। यदि कोई राजा ऐसा नहीं करता है उसे राजा नहीं कहा जा सकता। उसे सिंहासन पर बैठी के लिये आशा नहीं की जा सकती। ऐसे अप्रसक्त राजा को अपना अन्तःसहर्ष किसी घोर को सौंप देना चाहिए। राजा का स्वर पुनः विनीत हो उठा 'मेरी अनेक शक्ति। जब हम ईश्वर के चरखों में चोटकर सद्बुद्धि का दान माँगते हैं तो प्रभु कहता है कि तुम राजा हो तुम तो स्वयं मेरा एक अंग हो समर्थ हो देने की क्षमता रखते हो फिर माँगा किंसा? जब हम अपने पाप को ईश्वर का अक्ष समझते हैं तो हमारे हृदय में एक पवित्र अमर ज्योति का दर्शन होता है, घोर उस ज्योति के महाप्रकाश में हमें पाप घोर पुण्य के अंध का दान होता है। कर्त्तव्य घोर प्रेम का भान होता है।

'तब हम अघराभी की भाँति लज्ज होकर उस महाशक्ति के सम्मुख प्रार्थना करते हैं—हे प्रभो! जब तुमने मुझे अपना अक्ष देकर रखा है घोर प्रजा के पालन हेतु मुझे बननामा है तो कृपा करके इस मन में तुम्हारी उत्पन्न की हुई किसी भी वस्तु के प्रति मेरा मोह आवृत्त न हो। मुझे केवल राजा के कर्त्तव्य की घोर समझ रखना। प्रभो! तू कृपा-निधान है दयालु है सर्वज्ञ है।'

राजा रिसानू ने गैर मुँदकर हाथ जोड़े। सारी प्रजा ने अपने राजा का अनुकरण किया।

तभी उस नहरी शुम्भता की भेदता हुआ छेठ बनपति का चढ़ता घोर नीकता स्वर सुनाई पड़ा 'बुद्धि है धनदाता बुद्धि है।'

जैसे खाँत सागर में लिये या जाता है वैसे ही बनपति के धार्तनाथ ने वहाँ की घाँति में हलचल पैदा कर दी। प्रजा ने देखा छेठ बनपति अपनी घुमा बेटी का एक अपने दोनों हाथों में लिये मन्दिर की घोर बढ़ाई है। बेटी का मुख रक्तचिह्नित है। दोनों हाथ घोर पवित्र लटके हुए

हैं। मैं के मुखा सपुष बाँधों ने उसके कोमल होंठों को काटकर बिकृत कर दिया है।

प्रजा में भय संचरतु हो उठ। 'यह क्या हुआ' इतना बाधम प्रजा के होंठों और आँखों में आया और समस्त जन-समूह पर छा गया।

देखते-देखते जनपति राजा के सम्मुख जा पहुँचा। बेटी के बिकृत सब को मन्दिर की सीढ़ियों पर रखते हुए कण्ठ स्वर में बोला "मन्त्रदाता! जनपति का गला रोमन से धबकड़ हो गया और वह निहाम होकर अपनी बेटी के खूब पर पड़ गया।

राजा रिसानू कुछ देर तक पीन खड़े रहे। प्रजा पर दुष्टिगत करके उन्होंने धावेध के साथ कहा "वह धत्याचार किसने किया?"

जनपति ने रोते रोते कहा "कंचन का सब प्रासाद के बाहर पाया गया है।"

"क्या कहा प्रासाद के बाहर!" राजा ने देखा कि प्रजा में जोर की कानाफूसी होने लगी है।

राजा रिसानू ने दहाड़कर कहा 'हमारे राज्य में ऐसा नृशंस कार्य करनेवाला कौन पैदा हो गया! यह धनानवीय कुरूप धमानृषिक धत्याचार, धधर्म! महामंत्री दीवानजी सेनापतिजी। धपराजी का उत्कास पता लगाया जाय?"

तीनों उत्काल धधकड़ होकर रवाना हो गये।

राजा रिसानू जनपति के समीप धाये। उन्हें उठाकर अपने बरा से लगाया। सात्वना देते हुए बोले "ईस्वर ने कहा है कि जो हो गया है उस पर पश्चात्ताप करना धर्म है। मृतक पर धाँसू बहाने और दुःख प्रकट करने से उसकी धात्मा को महा कष्ट होता है। इसलिये मगवान् को स्मरण करके उसकी धात्मा को धाति पहुँचाओ।"

राजा रिसानू कंचन के सब को अपने दोनों हाथों में उठाकर मन्दिर के समक्ष धाये। देवी से प्रार्थना की और प्रजा की धोर उन्मुख होकर दुःखमरी ऊँचे स्वर में बोले "प्रजाजनो! धाप सब बिकृत

को देख रहे हैं। यह घालाचार किसी यानत्र का ही तो है? उस मानव का है जिसने जकर सौम्य पर घासगठ होकर इस कत्ती को मोचा है। भगवान् ने भी कहा है कि विषय-सुख में धन्य मनुष्य के ज्ञान-वस्तु विषय की कल्पनामान से बन्ध हो जाते हैं और वह यज्ञ में तपे सैनिक का सङ्घ बन जाता है, जिसका कार्य सिर्फ यही होता है—नाश विनाश, सर्वनाश एक पतित पुंस्य ने इस पावन प्रतिमा का नाश कर डाला। एक अपवित्र हाथ से कोमल फूल मचल डाला मोड़। कितने दुःख की बात है।” कुछ देर बाद राजा रिझाऊ अपने स्वर पर शबाब डालते हुए बोले “प्रब राजा का कर्तव्य क्या कहता है? उसका न्याय और बर्न क्या माँगता है? अपराधी इसका हत्पारा? और हत्पारा कहाँ मिलेगा? इस मगर में? कौन होना? प्रजा का एक व्यक्ति ही। सब राजा न्याय की रक्षा हेतु निर्दोषों को सतायेगा डरायेगा पीटगा? निर्दोषी राजा की बुरी कामना करेंगे उसके नाश की प्रार्थना करेंगे। पर राजा जब तक अपने अपराधी का पता न लगा लेगा जब तक साँठ नहीं बैठे रहेगा।”

प्रजा निर्दोष! जन-समूह निस्पन्द, लकने के आख्यान जैसे जनकों वाली स्पन्दनहीन हो गई हो।

“हम ईश्वर के भ्रष्ट हैं। उसकी आज्ञा पर अपराधी को कहते हैं कि वह हमारे सम्मुख आ जाय।”

प्रजा में अणिक हलचल यही जो राजा की आवाज के साथ गुन बड़ हो गई।

“अपराधी स्वेच्छा से उपस्थित नहीं होया पर हम सेठ बनपति को विश्वास दिलाते हैं कि अपराधी का पता लगते ही, उसका एक सज्ज सुने बिना ही उसे मृत्यु-संज्ञ दे दिया जायेगा।”

सभी चतुराँसह ने औंधी आवाज में कहा “धनदाता ने बम्मा! अपराधी हाजिर है।”

प्रजा में हलचल विस्मय धीर भय।

(राजा रिसामू ने धागा ही "इस नारकीय जीव को जसती घाम में झोंक दो। पहले यह बासना की घाम में कुना या धीर सब इसे अपने पाप की घाम में जलने दो।")

धरती ने भीजकर कहा "मे निरपराध हूँ।"

मे जाग्रो इसे बासना के बनीमूत धरती करनेवाला प्राणी उस सम्पाद से मुक्त होने पर यही चीखता है कि यह निरपराध है। उसे यह पाप स्वप्न में किया हुआ जान पड़ता है। लेकिन यह महा धरती हीरा है। पामर! इस कोयल कंबल को देखा है। फूल को निर्दोषता से मतलब की धागा तो हमार देखता धीर हमार कुल की माँ भी नहीं देती। मे जाग्रो इसे।"

धरती को रोते-बीछते मे जाया गया।

प्रजा ने धीमे स्वर में राजा रिसामू की बय-बयकार की।

•

•

•

राजा रिसामू का रथ प्रासाद की धीर बना। रास्ते में जो भी मिला उसने उनकी बय-बयकार की। पर उनका मन प्राज्ञ रहित था।

रथ प्रासाद के धीरमहल की धीर जा रहा था जो रास्ता कहलाता था जिसका निर्माण बतुर कारीगरों द्वारा सम्पन्न हुआ था धीर जिसकी दीवारों में केवल धीरे ही धीरे पड़े थे। ये धीरे बहुत ही छोटे-छोटे थे धीर यही बजह थी कि धीरमहल में एक धीर जसते ही सहस्र धीर धामोक्ति हुए धीर पड़ते थे धीर महल प्रखर प्रकाश से जलमया उठता था।

इस महल में राजा रिसामू की नई रानी रहती थी। नई रानी है मतलब था कि यह रानी भी अपने बाप की यह साइली बेटा थी जिसको उसके बाप ने राजा रिसामू की धागा से धून की तरह पालकर ठीक समय उनके हवासे कर दिया था जेने कोई देवी धाप हो।

‘घात’

बचपन की मकुर किनकारियाँ जीवन की धमक मककान में बरन गईं । मिट्टी की म्यना उसके बर्र का पाव पब हो कामुक्त हुरयों के प्रेम-वर्षण से भर चुका था । शेरों की बासों मूमने लगी थी और पैर पीने लहलहा छडे थे । घमिछ सीबर्ष का भरना पाव के कप-कप में प्रवाहित हो छठ था । एक अपरिमित आनंद एक अपराजेय उत्साह, एक प्यार-मरु बोध पापों और कूट पड़ा था मानो बंप्पा बरछी के गई मींगड़ाई के ली हो । बच् बनकर छत्र-सँवरकर आ गई हो ।

रामू-धीर बनछा धीर उनका अनीकिक प्रेम ।

जीवन धीर जीवन की उत्तान तरंगें ।

प्रवात ।

मारक समीर धीर उसकी मीठी-मीठी हिलोरें । हुरा-शुरा शेर उठकी मूटपुट धीर मूटपुट में रामू धीर बनछा ।

“छबू !” बनछा का स्वर अधीर था ।

उस क्षण में प्रेम है, पवित्र प्रेम ! इसलिये इस मानव-मंदिर में विवाह ठीके किसीकी मूर्ति का बाध हो सकता है ?”

रामू के मन की जगहों के खजनों से बाढ़स धमसम बीजा पर बसने लगे हुए बड़ा “पर मझे सदा डर लगता है। जगहों बुरी-बुरी बंकायों मेरे मन में डलती रहती हैं। ऐसा मासूम होता है कि कोई मुझसे मेरी प्यारी जगहों को छीनकर ले जा रहा है।

जगहों के बेहरे घर फटोरता था कई पीर स्वर में बुझा “तु करता है तो डर कर, मैं नहीं डरती। मैंने जिसे धाना सर्वस्व स्वीकार कर लिया है उसके प्रतिरिक्त धन्य किसी की कल्पना ही नहीं कर सकती। बीजन पीर हृदय वस्तुएँ तो नहीं हैं कि भिनका व्यापार बार-बार किया जा सके। खरीदी पीर बेची जा सके रामू ! हृदय जब प्रेम के इकास से आनोहित हो जाता है पीर बीजन प्रेम की पल्ल-पल्ल सहरों पर बहने लगता है तब उसका दुस्सांजन कोई नहीं कर सकता। वह सर्वोपरि बन जाता है। वह जिसके प्यास में मग्न होता है उसे ही प्राप्त करता है। बाबायों पीर कष्ट तो पाते हैं विरोध पीर प्रतिरोध भी होता है पर इसका मतलब यह नहीं कि हम अपने पवित्र पथ से विमुख हो जायें” उसने एक समी आह छोड़ी “रामू ! इस ठग का तू प्रमत्त है, प्राण के बिना यह तन मिट्टी के बराबर है, निर्जीव मांस-पिंड है बुझी हुई चमक है बीसी मुझसे बिछुड़ोये तो नहीं ?”

रामू भाव-विह्वल हो उठा। स्वर में प्यार का सागर उठे-ठे हुए बीजे स्वर में बोला “जगहों ! तुमसे धन्य होने की मैं कल्पना ही नहीं कर सकता। मुझे तो ऐसा लगता है जैसे तेरा अस्तित्व ही मेरा अस्तित्व है। लेकिन मैं अपने लिये तुम्हें चुन्नी नहीं देख सकता कष्ट उठाते नहीं देख सकता। मेरी सदा कायना रहती है कि तू बरत की भाँति झूमती रहे, दलताती कमी की तरह अपना खीरममम खोखर बरताती रहे स्वच्छन्द पंछी की भाँति बहकती रहे। पर कोई मेरे लिये तुम्हें चरित्रहीन कहे, लांछन लगाये, कर्मकमी कहे, यह मैं नहीं सह सकता, प्रेम प्राणी

को पुत्रनीय बनाता है, सृष्टि की दृष्टि में सम्मान दिया जाता है, यदि हमारा प्रेम हमें पतनोन्मुखी बनाये तो हमें अपने घटन निरन्तर से हट जाना होगा ।”

जनणा घरती की पीर संकेत करती हुई बोली “क्याही घरती कभी न कभी किसी की बच्चे बनेगी ही किसी न किसी को वह अपना समर्पण करेगी ही । घरती बच्चे पीर समपण ! यही तो विश्व का सार्वजनिक है राम ! विरक्तन नियम है, वपन की नीति है मैं तेरी हूँ पीर तू मरा है इसी छोटे से वाक्य में ही तो ममर का महान व्यपनत्व है ।”

राम के नेत्र मूँद गये ।

विमुग्ध विमोहित पीर सम्मग होता हुआ वह बेर-मन की भाँति जनणा के वाक्य को उच्चारित कर बैठा “मैं तेरी हूँ पीर तू मरा है इसी छोटे से वाक्य में ही तो ससार का बहाना व्यपनत्व है ।”

कच हाँक बार राम ने नेत्र खोले ।

प्रकाश ।

“जनणा ?”

दर-उमर झाँक पर जनणा का कोई पता नहीं था । पुनः की भाँति द्रिष्ट कर राम हँस पड़ा “जनणा ! तू बड़ी विचित्र है नयनानुचित तरह मात्र से भाँति-मिचिती लगता है । मुझे उस तरह तू जनणा ! ओ जनणा !”

स्वर ध्वनि प्रतिध्वनित ।

महनाई का मधुर संगीत ! उस घर घोले की दूरदरिदर धून ।
धीरे-धीरे उमरगो हुई सय—सादक पीर दरीली सय । राम ने देखा—
बच्चे ! पाँव का घनाय होनी । मस्त । बहिर । उसे उठावना पीर
जनणा के लिये बेबेन देन पगनी पहनाई में बिछ की धून छेद देखा है ।

बातावरण में बर्ब तैर जठा है । प्रकृति दुःखमय हो गई है । व्याधा ठहर
धीर बिरह का साम्राज्य एकाधिपत्य ।

सहनाई बूज रही है—

—धोबी धोरी रा मस्करिया

धोतुड़ी सपाय कठि बास्माजी होला

—हो बोरी रे धोभू धरे डोला मूँ करों

हो मूँरी करे नहीं कोय जी रे होला

—हो झल धोलू रे होला कारण

हो मुर मुर हें पीजर होय जी रे होला

—हो जमजम जमके होला बीजली

हो रिमझिम बरसे मेव जी हो होला

सहनाई का स्वर क्लमछ बेदनामय होला हुआ समीप आता गया ।

स्वर जितना बेदनामय था रामू की धाकृति उठनी ही प्रसन्न थी । वो
बिपरीत भाव थे—अन्तर धीर बाह्य के बिरह धीर मिलन के दुःख

रामू रामू के चारों ओर नाच-नाचकर धोतुड़ी गा रहा था । रामू
ने हँसते हुए कृत्रिम डाँठ के साथ कहा "धो सहनाई के बाप राम
घनापना बन्द करेया या हमें कष्ट उठाना पड़ेया ।"

रामू धीर लग्यव तथा रसमय हो गया ।

नाचार रामू को बसे पकड़ना पड़ा ।

सहनाई रुक गई । व्याधा से निरोद्धित बातावरण दार्ष्टिक स्तम्भता
से घमाबहू हो उठा । रामू रामू को विविध दृष्टि से घूर रहा था ।

ऐसे क्यों बैक रहा है मुझे ?"

बैक रहा है, तू नहीं रामू है न ?"

"तो क्या मैं बदल गया हूँ ?"

"सूरत तो बही है लेकिन गन जकर बदल गया है ।"

"क्या मतलब ?"

तेरा बूढ़ा बाप यही घीर रोटी लिये तकके बैठ-बैठा तेरी घड़ीक^१ कर रहा है घीर तू जमणा के साने^२ भ्रमंड भूट रहा है 'रामू भैया ! पाँचवासे बिसेपकर राजपूत तुमसे माराज है । तू जमकी बेटी पर'

"माराज है तो होने है मैं किसी से नहीं डरता । साम लगी फिर डर कैसा !" रामू ने जमणा की बात बोहराई ।

रामू जब घर पहुँचा सब जोखी घर की बैठक में बैठ-बैठा ऊँच रहा था । उसकी माँ रसोई में खाना पका रही थी । रसोई से कभी के साम की सुगन्ध आ रही थी ।

"माँ ! ओ माँ !!" रामू ने बाहर से पुकारा ।

जोखी रुक पड़ा । फटे हुए डोस की तरह अप्रिय स्वर में ताड़ना देता हुआ बोला "ओ जोखी के बाप ! जोड़ा हथर पधारो तो !"

रामू के पाँच जमीन से बिपक गए । भय के मारे निःशब्द पाँच उठता हुआ वह जोखी के सम्मुख गया । अपने अपराध से स्वयं अपरिचित अपराधी की भाँति मीची बर्षन करके वह मोन रहा ।

"कहाँ मरा था ?"

"मरत ।"

"किसके मरत ?"

"ठाकुर सा के ।"

"क्यों ? क्या वहाँ कोई गढ़ा बन पड़ा हुआ है कि इधर पो फटी घीर उधर उमरावजाद पहुँचे ।" उसका स्वर तीव्र हो गया "बता वहाँ क्यों मरा था ?"

बोलता क्यों नहीं क्या तेरी बीज को ककदा मार क्या है, हराज

जादे ।" जोखी घण्टी तरह जागता था कि रामू खेत क्यों जाता है, पर वह आज रामू के मुख से सुनना चाहता था कि वह वहाँ क्यों जाता है । जमीन पर हाथ पटकते हुए वह पुनः बहाड़ा ने कहता है कि तू बहरा हो गया है ।

बड़ी कठिनाता से रामू ने कहा "बनगा से मिलने

"बनगा से मिलने जोखी की घाँसों से घबारे बरस रहे थे "बनगा क्या तेरी संवेष्टर है या तेरी बरवाली ? लोक-लज्जा को खाम कर तुने यह क्या बात बना रखा है ? कभी नाँव की राजपूती टोमी तेरी बोटी-बोटी काट जानेगी ।

रामू कुछ बोला नहीं । ब्याबा उसके मानस में घुमड़ रही थी । भय उसकी घाँसों में छलछला रहे थे । जोखी का हृदय भी इमिड हो चला । कुछ देर पूर्व उसके अन्तर में प्रथा और क्रोध का जो तुफान था न जाने कस्ता की किस भावना से मीगकर वह मुप्त हो गया । रामू के चम्लिक आकर अपने कोते हाथों से उसके मुँह का पकड़कर स्नेह पूर्ण स्वर में बोला 'बेटा !' बमबान् की कृपा से उस मुँह इस बुद्धे ने बड़ी देर से देखा है । कुछ कुछ हो गया तो इस बुद्धे का सहाय ही टूट जायेगा बुझाये की लकड़ी ही टूट जायेगी बम्प ही खराब हो जायेगा ।"

"बाबा ! रामू का हृदय ममता के कारण फट गया ।

"हाँ बेटा नाँव की राजपूत टोमी में भी कुछ ऐसे मनुष्य हैं जो बनगा को अपने हृदय की रानी बनाना चाहते हैं । वे अपना पल्ला कमजोर देखकर तुझ पर दूर्तेने और कभी बात रखकर तुझे मारने का मतलब करेंगे । जोखी का स्वर धरमल करण हो चला "बेटा ! तू ने अपनी बुद्धी माँ की देखा है जो केवल तुझे देख-देखकर अपने जीवन के खेप दिल बिता रही है ।"

माँ भी घा गई ।

रामू को रोता देखकर अपने पति को ही डाँटने लगी "घाप तो

मेरे रामू के पीछे ही लग गये। वो यही जमणा से हँस-बोस क्या मिया जैसे कोई मोर घपराध कर दिया ? “अरा सोनिये तो बचपन की पोस्ती है, कच्ची डोर नहीं टूटेगी तो पीरे पीरे टूटेगी रामू के बापू हृदय के बन्धन हैं हृदय के। मनुष्य के चाहने से न टूटते हैं और न बँधते हैं। वह रामू का हाथ पकड़कर बोली “कस पहुँच रोटी खा ले।”

रामू अपनी माँ के साथे रसोई में घा गया। माँ उसे मोहन परोसती हुई बोली “तरे बाबा की बात सीसह थाने ठीक है रामू। जमणा के संघ सब खेलना और दूबना अच्छा नहीं। सारे पाँच में तुम बानों की बानी है।”

रामू भागतिरेक होकर बोला “माँ ! तुम सभी मे हमको पहले मिसने ही क्यों दिया ? बचपन में मना कर देते तो बाबू रामू का कौर कंठ में घटक गया। वह बिना जाये ही उठ गया।

‘अरे, तू जाना क्यों नहीं जाता ?’

‘मूख नहीं है।’

फिर बा अरा बापू को अपने काम में सहारा है।”

रामू उसी कमरे की घोर छिन्न मन बला गया जिस कमरे से ठण्डक की आवाज आ रही थी।

पाँच

खेत के मध्य एक मंचान बना दी गई थी। उस मंचान पर एक बाँसुरी पड़ी थी। धकेली और निर्जन।

कीन बसका स्वामी है और कीन उसको अपने होंठों से लगाकर बीकन में नमी प्रेरणा का संचार करता है, कोई नहीं जानता? वह धकेली पड़ी थी जैसे अनजान दीहृण की बाँसुरी समुद्र के तीर।

उपलब्ध हुआ है जो कि बास की सरसरहट मिट्टी की लीची-लीची सुपन्न।

और दृश्यता एकदम निर्जनता।

तभी किसी के हस्के पदचप सुमाई पड़े।

पवन स्तब्ध हो गया और खेतों की अजान बार्से एकदम गतिहीन हो गई जैसे कोई अपरिचित या रहा है। कर्बित बरा उसके कोमल नरमों के स्पर्श से तिरोहित हो उठी। तभी तो उसकी पदधनि को अपने अन्त में लुप्त कर रही थी ताकि उस पावन धनि को कोई छुटा न

सुन है। घपरिचित घाताघ घोर मुहुल कवम मचान की घोर बढ़ रहे थे। बीरे घीरे घाकृति स्पष्ट हुई। घेत की बालों न देखा—मोटा घीवन सहमा-सहमा-मा बला घा रहा है।

युवनी मचान के समीप घाई। उसका रंग मोरा चिट्टा का घोर मुल पर घोल का घावर नहरा रहा घा। घालें हिरनी-खी घी घोर घाईं तीर-क्रमान-खी।

बहु घजात घीवना मचान के समीप घाकर रुक गई। कृष्ण की बांसुरी उसी निर्भयता से पड़ी थी। बहु निनिमय घृष्टि से बांसुरी को देखती रही घोर देखते-देखते बहु फुलक-फुलककर रो पड़ी। रोते रोते उसने उस बांसुरी को उठवा घीर उसे अपने महुल घघरों का पवित्र पुष्पन दे दिया। पुष्पन देकर बहु पुन घपसक उसे देखती रही बीडे बहु बांसुरी में कुछ घपनत्व घीर परिचय घाजना बाहरी है।

निसन्देह बांसुरी कृष्ण की थी। सम्मोहन की घाज्जाली घीर प्रीत की घात्तिक घारा घवाहित करनेवाली घारघत स्वर-मोहिनी।

युवती ने कोमल स्वर में मन-ही-मन कहा “बाघरी राधा का हृदय।” राधा!

कृष्ण की सर्वस्व घर्षणरुधी उसकी शक्तिरु बिरमुक्ति में परम व्याकुल होनेवाली वही राधा प्रेम-दीवानी। उसका प्रेममय घन्तर, वही बांसुरी। कृष्ण की बहाई में राधा की सग्या संतोष घीर घात्तना।

बहु घिचारों के तुल्यन में उड़ती गई। पून की तरह उस कठित कूल से टकरा-टकरा घवाहित हो गई घिने एक दिन घावर के महा घस्तित्व में सम्मिलित होगा है घीर बहु घवाहमान प्रभुन?

बीरे-घीरे घपना मारन घकरन घन में बिसाता हुआ सड़ घायेगा घिट घायेगा।

युवती के नैन पुन भर घाय।

उसने बांसुरी अपने घघरों से सगाई घीर राधा की तरह यह उसमें घ्राण घूँकने सगी। स्वर के घारोहन-घघराहन में कुन्ध-मुन घिसाण

बिसाव घीर प्रणय की सखी अनुमति की एक पुकार की— 'ओ बंधीयाने तू कही है मैं तेरी स्मृति में अनन्त काल से भटक रही हूँ। मुझे दर्शन दे घीर मेरे संताप को हर।

बाँसुरी का मधुर स्वर पूँव रहा था।

तभी धा गया—बम्बू।

सुनता रहा घीर भावना के कोमल पंख पर जड़ता रहा।

स्वर बका।

घायल्लुक एक पेड़ की छोट में छप गया। देखने लगा कि घुबती क्या करती है ?

बबती न बाँसुरी को पूर्ववत् रखा घीर फिर अपने बम्बुओं को ढोछन लगी। बम्बु ढोछकर उसने एक मन्त्री बचाव सी घीर फिर धारबत् होकर मर्याद के नीचे बैठ गई।

घायल्लुक उसके सम्मुख आया।

देखता रहा सोचता रहा 'बहु कीन है ?

घुबती ने उसे देखा। वह सिहरकर रह गई।

तू कीन है ? बम्बू ने पूछा।

घुबती चुप रही।

'मैं पूछता हूँ कि तू कीन है ?

बबती फिर भी चुप।

बम्बू पराजित स्वर में बोला 'बोसती क्यों नहीं चुप क्यों है ?'

बबती को धमक्य चुप्पी। उसके काँपते श्वस-प्रत्यंस।

बम्बू को गुम्गा धा गया। उसने उस बबती को पकड़कर उठाया घीर बार में बोला 'तू गही बोसती तो मैं तुम्हें ठाकुर के पास ले चलूँगा बर्ना मुझे बता दे कि तू कीन है ? कहाँ से आई है ? क्या चाहती है ? इस बीच मैं तेरा कीन है ?'

घुबती इस बार भी नहीं बोली।

पक्ष को क्रोध था गया ।

उसने चीखकर कहा "तू गुंमी है ?" धीर उसने भ्रुकुम्भोर दिया । युवती के घमर काँप रहे थे धीर वह धबधब-सी चम्पू को झेलने लगी । वह जड़ हो गई थी । उसके कंठ में धादिम-धावेय फँस गया था । एक क्षोभ-भरा रोन्न उसके हृदय को कबोट कर भीतर ही भीतर घुटाने लगा । चम्पू हबका-बजका लका रहा । वह समझ नहीं पा रहा था कि उसने ऐसा चीन-या अपराध कर दिया कि जिससे इस युवती को इतना बहुरा कष्ट पहुँचा । वह कक्षणाभरी दृष्टि से उसे देखने लगा ।

बहुन ही माहिस्ता से उसने पुन पुछा "तु चीन है ? बोलती क्यों नहीं ? मुझे सब बता दे मैं तुम्हें कुछ भी नहीं करूँगा ।"

युवती शगुन भर के लिए उठी धीर पन घम से पीठ गई । उसकी छाँवों में अबाध निगु की मौन बदलाव तर उठी । वह एहतर ध्वजा की तरंगें उधड़ ठमाम धरीर स दौटकर उने धबध कर रही थी । उसने अपने मुन के अधुवन विपुल सीनय की अपने हावों में डफ़ लिया ।

चम्पू पराजित होकर अचानक एक शिगारे पका हो गया । वहीं से धरजत मंचत स्वर में बोला "यदि तू नहीं बताना चाहती है तो न बता । मैं अबत यह जानना चाहता था कि तू इस बाँप में क्यों आई ? नहीं तू गुंमी तो नहीं है ?

युवती चाहत मौन की तरह उठी ।

चम्पू सहम गया । नैमना । उगे घाँवना हुई कि नहीं यह युवती पावत तो नहीं है ? जकर पावत है । अभी रोती थी धीर अभी बड़ी की तरह बिकरात हो गई । अक्षत प्रकृति ।

पर युवती का क्रोध बिहृत मुन शगुन भर में ही इतना बरणाजनक हो गया कि चम्पू स्पर्य विमूढ़ हो गया ।

युवती बड़ी नाटकीयता से उसकी धीर बड़ी धीर दड़कर उसने चम्पू का हाथ पकड़ा । चम्पू निहुर उठा । युवती ने अपनी पीठ को बाहर निकाला । चम्पू नीस के नाप पड़ हो गया । उसकी निर्दोष

प्रकृति बेशका से विह्वल हो गई। हृदय में एक झुमक पड़ा। बोलना चाहा पर कंठ अवरुद्ध हो गया। कठिगता से पूछ बैठा "यह कैसे हुआ ? क्या तू जगम से ही ऐसी है ?"

मुबती बमीन पर बैठ गई।

बेठ की मिट्टी सीसी थी। मुबती ने मिट्टी को समतल किया और उस पर भिखा—"मेरी बीम काट दी गई।

घोह ! तेरी बीम काट दी गई।" बम्पू ने कण्ठ स्वर में इस शब्द को दोहराया और उसके निकट बैठता हुआ बीमे से बोला "तू कहीं की रहनेवाली है ?"

उसने परती पर फिर भिखा "बधिरा की।

"कीन हो ?

"अमापिन।"

"अमापिन ! बीमता का सूचक यह शब्द क्या है अन्वयित था। बम्पू ने विवक्षित स्वर में उसकी धानुषों को पकड़ते हुए कहा "तू मूखी है ?"

उसने गर्दन हिलाकर 'हाँ' की स्वीकृति दी।

बम्पू ने मजान के एक ओर बाँसी हुई बाजरी की मोटी-मोटी रोटियाँ खोलकर उसने सामने रख दी। मुबती ने रोगी के एक दुकड़े को तोड़कर अपने मुँह में रखा। रोटी स्वादिष्ट थी। मुबती उसे बड़े प्रेमपूर्वक खाने लगी।

बम्पू सकण्ठ दृष्टि से देख रहा था।

अपेक्ष या निरुपाम व्यक्ति को देखकर प्रत्येक हृदय में सहज मानवीयता और समवेदना जाग जाती है। बम्पू को जया बसन्तारा का अर्ध-अर्ध स्मृति से तिरोहित है। उसका हृद बड़ा किसी न किसी दुःख से पीड़ित है। तब उसे अति मानवता की भावना का अमत्कारिक आभास हुआ।

बहु वहाँ से उठा और मोटड़ी* उसके समीप जाकर बोला "इसमें पानी है जब इच्छा ही तब पी लेना ।

उसने फिर गह्रन हिंसा की । इस बार बम्पू ने उसके नेत्रों में सज्जा की रेखाएँ देखीं । उसने देखा कि बहु अपरिचित गूंगी युवती हीनता अनित्य जज्जा के कारण उससे नेत्र नहीं मिला रही है । उसका चेहरा धारस्त हो उठा ।

कैसी विचित्र बात है ?

कुस्मता प्रभाव को सहज स्वीकार कर लेती है पर क्प प्रभाव का खतास भी पाकर बाबाब हो जाता है ।

युवती की धनुमूति ऐसी ही थी ।

बहु मन-ही-मन जाकर विपाता को बुझा रही थी ऐसा उसके कीर सने से जान पड़ रहा था । क्योंकि उसका कीर बार-बार गूँह की घोर न जाकर कभी नाक और कभी ठोड़ी से आ टकराता था ।

बम्पू उसे देखता रहा । युवती ने खाना समाप्त कर लिया और उसने कर प्रदक्षिण करके संकट से पूछा "यब ?"

बम्पू ने विनीत भाव से कहा "यब तू वहाँ भी जाना चाहती है आ सकती है ।

युवती ने हाथ को बायें-बायें हिसाकर पूछा "कहाँ ?"

"जहाँ तेरी इच्छा हो ।"

उसने उदामी क साथ सईन हिंसा ही मानो बहु बहु रही है कि उसका "स अस्मिन् विषय में कोई नहीं है ।

"तेरा यहाँ कोई नहीं है ?"

उसने मर्दन हिंसाकर उत्तर दिया "नहीं ।"

"फिर ?" बम्पू बोलता-बोलता चुप हो गया । युवती ने व्यग्रता से ऊँचा-नीचा हाथ किया ।

अम्बू ने कहा 'ओह, तू चाहती है कि यह सब मैं ही बता दूँ।'

उसने गर्दन का हथारा किया "हाँ।"

अम्बू ने कहा "मैं कुछ नहीं कह सकता। मैं स्वयं अपना हूँ नीच भाति का हूँ—डोनी। गाने-बजानेवाला तुच्छ प्राणी धीर धीर हूँ। मैं तुम्हें कहीं प्रभाव दे सकता हूँ। मैं तो छुद जायित हूँ। पर धाव रात-भर तू यही एक धीर कम मैं तुम्हें रामू के पास ले आऊँगा। वह बड़ा बयामु है भक्त है।

उसने हाथ का संकेत किया "यह रामू कौन है?"

"सुनार है, बनरा का प्रमी है। बनरा के लिए उसने सभी सुखों को तिलांजली दे दी है। पर तूने अपना नाम नहीं बताया?"

दुबली ने एक बार बाँसुरी को अपने अक्षरों से लगाया और भववान श्रीकृष्ण की मुद्रा में हँस बह—लेव पाँव पर रखी हो गई। फिर झुकी और अम्बू के पाँव पकड़ लिए तब बिभार-सी हाँकर खड़ी हो गई।

अम्बू जस्ताह से बोला "रामा?"

उसने नकारात्मक पर्यन हिमा दी।

"बिमली?"

"

"फिर?"

उसने अपने दोनों हाथों की तमाम अंगुलियाँ दिखाई और फिर हस बड़ दिये।

अम्बू ने मुसकराकर कहा "योपी?"

वह हँस पड़ी।

योपी सभी तुम्हें बाँसुरी बजानी भाती है। कृष्ण-भक्ति के बिना वह बिरहु-रग बिरस्तन स्वर कहाँ? सुनाओ न कोई भजन? तुम्हें बाँसुरी-बादन से अत्यन्त प्रेम है। कभी-कभी मैं भावनी को गाता हूँ

तो बातावरण प्रेममय हो जाता है। हर प्राणी अपने को प्रेममय ही समझने लगता है।

धरती ने बाँसुरी को अपने मुहुल धवरों का चुम्बन दिया और फिर उस पर एक भजन बाने लगी—

“ओ अन्तरिक्षवासी रागम देवता ! हमारे धराधों को खमा करना क्योंकि हम प्राण्य सख एक पाप की सजना करते हैं।

“ओ घट-बट के बासी प्रभु ! हम इनने घमानी हैं कि पाप धीरे पुण्य का भेद भी नहीं जानते। सोचते हैं कि हम पुण्य कर रहे हैं और वह पाप हो रहा है।

“ओ बीजवधु ! हमें तू सबस्य क्षमा करेगा क्योंकि हम क्षमागार हैं। तेरी सृष्टि रचना के बाद-मूरज देव भी निष्कर्मक नहीं हैं।

“ओ कुशल ! यदि तू क्या-निधान नहीं होता तो हम सब तेरे धराधों के सख भर भी बीधित नहीं रहते।

“ओ भवसागर तारखुहार ! हम प्रार्थना करते हैं कि तू हम कारकीय यात्राओं से मुक्ति दिला कर मोक्ष प्रदान करना।”

बाँसुरी का स्वर दका।

बातावरण स्वयं ! विरक्ति का साभ्राश्य।

अम्बू अद्वावान् हो उठा। उसने सपककर बोली क हाथ पकड़ लिया। विह्वल स्वर में बोला “सबभूत तू हमिनी है संगीत है।

धरती के लोचनों में अम्बू की विनयारिमा जनी और यकायक वह जड़पट्ट हा गई। उसके अन्तर की क्या सजसता बनकर पत्तकों के कूलों पर लहर उठी।

अपनी प्रसन्न लुनकर अनुपम प्रमोदाकर्ता के प्रति धन्यबा के दो चक्र बोलता है। उसके अन्त में व्यक्ति को जा संन्या मिलती है उसी संन्या से बोनी धमिभूत हा उठी। उसके तन का तार-तार भुना उठा।

अम्बू ने उमते क्षमा-वाचना की।

संध्या का मधुरता धीरे-धीरे प्रतीचो की धीरे उड़ जाता हा और इनके

प्रतीप प्राची की ओर से घन्बकार का सैलाब बह उठा। देखते-देखते खेतों की बालें प्रवृत्त हो गईं।

घन्बकार, शून्यता और एक अज्ञात भय छाने लगा।

कमी-कमी भूगर्भ की घमिरा आवाज सलाई पड़ जाती थी जिससे गोपी की घाँसों में भय का संचार हो जाता था।

धीरे जम्बू सोच रहा था "यह भूगी बुद्धी यदि सुन्दर नहीं होती तो इस पर कोई कृपा ही नहीं करता। सहानुभूति के दो सम्बन्ध भी इसके प्रति कहने का कोई कष्ट नहीं करता। बेचारी का भीषण बटफ़नेवाले झंगारे की तरह हर जगह भव्नी पीड़ा को जन्म देनेवाला बन जाता। पर यह है कीन ? कहाँ से आई है और क्यों आई है ? पड़ी-लिखी है समझदार है, फिर ? कहीं यह कुपचर तो नहीं है ? भावकर्म हर शासक दूसरे शासक को समाप्त करने में लगा है यह भूगी बुद्धी कदाचित् ज़मानों की आन्तरिक स्थिति से प्रभावित होने के लिये आई हो। मुझे इसे ठाकुर सा के हवाले कर देना चाहिए।" जम्बू काफी देर तक अपने मस्तिष्क को स्वस्थ नहीं कर पाया। मच्छी के बालों की भाँति एक पर एक विचार बकता गया।

आशिर बह वहीं से आया। गोपी ने उसका हाथ पकड़ा। जम्बू ने स्नेहसिक्त स्वर में कहा "मेरे कुछ जानै-पीने के लिये से भाई ?" जम्बू के घर का रहा है उसकी माँ भोजन लिये मुझे घड़ीक रही होगी। वह माँ हम सबकी माँ है बसुबा की तरह चाँद और साबर की भाँति घंभीर। कोई व्यक्ति कितना ही मातृ प्रेम से बंचित क्यों न हो कितना क्रूर व्याधिग्रस्त दुर्गन्धमुक्त क्यों न हो उसकी भयता से बंचित नहीं हो सकता। वह परावृत्त ही सरस और विद्याम है। तू जलैगी ?"

गोपी ने जम्बू का हाथ अपने हाथ में लिया और उसकी हृदयी नर धंगुली से लिखा "कस।"

"बहुत अच्छा।"

जम्बू जमा गया।

घर में रामू का पता नहीं था। माँ भोजन लिए हुए बेटी की पीर बूझने की बुझती घ्राप में कभी-कभी सजड़ी हासकर उसे पुन व्यक्तित्व कर देती थी।

चम्पू के कबजों की धाड़ट सुनते ही उसके पान कड़े हो गये। उसने भीतर से ही कहा 'अब पधार रहे है जयरामबाबू ! गाये अब सौट रही थी अब घ्राप गए थे। न सामे की किता पीर न पहनने की ; अब बेसी अब मायब ! धरे ! तू तो चम्पू है। बेटा चम्पू जरा रामू को हँकड़ ला। भाऊ मीने बाबरी का पिचका' बसाया है। ठंडा हो रहा है पीर तू जानता है कि ठंडा होने पर उठका स्वाद हो बिपड़ बायगा।"

चम्पू ने हँ किया पीर जिस पाँच घाघा का उठी पाँच बापठ सीड बया।

पाँच का बरी मुनहा दुपों।

पाचकार, निबिड़ धन्वकार पीर उन धग्यकार में वा प्राणियों की बसों। *ता न न न न न न न न*

(रामू स्नेह-विषमिष्ठ स्वर में बोला 'राजपूत पीर सुनार का मिताव घसंभव है। हम आठि-मद की घट्टा गृहस्थाध्या की बंदिन नहीं कर सकत पर उग महामिसन की पुनीत परम्परा को यह बिद्व-व्याप्तो शक्तिर्या भी नहीं मिया सकती। यह बाबन किमी रस्सी पीर किमी सौह-गृहवास से नहीं बंया है यह बया है—प्रीत की घनूम छोटी से। भारमा का भारमा से सम्बन्ध। हृय का हृय से बन्धन।")

"पर दुर्जन कहता था कि उग सुनार के बन्धे की मैं कबवा ही बया जाऊंगा" अनन्ना ने ययातुर हारर कहा।

"यह नाशन है अनन्ना ! प्राणी प्राणी को नहीं ला सकता। प्राचीन वषों में रामायण पीर महाभारत में जो रावणों का दण्ड है, वह उन क्रूर व्यक्तियों का प्रतीक है जिन्होंने मानवता की किसी न किसी का

में स्वीकार नहीं किया। जो सराजफशा की धपना बर्षे धीर धापाचार को धपना राज-बैठ मापति थे। गर गर का मखन करें यह बड़ीकारमक बात है।”

“ता भी मख उससे डर लगता है।”

“डर धीर तुम। बनणा ! तू निर्भय है। तुम्हें डर किस बात का ? मैं भी तेरे धाँपन की धोन् पाकर इतना निर्भय हो जाता हूँ जैसे मैं मृत्युञ्जयी हूँ। फिर तुम्हें कौन मार सकता है ?”

“अच्छा अब मैं बली ?

नहीं।

क्या ?”

मग नहीं बरा।

तुमेशा देखते हो धीर मग नहीं बरा ऐसा क्यों ?

“साधना भभूरी है न।

“कब पूरी होगी ?”

“कब ठीकी इच्छा जायी ?

बनणा कुप।

निस्तब्धता ॥

रामू का लम्बा निस्वाध ॥॥

बम्बू के बाँवों की बाहट।

“कीन है ?” रामू ने पूछा।

“मैं हूँ बम्बू।

“तुम्हें मुक्त कर दो !” बनणा ने व्याकुल स्वर में कहा।

“मुक्त कर दूँगा तो धीर बचनमय ही बाधीवी।” रामू ने बनणा के हाथ को मजबूती से पकड़ते हुए कहा, “राजा धीर भीरुपण के प्रति बन्धन से तू परिचित नहीं है। उस दोनों की दूरी ही सामीप्य था। धलनाथ ही विरज्ज्वल था। इसलिय कहता हूँ कि मुझ से मुक्त होने का प्रयास न करो।”

बनना सम्पन्नहीन हो गई। निर्बिरोध उसके बचन में जकड़ी रही।
न बोली पीर न डोली। बिसकुल मीन।

बन्धू ने सच्चे स्वर में कहा "अन्त-वस्तुतः रामू। फिर बन्धन और
बिर मुक्ति का बिस्सेपण यहाँ से होता माया है और भविष्य में होता
रहूँगा। अब पाप पर आकर अपनी माँ के हाथ से जाना चाहते।

रामू उठा और चला गया।

बनना स्वप्न-सी खड़ी रही।

बन्धू ने दीनता से कहा 'कार्यिक और सामाजिक मायामोहों को
बिसकुल मूल जाना भूयता है। दुष्ट दुर्जन राजपूत जाति में जो बिप
बमन कर रहा है वह एक दिन ठेरी और रामू की प्रेम-मीमा का पुनान्त
कर देगा। बनना !" बन्धू ने घाई कंठ से बीरे-बीरे कहा "मैं निम्न
जाति का हूँ पर रामू की कृपा और देव-व्यवहार के कारण मैंने
प्राक्पकृता से अधिक पढ़ लिया है, अपने पाप पर और व्यवस्था पर
बकरत से अधिक सोच और समझ लिया है। इसलिये कभी-कभी तुम सभी
सोचों को उपदेष्टा देने का दुस्साहस कर लेता हूँ। बोली को ऐसा उपराध
नहीं करना चाहिए पर तुम सोचों के प्रसार अनुराग के कारण मैं ऐसा
कर बैठता हूँ। अगम्य बंदिष्ट पुण्योत्तम इतिहास की पुनरावृत्ति कर देता
'धम्मक बब' ने सुषामयी धरित्री को त्रिम प्रसार अपवित्र किया था
सभी भौति वह पवित्र मरे बच से उसकी बच को रक्त रंजित कर देता।
पर प्रभु मुझ पर धरमन्त दयालु है।" जमन कुछ क्षण मौन रहकर प्रभु
की धरदामना की और फिर बोला मैं समझता हूँ कि तुम दोनों का
प्यार महान है। विषयान्वित कथामन्त्रि वैभवाभक्ति गहन रहित
सौमिक वासनाओं से परे तुम दोनों का प्यार है। तुम दोनों में एक प्राण
को एक हृदये को जमाना नहीं चाहती बल्कि स्वयं की प्राकृति से अपने
विषयम को पूर्ण करती है और यह पूर्णता ही हम बात की मांगी है कि
तुम दोनों का प्यार समीतिक है वह माया। माया सदा सभीन और
धर्मीन के बीच सारोपक बनकर रही है। इसे छोड़ो और सब प्रकार

हो जाओ।”

बम्पू हठात् जमा गया।

जमला धमाक़-सी खड़ी रही। यह बोली है या पिछले जन्म का महान् पंडित ! बकर किसी बीबी अभिषाप से यह इस रूप में यहाँ आया है। मे इसे प्रणाम करती हूँ। उसने मन-ही-मन कहा।

जमला उस धमाकार में अपने हथके कबम छठाती हुई डेरे की ओर बढ़ती गई।

यसोदा रामू को देखते ही खड़ी बन गई। जिस मुद्रा में बंठी थी उसे अत्यन्त कठोर कर लिया।

रामू सहमता-सहमता उसके समीप आया पीर बोला ‘माँ माँ !’ यह बैठ गया।

माँ पूर्ववत् बैठी रही।

“बोलेगी नहीं कठ गई है माँ। यदि तू ही मझ से कठ गई तो कौन मुझे अपने पास से लायेगा?”

माँ ने अपनी गदन बूझती ओर जुमा सी।

“कठ गई। कठ जा पर मैं जानता हूँ कि तू मझ से नहीं कठ सकती। राम से कीदल्पा नहीं कठ सकती। अपने जान्हा से यसोदा नहीं कठ सकती। धन भी नहीं बोलेगी ? तब मैं जलता हूँ। माँ मेरी माँ मैं जला”

रामू उठा कि यसोदा ने गर्जकर कहा ‘धन नहीं जला यसोदा के कहेना ? दिन भर के बाद आए हो बरा पेट-भुजा तो कर लो।’

रामू निश्चल पीर मोली होती से खिल उठा।

“माँ ! तू जिसकी धाँधी पीर बिघाम है। तेरा मुस्तर बिजली की तरह है। भाता है पीर-जला जाता है। सा परोस दे।”

यसोदा ने जाना परोसा। रामू जाने लगा। वह निष्कुल मीन था। जनाबबक-मीन यसोदा के लिए असाह्य ही गया। वह निस्पृह भाव से

बोली, "घाजकम तू बोया-बोया क्यों रहता है?"

राम मुसकराता हुआ बोला "घाजकम मेरे समस्त ज्ञान-तंतु एन ही रेश्म पर बेगिन्त हैं।"

"क्या ?

"माँ तू जानती है कि मैं बनला को "

"रामु !" घण्टी की घन्कारमा से एक चीख-सी निकली । घाँगों की पुठलियों में जड़ता घीर धाकृति पर घबसाह की बहरी रेगमें छा गई । बबडे हुए स्वर में बोली "यह नाटक समाप्त कर दो मेरे बेटे घन्कवा इस नाटक का अंत 'महामारु' की तरह दुःखान्न होना । न रूँमे कीरक घीर न बचेंगे पाण्डव । न रहेगा रामु घीर न रहेगी बनला !"

रामु संमीर हो गया । वह लिचड़ में अपनी मनी घंनुनियों को बाटता हुआ बीमे-बीमे बोला "माँ भगवान कृष्ण के बिना यह कबक कीन बना सकता है ? सीनह कसाघों के पारगड महान् कूटनीतिज्ञ श्रीकृष्ण के बिना इतनी बिसमें गक्ति है जो घडपडप धारिक प्रम को पराजित कर दे ? घीर प्रभु कृष्ण कहाँ ?"

"तू मानेना छोड़े ही । वोड़ा धाबीघ था माँ के स्वर में ।

रामु बिलकुल शांत हो गया "तू माँ निराकरखु ही नापज हो पाती है । प्रच्छा माँ प्रम मैं बनला न नहीं निर्भूवा ।"

माँ प्रकस्मित हो गई । उसके उम्मन मुग पर उम्मास की उमियों का निरन्तर गहन होने लगा ।

"माँ !" बाहर से धावाज धाई ।

"बम्पु !" यगोडा न हठाव् बहा ।

बम्पु रगोड़ के बाहर बैठ गया ।

माँ ने कहा "ले घब तू भी बोड़ा बिचड़ा था मे । सीन बोला बना है, क्यों दे रामु ?"

रामु उदास भरे स्वर में बोला "मिसनी के बेर की तरह मीठ ही स्वादिष्ट घीर मधुर "

हो जाओ।”

जम्बू हठात् जला गया।

जलगा घबका-सी खड़ी रही। यह बोसी है या पिछले जन्म का महान् पंडित। बकर किसी बैठी धर्मशास्त्र से यह इस रूप में यहाँ आया है। मे इस प्रणाम करती हूँ। उसने गम-ही-गम कहा।

जलगा उस धर्मकार में अपने हस्तके कदम छठाती हुई डेरे की ओर बढ़ती गई।

•

यशोदा रामू को देखते ही जखी बन गई। जिस मुद्रा में बठी थी उसे प्रत्यक्ष कठोर कर लिया।

रामू सहमता-सहमता उसके समीप आया और बासा ‘माँ माँ!’ यह बैठ गया।

माँ पूर्ववत् बैठी रही।

“बोलेगी नहीं कठ गई है माँ! यदि तू ही मरु से कठ गई तो कौन मुझे अपने गले से जमावेगा?”

माँ ने अपनी गर्दन झुसरी ओर झुमा ली।

“कठ गई! कठ जा पर मैं जानता हूँ कि तू मरु से नहीं कठ सकती। राम से कीसल्ला नहीं कठ सकती। अपने काम्हा से यशोदा नहीं कठ सकती। अब जी-नहीं बोलेगी? तब मैं जलता हूँ। माँ मेरी माँ मैं बसा”

रामू उठ कि यशोदा ने गर्जकर कहा “अब कहीं जला यशोदा के कन्हैया? दिन भर के बाद आए हो बरा देर-गुणा तो कर लो।

राम निश्चय और धोली हँसी से खिल जल।

“माँ! तू किछनी जखी और विशाल है। ठीक गुस्ता बिजली की तरह है। बाठा है और जला जाटा है। माँ परोस दे।”

यशोदा ने जाना परोसा। रामू जाने लगा। वह बिजबुल मीन था। धनाबधक-मीन यशोदा के लिए भरा हुआ हो गया। वह निस्पृह भाव से

बोली, 'घाबकल तू बोया-बोया क्यों रहता है ?

रामू घबकलता हुआ बोला 'घाबकल मेरे समस्त ज्ञान-तंतु एक ही किन्त्र पर केन्द्रित हैं।

'क्या ?

'माँ तू जानती है कि मैं बनला को "

'रामू ! यमोदा की घण्टासमा स एक चीख-सी निकली। घानों की घुत्तियों में बड़का घीर घाहति पर घबलल की गहरी रोगमें छा गह। दबते हुए स्वर में बोली 'यह घाटक समाप्त हर दा मेरे बेटे घग्यबा इस घाटक का घेत 'महाबलरघ' की तरहू घुबाला होता। न रहीं घीरल घीर न कबमें घाघब। न रहेगा रामू घीर न रहगी बनला।"

रामू घेभीर हो गया। वह बिचड़ में घपनी गनी घेगुतियों को घाटता हुआ बीमे बीमे बोला 'माँ भगवान हप्पल के बिना यह कबल कील बला सकता है ? रीलह कलाघों के पारलल महानू कूटनील्लम भौहप्पल क बिना हलनो बिलमें गल्लि है वो भलरललल घारिलक प्रम को पलरलल कर दे ? घीर प्रमु हप्पल कहाँ ?"

'तू मानेला बोड़ ही। बोड़ा घाभोर घा माँ के स्वर में।

रामू बिलकुल ललत हो गया 'तू माँ निलकरल ही नारलल हो पाती है। घल्ला माँ घल में बनला न गहीं बिलूला।"

माँ प्रकल्ललल ही पई। उसके उल्लम भुग पर उल्ललल की उल्लियों का निलललर गलल होने बला।

'माँ !' बाहर से घाघलल घाई।

'बप्पू !' घलोला में हूठल्ल कहा।

बप्पू रलोड़ के बाहर बैठ पला।

माँ ने कहा 'ले घल तू भी बोड़ा बिचड़ा का से। भौल' बोड़ा पला है क्यों रे रामू ?"

रामू उल्ललल भरे स्वर में बोला 'बिलनी के घेर की लल्ल की ल' स्वारिल घीर पलुर'

“कुत्ते की पूँछ सीनी हो तो तेरा स्वभाव ठीक हो। चम्पू, तू जाकर बता।”

चम्पू रसोड़े के बाहर बैठ गया। बोली जा भव रसोड़े में नहीं जा सकता था। जैसे धन्य नाँववाले चम्पू को घर के भीतर कबम भी नहीं रखने देते थे। उनका घर अपवित्र हो जाता था। पर यथोपा यथोपा ठहरी! कहती थी “जब हमारे राम भिलानी का बूँटा बेर सा सकते हैं तब मैं चम्पू को घर में घाने से कसे मना कर सकती हूँ।

माँ ने ‘घाक’ के पत्ते पर उसे परोस दिया था। वह खाने लगा। पहला कीर भुँड़ में डालते ही बोला “बाहू, माँ बाहू! बिचड़ा क्या बना। बस प्रंगुनियों काट खाने को भी चाहता है। वह जस-मर हुए रहकर बोला “माँ बोझा-सा बिचड़ा एक पत्ते में है है न।

“क्यों?”

“जकरत है।”

“मरे माई, किसके लिए, तेरे कीन बरबासी बैठी है?” चम्पू कीच में ही बोल बैठ।

“माँ, मैं भूट नहीं बोलता। बात यह है कि एक समाधिनुसती बाम्ब की मारी घा गई है। बचारी मूढ़ी बैठी है।”

“कहाँ?” विस्मय से पूछा यथोपा ने।

चम्पू भी चम्पू को घर्षण की दृष्टि से निहारने लगा जैसे उसकी मुसकंदायी हुई माँयें कह रहा था—“बाहू बटे वह काम तू कम से करने लगा? तू भीष्म पितामह ठहरा बाल ब्रह्मचारी! फिर यह?”

“घपने बोट में।”

“रात भर वहीं रहेगी।”

“इसमें हर्ज ही क्या है?” वह व्यंग्यात्मक स्वर में बोला “घब यह हुए क्या गया, माँ कि हनुमान की स्वेद-भूँच सागर में गिरी कि यकरध्वज उत्पन्न हो गया।”

चम्पू को चम्पू का यह परिहास उचित नहीं लगा। सहिष्णुता की

परिमि में रहना हुआ बोला : माँ ! रामू राम है मर्यादा पुण्योत्तम दोष रहित ! धीर मैं ठहरा डोमी !”

‘ऐसा क्यों कहते हो ? तू रामू से किस बात में कम है ? नीच प्राति में उरान्न होना ही कोई ऐसा अपराध नहीं है कि तू धरम धापको छोटा समझने लगे । मैं कहती हूँ कि तू रामू से श्रेष्ठ है ।”

“नहीं माँ रामू सर्वश्रेष्ठ है धीर मैं हूँ डोमी धापको प्रसन्नता धीर उन्माद में अपने कुत्ते को दुग्ध बनाकर नचानेवाला कीट तुच्छ, धुर !”

‘तू नाराज हो क्या बन्धू ?”

“नहीं रामू नाराज मला वह व्यस्ति बना हो सज्जना है शिरो सामाजिक प्रतिष्ठा इनकी भी प्राप्त नहीं है कि उसकी नाराजगी से एक भी हृदय में तनिक भी कष्ट हो । उस व्यस्ति के सत्ताप पर ममाज ईतकर रहेगा कि घरे बैलो न माई यह भा रहे ठाकुर सा के कंबल, इस ‘तू’ न कहना नहीं तो यह नाराज हो जायेंगे । अब तू ही बता न रामू ऐसी स्थिति में मैं ऐसी भूल क्यों करूँ ?” रामू उस प्रश्न को बिमरुप प्रत्युत्तर हुआ जाता माँ निषङ्ग पक्षी से पत्ते में डाल दे ।”

‘मैंने पत्तों में बाँध भी दिया है ।”

‘माँ मैं जगा बेचारी गोरी धनेला होयी ।” बन्धू ने कहा ।

‘बहु जाने लया । माँ मैं रनट-भरे स्वर में कहा ‘बन्धू, पटिका तो मैं जा ।”

‘नहीं माँ मैं धरती पर ही गो जाऊँगा ।’

रामू इनकी देर से चुप था । अब उस भी अपनी भूल सुधारने का धक्कर मिला । धनुष के साथ जाता ‘धरती पर गो जाऊँगा धरे धनेमानस धरती पर किमी लौट-बाँध मे काट लिया तू ?”

“तो मैं स्वतंत्र हो जाऊँगा ।”

“कृप !” रामू बन्धू के समीप था गया । बन्धू के कण्ठ को दृष्ट कृप, “मैं कम खरा जाऊँगा ।”

“बकर धामा गोपी बाम्बन में बूम्बान की गोपी ही है।”

रामू मुठकड़ा पड़ा।

बम्बू बला गया।

•

•

गोपी घग्गकार में धकेली बैठी थी। बम्बू ने तहाँ छोटा पत्तीटा बलाया। प्रकाश में बम्बू ने देखा कि गोपी के चेहरे पर अपूर्व शांति है। एकान्त में मानव-हृदय में जो भय उत्पन्न होता है, गोपी उस भय से सर्वथा मक्त थी। उसे गोपी के इस साहस पर विस्मय हुआ। वह बोला “तुम्हें भय नहीं लगता ?

उसने गर्दन हिलाकर न कर थी।

“बड़ी साहसी है।

उसकी बड़ी बड़ी आँखों में नीरव शीघ्र हो गया। उसकी बख भी फूट आई।

“तुम सब जाना ता थे।

गोपी मजान के नीचे पासबी मारकर बैठ गई।

बम्बू ने भोजन उसके घम्बुक रखते हुए कहा “ऐसा स्वादिष्ट भोजन तू ने अपने जीवन में भी नहीं खाया होगा।

नहीं ऐसा नहीं खाया इससे अच्छा खाया है। उसने बरती पर लिखा। बम्बू की आँखों में उपेक्षा छैर उठी। आँख में स्वर में बोला “तब तू भी किसी ग़ाफ़र की बूँदरानी हो।”

“बड़ी मैं तो सिर्फ़ मुँगी हूँ।”

“मुँगी।” एक बक्का-सा सगा बम्बू के मन पर। क्षिप्त स्वर में बोला “तु मुँगी है ? नहीं तेरी जीम किसी ने काट ली है। बकर तू कठोर-रूपा रही होगी क्योंकि बक्कर देखा जाता है कि क्यबड़ी सुन्दरियाँ स्वभावतः अन्य स्त्रियों की अपेक्षा अधिक पाशाणी धीर कठोर होती हैं। मैंने एक कहानी सुनी थी कि मित्र की एक साम्राज्ञी बितबी सुन्दर थी उसकी ही कुप्ट थी। बनपुर के महाराजा कुबेरसिंह की पत्नी

मे सौन्दर्य के भयण्ड में घाकर अपने महान् पति की पात्रानुसार अपने सीतेमे पुन को मृत्यु-रथ दे दिया "यह सब स्वाभाविक है।" उसकी दृष्टि बमीरतापूर्वक गोपी की उन पतली-पतली अङ्गुलियों पर बम गई। प्रथम बार बप्पू को प्रतीत हुआ कि पागलपन मुबती अनिष्ट सुन्दरी है। उसकी अङ्गुलियाँ गुलाब के फूल की भाँति कोमल और दृष्टि-प्रिय हैं। तब उसने सौन्दर्य-अभिमूढ व्यक्ति की तरह गोपी के सब-प्रसन्न को देखा। हैरतकर संभ-मुग्ध हो गया।

उसने हाथ का संकेत किया।

"तू पूछ रही है कि मैं क्या सोच रहा हूँ। पपली!" वह भारतीयता में डूब गया "मैं सोच रहा हूँ कि तेरा यह घामीस बबली बाला छारबल सौन्दर्य सम्पत्ति की सौम्यता सज्जित है। प्रथम तू कभी किसी राजा की बिरोध बाँधी रही होगी।"

गोपी के नेत्रों से चिनचारियाँ-सी बमकी जैसे बप्पू के इस कथन से उनका घरमान हुआ है।

बप्पू ने उस अनंत अन्धकार में अपनी दृष्टि फैलाते हुए कहा "मैं जानता हूँ कि बाँधी पगर मे तेरे हृदय में अपमान के संगारे सुनगा दिए हैं पर जान की घोषणा है कि सौन्दर्य सम्पत्ति का सम्बन्ध पाकर दुष्ट बन जाता है। उनमे गाधारसु घिपता सील और सीखन्ता मूढ हा जाती है और उनकी बगल एक विविध-या विक्रिद्विपन और कठोरता घा बानी है। यदि सत्ता सौन्दर्य की भवत बन जान ता सौन्दर्य हरपारा बन जाना है। सिद्धान्त की राजकुमारी की कहानी कभी बचपन में सुनी होगी। राजकुमारी अनिष्ट सुन्दरी थी। दूर-दूर से बाद और मूरत से राजकुमार उसने विवाह करने घाने थे। वह उनके समस्त तीन प्रसन्न रणा करती थी। इन तीनों प्रसन्नों की पूर्ण मानवी-पवित्र के बाहर थी। बराबिन् वे प्रसन्न कपोल-कल्पित भी हो सकते हैं क्योंकि उनकी प्रपत्त का कठ पना ही नहीं था। बेचारे रज-सासन्नि के राज के राजकुमा मुमन्यता की टोह में मटकनैगले हिरन की तरह जान-जाकर

बीज का धर्म कर लेते थे । जब राजकुमारी को राजकुमार की मृत्यु का समाचार मिलता तब वह बीजस्य घट्टट्टास किया करती थी । इस मनोवृत्ति को तू साधारण नारी की मनोवृत्ति नहीं कह सकती । उसे दूसरे की मृत्यु में महान् सुख प्राप्त होता था । एक पुष्टि और मुष्टि का भाव मिलता था । ऐसा क्यों ?

गोपी ने भगवान् बुद्ध से जन्म की घोर ईर्ष्या । वह धादवस्त-सा हुआ "इसलिए धार्मिक-काल से मानव सन्तति में पशुता के धक्कुर रहे हैं । ये धक्कुर जब धार्मिक मान्य में हमारे रक्त में बह जाते हैं तब वे नृपंसा स्वक प्रकृतियों को जन्म देते हैं । फिर जन्म के साथ वे धक्कुर पनपते हैं और अनुकूल परिस्थिति पाकर के मानवीय संस्कारों पर दानवीय कुसंस्कारों का राज्य स्थापित कर देते हैं । पर ये धक्कुर कभी-कभी इस प्रकार हमारी घन्टछरमा से निकस जाते हैं जैसे कटोरे का पानी । कटोरा जैसे ही उल्टा हुआ जैसे ही वह बानी से या उसमें डाली वस्तु ॥ एकदम खाली हो जाता है । ठीक वही प्रकार वे पाषाणिक कृतियाँ किसी समय कुर्मटनावद्य हमारे मस्तिष्क से निकलकर हमें संत की भाँति निम्न धीरे पवित्र कर देती हैं । संस्कृति के महाकवि बास्मीजी का हृदय-परिवर्तन भी ऐसे ही हुआ था । मुझ्ठा बड़वा धीरे पशुता का मगाधि के पदधातु उसमें प्रजा का भी प्रसर प्रत्युन उचित हुआ था उसमें 'राम' के रूप में महान् मानवता का रूप छड़ा कर दिया "गोपी ! तू कपवती की घीर बिह्वला का भिममठापूर्वक काटा जाता इस बात का धोख है कि वर्तमान को देखते हुए तू बहर किसी महा धवराय में सम्मिलित थी ।"

गोपी ने भोजन करना बीच में ही बन्द कर दिया । वह हाथ मोकर मन्थन पर सो गई ।

"तू नाश्व हो गई ! जन्म में उसके कुण्डलों को सहभाकर कहा । वह मन्थन पर विस्तृत कोयल पास में मुँह छियाकर तिसक-सिधककर रोने लगी । वह भी साहसकंठ से बोला "तू रोती है ! लक्ष्मण कुम्हे नीप क्यों कष्टप्रामय कहते हैं ? देखो न भावुकतावद्य में तुम्हें कितनी धार्मिक

पीड़ा पहुँचाई है ? व्यर्थ ही तुम पर बोधारोपण करने लगा । ठीरे जीवन के सत्य से अभिन्न मैं न जाने क्यों इतनी घटकसबाजियाँ लमा बैठा ? वास्तव में मैं विवेक-शून्य हूँ । योपी ! मैं बोमी हूँ भ्रष्ट मूढ़ ! बिछा व्यसन मेरा कलम्य नहीं है इसलिए मैं सबा ज्ञान के नाम पर कटुता का प्रचार कर बैठता हूँ । लोग मुझे स्नेह-दान की जगह वैमनस्य-दान दे जाते हैं । क्यों ? केवल इसलिए कि मूढ़ को उपदेशक नहीं बनना चाहिए मुझे क्षमा कर दो योपी मैं तेरा अपराधी हूँ ।

गोपी हठात् बैठ गई ।

पसीता अब बुझने को था । उसके मंद घामोद में बम्पू ने देखा कि गोपी के मन पर एक प्रतीक निभास्य है । वह प्रतीक रामन उसकी निर्दोषता का प्रमाण है ।

गोपी ! मनुष्य में ज्ञान को बुझ रखने की क्षमता नहीं है । वह तनिक भी योग्यता को समुद्र घटनादम्बरों से सञ्चार प्रस्तुत करता है । उस घटनादम्बरों के पथकर में कमी-कमी यह प्रमाण भी कर बैठता है ।" वह निरान्त मग्न होता हुआ बोला "मेरा हृदय कहता है कि तू बड़ी अच्छी है । ये जीम कमी-ज-कमी प्रकृति के प्रयोग में कटी है ।"

योपी ने एक बार उसे विषाक्त बलि से देखा घीर फिर अपनी बाँझों को मंह के दोमों घोर सपेन्दर को गई ।

बम्पू घरती घेमा पर अबसग्न होकर पड़ गया ।

प्राण समीपस्थ की गीतल लहरें । पक्षियों का बालु-प्रिय कयरब । खेतों की बालों का अद्भुत मृत्य । राखू का स्वर, मधुर घीर प्रिय स्वर—

जाग रे,
ओ मरभूमि का देवता
जाग रे ।

अन्यायिन किसी अयरोध से स्पष्ट भीष मैं ही खंड हो गया हों

ऐसे नौक कर जाय गया जम्बू ।

पसकें उसकी भारी थीं । ऐसा लगता था कि रात्रि के शुभ्र पहारों में भी वह जैन से नहीं सी पाया है । वह छठ बैठा । उसने धमने शरीर की देखा । मिट्टी से वह सुगन्धित हो गया था । उसने मूट्टी भरकर मिट्टी को सूंघा और भाबुकता से कहा "माँ का धौबल सदा सीरममव होता है ।

तब उसकी दृष्टि गोपी पर पड़ी । निहा की धुल-गोब में वह निस्पृह सी पड़ी थी । जम्बू ने उसके मुख को देखा—सूरज की तरह सुनिता उस पर चीन्हा थी । सरय का अप्पावन उसके सौन्दर्य-मुक्त कपोलो पर बहुरा पड़ा था ।

वह उठा "जन्मा और उसके समीप आकर अवृण्ड मिमासी की धीति उसे देखता रहा । देकना देकता बड़बड़ाया "तुम्हारा ही पारस्परिक सम्बन्धों की बड़ है ।"

गोपी । उसने भीरे से पुकारा ।

स्वर्ग आरक्ष्य और स्तम्भता ।

"बुप हो जाओ जम्बू, पुष्करिक सोया हुआ है । सूरज की पावन किरणों का स्पर्श ही इसे विकसित करेगा । रामू में पीछे से नाटकीयता से भावे आकर कहा ।

जम्बू के मुख पर चैर्म था गया । वह कोमल स्वर में बोला "यह है वह मुबली ।

"सचमुच सौन्दर्य की देवी है । जम्बू । यदि यह हमारे पास में रखी तो मैं उसकी धर्चना करूँगा ।"

"धीर बनना ?"

वह तरस-मरी हुई हुई "बहु महापूज है और यह उसकी विकीर्ण ज्योति । धर्चना हर धाराध्य की करनी चाहिए पर वन्तम्य नहीं होना चाहिए, जहाँ से हमें बड़कन मिलती है ।"

"मैं इसे उठाता हूँ ।"

“क्यों ?”

“घप बढ़ रही है ।”

“बढ़ने दो ।”

“ऐसा लगता है कि रात को यह सो नहीं सकती थी ।”

“नई भरती है न पहले-पहल धराजामणी” ही लगती है ।”

“फिर ?”

“बरा तोपी रहने दो ।”

“लेगी इच्छा ।”

“तू मेरे संग बस ।”

“क्यों ?”

“इमक लिए साछ मे का सुबेरे-मबरे उसका भातिष्य क्या करेगा ?

बस !

वे दोनों बल गये ।

तभी दुजन आ गया ।

रूप के दीप को दीपकर रामन की तरह वह चारों ओर भँडारने

लगा ।

धीरे नीब रहा था तभी कम्पू राग को इस धनचोर बन में सेला है । नीब कमीना बुराचारी ! मृगी मग्ग मुबली का उपमोद ! डोली होकर इतना दुस्साहस ? सामे को घुली की तरह बाट फेंकूंगा । पर यह है कौन ? कोई भी हा यह हमारे ही रागमे में घाली बाहिए, राजपूत के होने हुए तेमी भुग्गरियां डोली चमारों के यहाँ रही सो हमें बिचकार है । भुग्गा धीरे सुन्दरता लयी बहने है । फिर यह घसपाव कैसा ? कभी-बेदे दुर्जन घपडारण ही कर सो ।”

बड़ बारी के मनीष धाया ।

बिषाद कर बोला “ए, उठ !”

गोपी की उम्मीदित पमर्कें सासु भर के लिए जुली घोर फिर बन्द हो गईं ।

'रङ्ग के साप के कारण मृत्युभोक का संताप भोगने उस डोली के पास था गई है । कोई बात नहीं । इस डोली के बच्चे घोर इस धुनार के बाये की समलोकन पहुँचवा दुँतो मेरा नाम बुर्जनसिंह नहीं ।

उसने गोपी की जयाने के लिए लोटड़ी को सँभाला । लोटड़ी में एक बूँद भी पानी नहीं था । घट वह अपने खेत की घोर बना । रामू के खेत से तीसरा खेत बुर्जनसिंह का था । हरा-भरा घोर झूमता हुआ ।

सारे गाँव का अनुमान था कि इस बार सबसे अधिक धान बुर्जन के खेत में ही होगा ।

बुर्जन अपने खेत में गया । लोटड़ी को कबे से लटकामा । क्योंकि उसका समझना था कि सुन्दर सुबती प्रायः अक्षिप्तता और कठोरता से बन्नी ही नाराज हो जाती है । घट वह गोपी को बड़े ही प्यार से बढाना चाहता था । प्यार से जगाने के लिए पानी की बूँदें ।

तब उसे यह भी ध्यान आया कि उसे तलवार भी लेनी चाहिए । रामू घोर बम्बू उसके साथ हैं । सुन्दर बरती भी तलवार की ध्यान से प्रभावित होगी क्योंकि वह मुझे प्रतापी पुरुष समझे । सोनपुर का राजकुमार बीरसिंह समझे जिसकी बीरता पर मुग्ध होकर सरोवरपुर की राजकुमारी विक्रमर्द्धवर ने उसे अपनी दासी बनाने के लिए अनुरोध किया था । क्योंकि उसने उसके सामने सिंह को मार दिया था ।

उसने तलवार बूँदनी शुरू की ।

धीमटा में मनुष्य की दृष्टि पर आबरस पड़ जाता है । धामने की वस्तु उसे दिखाई नहीं पड़ती । यह मति-अम की अवस्था में प्राणी अहित्त पंचत घोर झूठ होता रहता है । जिस वस्तु को वह सोच रहा है, उसके धमाक में ही पास है, उसे भी मष्ट करने की दिति में था जाता है ।

बुर्जन को तलवार नहीं मिल रही थी । यद्यपि तलवार उसके

छामने सड़े खेजड़े की एक धाग से सटक रही थी। वह खू-खूकर और है पाँच पटकटा था और कह उठता था कि उसके दास अब भी काम के नहीं हैं। वह सबको कोड़ों से पिटावता तीन-तीन दिन तक भोजन नहीं देता। भुप में बार-बार कोस तक दौड़ायेगा नीलों की सोपड़ी ठीकी हो जायगी। कभी कोई वस्तु अपने उचित स्थान पर नहीं मिलती।

दुर्जन अपने दोनो हाथों से अपना सिर पकड़कर बैठ गया।
पाँच अणु वह उसी तरह बैठा रहा। फिर उसने पीरे-पीरे अपना पल्लक उठाया। बाय से झुलनी हुई तनवार उसे अचानक बीज पड़ी। उसके होंठों पर एसी मुस्कान खिड़ गई जैसी भिराब सनिक को घाघा की किरण बीजान पर खिन्ती है।

उसने तनवार को कमर पर कसा। मूँछों पर धाव दिया और चला।

पीरी मज भी मोई हुई की।
भुप की किरणें उसकी घमर्कों में लज्जकर मन को बहुत मा रहीं थी। एक पल का टक्का उड़कर उसके गाल पर धाकर इस तरह पड़ गया था मानो वह कोई तिल है।

दुर्जन कुछ अणु तक धनूय बट से उसे देखता रहा। फिर उसने सोपड़ी से पानी लेकर पीपी क बंध पर छिड़का।

पीरी ने धाँगे सोम की।
दुर्जन निभज्जता से हँस पड़ा। ऐसी मजा में रहा हुआ जिस मजा में मारद वा दग्दर वा भय भिन्न स्वयंवर में खड़े थे।

मारी ने अभिच्छा से मुँह कर लिया।
“मैं दुर्जनतिह हूँ। क्षत्रु का समधि।”
पीरी ने कुछ भी ध्यान नहीं दिया। वह उठकर तन की बालों में घास हो गई।

दुर्जन उसके पीछे-पीछे चला। पीरी ने पलटकर धाय मरी दुष्टि के उसे देगा। वह मज्जकर बड़ी सका हो गया।

गोपी निर्ममता से वापस आई। उसने दुर्जन से पानी लेकर हाथ मूँह धोया और फिर उसने अपनी वृष्टि पण्डड़ी पर फेंका थी।

“मैं आपसे एक प्रार्थना करने आया हूँ कि आप कौन हैं? उस डोली को क्या सगती है?”

गोपी उसे अपरिचित समझकर बाँसुरी को घमरों से लपटा बैठी और उस पर धुन बजाने लगी।

दुर्जन प्रसन्नस्वर में बोला ‘आप संपीत-साध्याजी हैं, आप स्वर्ण में उस लूट के यहाँ अपने समस्त जीवन का सर्वसाध कर रही हैं। मैं आपको अपनी प्रसन्न रखीस बनाऊँगा। स्वर्ण-बाँधी से आपका धन-धन सम्भित कर दूँगा।’

गोपी ने बाँसुरी मञ्चान पर रखकर दुर्जन के दात पर चाँटा मार दिया।

दुर्जन को प्रमाद में नम-गंगा के बर्धन हो गये। गोपी पुनः मञ्चान पर बैठकर बाँसुरी वादन करने लगी। उसकी मुद्रा से ऐसा लप रखा था जैसे उसने चाँटा मारकर कोई भी ममानक कार्य नहीं किया है। दुर्जन भी घात होकर गोपी का बेचने लगा। व्यथित स्वर में बोला ‘आपने मेरे चाँटा मारा कोई बात नहीं। कोमलाभियों के मुहुन करों का प्रसाद भी माम्बानों को प्राप्त होता है। पर मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप उस डोली के साथ चुली नहीं रह सकती।’

फिर उसने सोचा कि राबल का प्रतिघोष सीता का हरण या श्रीर मेरे प्रपञ्च का प्रतिघोष—इसका ।

उसने अपनी पूरी शक्ति के साथ गोपी का हाथ पकड़ लिया। हाथ पकड़ते ही गोपी ने किसी प्रकार का विरोध और प्रतिरोध नहीं किया अपितु उसने इतने जोर से अट्टहास किया कि दुर्जन काँप उठा। उसने अपना हाथ ढीसा कर दिया और विमूढ-सा उसे देखने लगा।

दुर्जन ने आश्चर्य से पूछा ‘तू कौन है?’

गोपी ने अपने हाथ को इस तरह मटका जैसे वह कह रही हो कि

तू यहाँ से हट जा भाग जा ।

दुर्जन ने तब मन-ही-मन प्रतिज्ञा की कि भाग ही रात वह इसको
बह बसा गया ।

बम्बू के पाँवों की डकती बूल ने गोपी को धामस्थित कर दिया
वह घण्टी बाँसुरी पर यादक स्वर छड़ बैठी ।

मबर, प्रीतमरा आसक्त !

बम्बू ने घाने ही कहा "सो छाछ पी लो ।"

वातावरण शून्य ! चुन ! गुँगा !

रामू के हृदय पर मोरी मृगो है—जानकर बहुरा धावात लगा ।
वह बम्बू के ममन नेत्र मूँदकर इन तरह बैठ गया जैसे वह किसी मान-
सिक्क रोग से पीड़ित है और बिसकुल बक चुका है ।

घण्टाघ्न की भूप ! बंधों की छाँह !

मूँ के भोंके ! युगल मित्र उम्मग धीर बिलग ।

रामू ने धीरता से कहा "घाप घाप घाप मैं कहता हूँ कि मनु का
धमियाप इस तरह की नादान धीर सुन्दर युवतियों पर कभी दृष्टा है ?"

बम्बू ने घण्टी के कणक का उछाकर उसे ओर से केंचा "मुझ ऐसा
सम्बेह है कि यह युवती धन्य ही मुक्तबर है । तू नहीं जानता कि राजा
रिनाम की राज्य निष्ठा दिन-रात की तरह घासक्त हा रही है । वह
चाहता है कि मैं धार्यजन का एकाधिकारी सम्राट बन जाऊँ ? और यही
कारण है कि हमने सभी छोटी-बड़ी व्यक्तियों की धान्तरिक इशा को
जानने के लिए इतन इतनीय गुप्तचर रख छोड़े हैं जो मामूतियों की
सहानुमति स्वतः ही प्राप्त कर लेते हैं । लोग जनकी दुर्बला पर निपलकर
धामय देने हैं और बाग में वे सही स्थिति का धममोचन करके बुधचाप
घिनक जाते हैं ।"

पर एक मग का भोलापन इसकी धमतीबाह्य दुष्टता का तमिष
की छाया नहीं है । मैं समझता हूँ कि बिरोध ज्ञान की उपलब्धि ने मुझे
मति भ्रम कर दिया है ।

“मैं ऐसा नहीं समझता। यद्यपि मेरा विश्वास है कि तू बल-विरहित हो रहा है। सर्वप्रथम रूप के प्रति तुझमें जो मोहाकर्षण उत्पन्न हुआ था उसे अब समापनस्त देखकर तेरे अस्तर की समस्त दबा-आवना एक साथ बोरी के प्रति जाब उठी है। अनुपम पहले जितना बलशाली और भावशाली होता है बाव में उतना ही अब भीरु और विरक्त होता है।

रामू के व्यक्तिगत मन को इस उत्तर से संतोष नहीं मिला। उसे ऐसा लगा कि बम्बू गोपी के नृपेयन के प्रति अन्याय कर रहा है। वह सबप राजनीतिज्ञ की भाँति जो प्रत्येक की कसूरों दबा हँसी यद्यु, प्रेम और अनुराग में राजनीति की कुटिल अभिमायों और गतिविधियों के दर्शन करता है। सा व्यक्तित्व उसके प्रति करने लगा है।

वह बोला “मैं ऐसा नहीं समझता। बोरी साधारण निरामबी मुझी है। कुर्मान्यवध वह हमारे बीच था बड़ी है। इसे उसकी सहायता करनी चाहिए।”

पर बम्बू ने हुठरी तरह से कहा “सहायता समु की भी करनी चाहिए, यदि वह कविता बनकर बीम-हीन बचा में हमारी धरतु में था जाता है तो लेकिन यह मैं निश्चित रूप से कह सकता हूँ कि गोपी के पीछे बकर कोई दुर्कटना-मरण इतिहास बरा है।

“मैं वह नहीं मानता। मैंने जगला से कह दिया है कि वह बोरी की सभी बहानों की तरह सेवा करे। वह बड़ी दमनीय है। कृपा की राह है स्नेह की भुली है।”

बम्बू ने उठते हुए कहा “मैं फिर कहता हूँ कि उसे खेत में ही रखो, ट्युरर का का मुह-प्रवेश संशित नहीं रहेगा।”

“उसकी इच्छा है कि तू सदा उसे सहायता सुनाया कर। मैं भी एक मित्र के गले तुझमें अनुरोध करूँगा कि तू जगजग में न चलकर उसे बस सहायता सुना दिया कर।

६५

दूसरे दिन ही टिड्डी वन में गाँव पर आक्रमण कर दिया। बाँस के दरिद्र और परिश्रमी किसान कुलीन की भाँति बिगड़ पड़े रहे। बाजूओं में समक घसित होते हुए भी वे अपने कर्णों को टिड्डियों के समानक आक्रमण से नहीं बचा सके। जानी से समस्त रूपक साधार है और अपने सेन उनकी पत्नियाँ जिन्हें ईश्वर कभी कूर प्रवृत्ति सोन्दर्य प्रष्ट कर रही है मष्ट कर रही है।

तब सर्वगत सरा बप्पा की तरह कुका दीखने लगी।

समस्त रूपकों ने अपनी समु-साहित बाँसों से अपने घम के उन ररा बिदुओं को देखा जो छोटे-छोटे बीजों द्वारा विगत लिये गये थे।

बाप्य या ईश्वरी मौला समस्तिये कि दुर्जन के सेन का तीन बीपार्द शिम्मा पजों का त्यो बच गया। टिड्डियों जिस निगा से बनी थी उध निगा के एक बीजे से दुर्जन का शिम्मा पड़ता था वह मधुना-मा रहु गया। सोय मारा बाँस बीराम मूला और मिम्वता जान पड़ता था।

रामू धीरे बम्पू कमर पर बैठे हुए अपने दुर्भाग्य को देख रहे थे ।
 बैठता था धीरे बंजर भूमि ।

धन क्या होगा ?”

सारा गाँव मूस की भाग में बस जायेगा । बम्पू ने कर्कश स्वर में कहा “धीरे दसो सारा पाप के धावर्त में रहनेवाला दुर्जन इस कोप से बच गया । बाहू रे प्रभु !”

“मैं समझता हूँ कि ठाकुर सा महाराजा रिसालू से सहायता लेते धाम्पवा इनकी प्रथा धन के धमाक म उड़प-सड़पकर मर जायगी ।

“उस एक लकवाले दुष्ट को तो सार्वभौमिकता की झुका इतनी सीधता से लनी है कि उसे इस साधारण झुका का परिज्ञान भी उस रिसालू से होता दुप्कर है ।”

फिर ?

“ठाकुर सा दुर्जनसिंह के खेत का समस्त धन स्वाधिकार में लेते । उस धन से गाँव कुछ माह तक सरसता से निबाह कर सकता है धीरे कुछ माह का धन पक्षीसी गाँववाले ले देंगे । फिर नहीं खलू भा जायगी ।

‘यह संभव है ?

तभी ठाकुर धीरे दुर्जन साध-साध आते सीध पड़े ।

रामू धीरे बम्पू भी ठाकुर के समीप गये ।

खर्मा धनहाता की ।

ठाकुर ने यही निराशा से कहा ‘दुर्जनसिंह अपने खेत का धन धन के परिवर्तन में बैठा जाइता है । उसका कहना है कि पाप की बंका में भक्त विभीषण का भर जो सप रहा है वह उसके धनप पुष्प का प्रताप है । मैं उसका मूस्य जाइता हूँ—सोना धीरे बीबी ।

“क्या दुर्जन इसके भिमे तैयार है कि वह अपने धन का समस्त धन स्वर्ण के परिवर्तन में दे देगा ?” रामू ने विभीष भाव में कहा । उसके चेहरे पर फठोरता थी ।

“हाँ दुर्जन धवीरता से बोला ।

“ठाकुर सा । हम सहाम धीर मंगल की बुझिया तक आपकी देव आप सेव का ममम्त धम्म दुखन से नै नै ।”

बम्भु कुप बा ।

उतकी फिती भी आज भरी बात पर ठाकुर सा के कष्ट होने की आशंका थी । उसकी पीछों में बुला धीर द्वेष धंगारे की भीति शीघ्र हो रहा था ।

कुछ जल निस्तब्धता रही ।

दुखन ममत्वाचित हड़बड़ाकर बोला “मैं अपना साग धम्म नहीं दे सकता । मैं समझ गया कि तुम सोच क्या चाहते हो ? तुम चाहते हो कि मैं सारा धम्म लेकर कमान ही बाटों धीर फिर धनगणि के कठोर डेर के समय मूल से बिलबिलाकर तड़पू धीर धीर बिलिप्त होकर मूल मूल कर बिल्लाटों । धीर तुम सब मेरी शीम दगा पर घुगा-भगा मट्टहास करो सनामा धीर करो कि जो कुबेर के सुगुप होना छोड़ो मोलियों को बचाओ । नहीं मैं सारा धम्म तुम सोचा की नदी दूंगा ।” वह बार-बार भापी धंगारा की कल्पना साध से भीत रहा था “मैं तुम सोचों को साध धम्म नहीं दूंगा । क्या मैं बुझ दूँ या नादान बिने तुम सोच मतीव धम के प्रलोभन में लुटकर ममन्तिक पीदा पहुँचाओ । मैं तुम सोचों को सारा धम्म नहीं दूंगा । मैं जानता हूँ कि तुम सभी मझने घुगा करते हो क्योंकि मैं ठाकुर का सर्वमच्छ साधन धीर उम्मान प्राप्त मयिा हूँ । ओ सोनी ! तू क्यों ईस रहा है ? जा यहाँ से भाव जा हमारे बालकों के ब्याह में गाबने-गाने जाता ।” धीर वह पावन की भीति बार-बार छपी बाधुय था बोहरा देता था—“मैं तुम साधों को साध धम्म नहीं दूंगा ।”

ठाकुर की समझी दग बिलिप्त दगा पर दया आ गई । उन्होंने उत धीर दिया “तुम जानते हो कि हम मम्याय का मम्वन लेकर कोई भी धार्य नहीं करेंगे । तुम जितना धम्म देना चाहो उतना सह्य दे सकते हो । हम हम फाई में स्थित का उपयोग नहीं करेंगे ।”

इस धाक्कासन से जी दुर्बल को धीरे नहीं भिगा। वह जिस दृष्टि से राम धीर बम्बू की बेस रखा था।

बम्बू उसकी ऐसी विभिन्न युद्धा बेसकर मुसकरा पड़ा। उसका मुसकराया घाम में भी का काम कर गया। वह भड़क उठा *हूँ हूँ हूँ* है, निर्जन्म कही के। *(मैं कहता हूँ, धनदाता कि मैं अपने लोभ का एक घाना भी नहीं हूँ।)* बाहे यह बान भूल की पीड़ा से बिसर-बिसरकर मर जाव मुझे इनसे कोई सहानुभूति नहीं *(मेरे दब दृष्ट धीर मेरे घावक हैं। मैं जानता हूँ कि यह राम मुझे माफ़कर घापकी सारे रामपूतों की नाक काटना चाहता है पर मैं ऐसा नहीं होने दूँगा। मैं इन सभी को नुकीली मारूँगा।)* मोह! तब मुझे कितना धान्य प्राप्त होगा जब मैं अपने चिर प्रतिद्वन्द्वी की बास धीर पते बा-बाकर उड़पते देखूँगा। मूल से जब इसकी संतुष्टियाँ इसे कचोनेकी तब मुझे अपनी सफलता पर कीदर होगा। मैं सभी बाँवबालों से अपना प्रतिबोध दूँगा।

बम्बू के लिए जब मौन रहना पति दूसर हो गया था। वह ताड़ना-मरे स्वर में बोला "इतनी शक्ति यदि एक व्यक्ति में था पाखी तो वह पृथ्वी के सारे फूल धीर नवन के सारे तारे तोड़कर दृष्टि को कुम्भ धीर प्रकृति को विकृत बना देता।

"बुप रह बोली के बच्चे! वहीं तो सर्वत्र वड़ से प्रलग्न कर दूँगा।"

ठाकुर धीर जी नाटक के दर्शक की मीठी विचलित-से बड़े से सभी दुस्व बेस रहे थे।

(प्रसन्न में वे सभी को शांत करते हुए बोले) "लेव दुर्बल-सिंह का अपना है। उसकी इच्छा के विरुद्ध हम एक बाना भी नहीं ले सकते।

(उन्होंने नहीं ले सकते?) राम ने बुद्धता से कहा "घापति काल में प्रेमा की सुरदा के लिए धनबाता को विषय शक्ति का प्रयोग करना चाहिए। व्यक्ति के महत्त्व को मिटाकर समष्टि के हित में सोचना चाहिए।"

"हम विरुद्ध है राम! श्याम के विरुद्ध हम नहीं बन सकते।"

कहकर ठाकुर डरे की धोर पले पये ।

राशि का निर्मलपल धरती सट्टि पर बिस्तार नहीं हो पाया था । उसमें तारा के पृथ्व सजाये ही नहीं पये थे । उसमें आकाश-गंगा की बेस बमकाई ही नहीं बई थी कि सारे गाँव में इस दुःखद निर्णय की सूचना पहुँच गई । सारा गाँव निर्वीच हो गया । वे सभी उगे देवी-कोट समझ रहे थे और एक अमानक कल्पना कर रहे थे । उस अमानक कल्पना के हृत्प की सति विरहान पंथ से और सिंह जीव और और निर्मल पंथ से ।

धरती के पंथ में केवल प्रेम की ज्योति विबीज करनेवाला राम भी इस आपत्ति में प्रीत को मूल बैठ । भुल वा प्रमथन बनणा के पमर अनुपम । धन्यायन को मननी विरहसिद्धि कार्य से सोनाने सया । वह धाकुर-सी राम के पास दीदी-बीदी घाई "यब क्या होगा ?"

"ओ हमारे भाग्य में निजा होगा ।"

समझी ।" वह स्थिर हो गई । उसकी समझ-नी नीली घाँवों में रोव की सील बिजमारियाँ बन उठीं । उसके होंठों पर धन्यायन-जमिष्ठ कागज धिरक उठा । मैं सब समझती हूँ । तू मुझे परायी समझने सया ।

जंग में मैं तब लोगों की धोर में सम्मिश्रित नहीं हो सकती । जैसे मैं अपनी बापाली हूँ कि मेरे हृदय में अपना ही स्वाभ है, गाँव का स्नेह नहीं जैसे मैं अपनी दुबल हूँ कि मैं धन्याय वा नामना नहीं कर सकती । फिर है मुझे राम । मुझ बिस्वास है और धारणा भी कि मेरा विस्तार मुझ तेरे पीछ है । यह गढ़ यह ठाकुर, यह बेसब मुझे ऐसे सपने हैं जैसे वे मेरे पर निरूप की हूँ। मैं हँसकर कह रहे हैं कि सब मिथ्या है गहर है छल है । सत्य है तो केवल सत्य, भारी सगरी मानवीयता सीलता पीदाता और प्रेम अर्थात् तू । तू मेरे जीवन का सत्य है और तू ही सभी सत्य की कलीड़ी है । मैं तेरे संवत्सर पर सर्वस्व विमर्जन कर सकती हूँ महा परिवर्जन कर सकती हूँ विद्रोह का भीष गर्जन कर सकती हूँ क्योंकि मैं अनुभव करती हूँ कि तू है तो सर्वस्व

रामू के मन में प्रेम का बीजण उड़ने फूट पड़ा। उसने बनछा को प्रयाद भावितन में आबद्ध कर लिया। विह्वलता से बोला "तू मेरी शक्ति और शक्ति है। मैं तेरे बिना कियन हो जाता हूँ।"

उसी समय बम्बू आ गया था।

बनछा पीर रामू उसी मूढ़ा में रहे जैसे मन्दिर की निष्पाण मूर्ति जिसके घाने कियने ही वर्धनाशितापी चढ़ रहते हैं और वह सरा एक-सी रहती है।

"सभी प्रामीन छिब मंदिर के समस्त उपस्थित हो गये हैं।"

"ठाकुर सा आ गये?" रामू ने पूछा।

"नहीं।"

"क्यों?"

"उनका मन आज अच्छा नहीं है।"

देखा बनछा यह है वृष्ट मानव की प्रकृति। उन्होंने कम मूढ़ की पीड़ा को जाना है। सब इच्छा से अधिक प्राप्त हुआ है। वे क्या जाने हमारी पीर, हमारा अभाव हमारा संकट! जसो बम्बू में घापा। सुनो तो।"

बम्बू जाता-जाता पुनः रुक गया।

"क्या है?"

"बोरी कहाँ है?"

"बहु भी धा गई है।"

"प्रसन्न है न?"

"नहीं।"

फिर अचानक बनछा ने उसे कुछ कहा होगा। क्या के पान पर प्रायः लोम दबा करना शुरू करते हैं। ऐसा वे जानबूझकर नहीं करते अपितु ऐसा करना उनकी स्वाभाविक प्रकृति होती है।"

बनछा साँपिन की तरह फटकार उठी "मैंने बोरी को कुछ नहीं

कर स्वयं ही मात्मा पर आघात करना है। वह निताम्र दमनीय धीर निरुद्ध है। प्रभु उसे जात बनाये रने धीर उसे प्रसन्नता का चिर वरदान है। कहकर बनवा अपने डरे की धीर बली गई।

राम ने कहा "बसो!" सब खाना हुआ।

तिबलिन।

ससकी सबेना धीर मरना।

प्रार्थना धीर विनती।

प्रजा का समूह।

एक बर्षा एक दृष्टिबोध एक चोप।

"हमें प्रमत्त चाहिए।"

"हमें प्रमत्त चाहिए।।"

हमें प्रमत्त चाहिए!!!

उत्तर चोप स दना प्रतीत होता था कि "स विरुद्ध मार के प्रमत्तहित को वास्तव गंवरणा छिरी है। उस संशय ने धाव समस्त समूहव्यव समस्त होकर सबको एक तार में पिरो दिया है। ताकि हमका संशय-जनित यह बहुचोप विरुद्ध धीर संशयमय बन जाये।

बन्धु ने कहा "मात्र कर्तृ है कि यदि तेरे पास दो दाने हैं तो एक दूसरे का घिसा धीर एक स्वयं का। संघर्ष न कर, संघर्ष करेगा तो पाप का भागी होगा।"

राम ने दृष्टिगत किया। बनवा नहीं थी। सबप्रतिभ मोक-मरना से अभ्यर्थन हाकर माग गई था। शीत कीटिम्बक मर्यादा के घट्ट बन्धन लोढ़ने के प्रयास में घतउप रहीं। वलु मार के लिए राम भूम पया था कि उसे क्या करना चाहिए, वह मांखानों को कुछ कहने के लिए पड़ा हुआ था पर वह कुछ धीर ही सोच रहा था—बनवा के बारे में।

वास्तव में उत्तरी प्रेय की अनुमति हमनी तोष थी कि वह बार-बार हमरी पुनीत भावना के प्रवाह में बह जाना था। संघर्ष गूहर की चुंब में प्रभु की पवित्र उरोनि की तरह बिकें लुं होता था। तब प्रभु वास्तव-

निरीक्षण करके पाता था कि मानव-जीवन केवल भाव-प्रधान प्रेम ही नहीं, छोट सीधार्मिक धरा भी है। यह बरा तत्कालीन कई महत्त्वपूर्ण विषय कथित बटनाओं की जगती है। ये बटनायें जीवन में उस पर हिंसायी भाग को जन्म देती हैं जो धारमी को कुत्सन बनाकर महामानव बनाती है जो व्यक्ति को समष्टि के रूप में बड़ा करके उसके जीवन को सार्बक बना देती है। रामू ऐसी स्थिति में अपने धनराशपूर्ण हृदय से प्रेम के सभी विषयों को धमिट करने का प्रयत्न करने समता पर सीध ही वह पुन प्रेमामिभूत हो जाता वह उसकी सम्मन्धत दुर्बलता की।

जम्पू ने रामू को सावधान किया।

रामू ने बीक्रेते हुए कहा "हमारा सौभाग्य है कि हम अपस्थिति में दुर्जन भी है। मैं दुर्जन से शक्ति प्राप्त करना चाहता कि वह हम सामूहिक विपत्ति में गाँववालों के प्रति धार्मिक समवेदना रखे और धर्म का बेटबाप कर दे।"

दुर्जन बीच में ही उठकर बिनाक पड़ा "मैं एक जाना भी नहीं हुना यह मेरा अन्तिम निर्णय है।

"हमें एक बार ठाकुर से और प्रार्थना करनी चाहिए।" रामू ने दुर्जन की बात सुनकर कहा।

"ठाकुर मेरे बचनावक हैं। वह मेरी इच्छा के प्रतिबन्ध कुछ भी नहीं कर सकते।"

जम्पू अपने हृदय के प्राकृतिक और कोष को अधिक डेर तक नहीं रोक सका। जब कर बोला "तू प्राणी नहीं है। मैं समझता हूँ कि तू भीम का बंछन है जिसे तू पीने में महान दुष्टि मिलती है।"

"तू राह बोली के बन्धे। कीपता हुआ दुर्जन बोला।

"मैं बोली प्रकाश हूँ—प्रतिष्ठ और लक्ष्य। पर तू तो बिराट बंध का है? तूझ में सच्चा प्रार्थ-रक्त है? लेकिन तेरे कार्य उस बंध राजा से कम नहीं जिसे अपने अपनी माँ की बलाककर पारना चाह। वह

नादान बच्ची बिजसी बनकर आकाश में चली गई तो भी कंस ने इसके पूर्व अपने साथ माँजों की हत्या की। घराबारा और घनाबारा उसके स्वभाव के धरा बन गये पर परिणाम क्या निकला? बिनाश सबनाश और मृत्यु! कम से मिर्छोय बच्चे भूज से बिलबिसायेने भीलकार और घातनाद करेंगे और प्रभु ने तरे सर्वनाश की कामना करेंगे। क्या तू समझता है कि यह सम्मिलित दुष्कामना तुम्हें शांत और प्रमत्त रखेगी? नहीं नहीं! दुर्जन बचापि नहीं! इस पीड़ित घात भरे प्रमत्त से ऐसी रक्षा नहीं होगी इसलिए हमारी प्रार्थना स्वीकार कर से और हमें हम बिनाश से बचा ले।

सोचों ने देखा—दुर्जनसिंह साँप की तरह फटकारता अपना फट मारता चला गया है।

रामू ने गर्जकर कहा “अम्नदाता के पास चमैं।”

भीड़ उस ओर चल पड़ी।

यह अग्याय है ठाकर सा।”

“अग्याय बीसा?”

‘कम माँब पर जो बिपत्ति आनेवासी है असं सं माँब की रक्षा की जाय।”

“मैं बिबन हूँ।”

रामू का संविचनशील हृदय ठहर उठा “आप बिबन हैं क्यों? आप हमारे प्रभु हैं आपकी हमारी रक्षा करनी चाहिए।”

“मैं अपना सारा अम्न आपकी दे सकता हूँ। ठाकुर ने पर्व से कहा।

“मेकिन आप दुर्जन से डरते क्यों हैं?”

“मैं उममे बचनायल हूँ।”

रामू ठाकुर सा के अन्तर्मन के रहस्य को जान गया। वह बिचारने लगा कि ठाकुर प्रभावनों की यह बताना चाहता है कि उनके बिना

चमका कोई अस्तित्व नहीं। वह जब चाहे तब उन्हें प्राण और मृत्यु दान दे सकता है। वह पूर्ण शक्ति-सम्पन्न है। अब इनका मान-मर्द होना प्रति आवश्यक है।

[इस मञ्चकारकर बोला 'अग्निदाता! हम सोय व्यक्ति के स्रोत हैं। शक्ति धर्मन करके अपनी समस्या का समाधान ढूँढ लेंगे। आप बिठा न करें सिंहासन और सम्राट की सृष्टिकर्ता वह प्रजा जब मृत्यु और समाधि में संगठित होती है तब गया-यमुना अपने बस की बीरकर उन्हें पक दे देती हैं और हिमालय गठ होकर उसकी अभ्यथना करता है पर आपकी यह अनिम्यता आप द्वारा हमारी हत्या है।"]

उसी एक किसान बीड़ा-बीड़ा धाया और उठावली से बोला 'आप भयानक धाम विष्वस।'

सब चीक पड़े।

सोनों ने देखा—दुर्जन का सारा बल धर्म की मयाबद्ध जपटों में मस्तीघात हो रहा है।

धीर दुर्जन ?

उस निमहाय बभू की तरह चीक चीककर रो रहा था जिसके हाथ की मेंहरी का रंग भी फीका नहीं पड़ा हो धीर उसका प्रति मर गया हो। उस निर्दयी प्राणी के अशस्त्राव में आन बरों के बाह सच्ची समवेदना परिलक्षित हो रही थी। उसके कसल कवन में उसकी अन्त परमा का दुःख था। उफ! मनुष्य कुछ मोट काटा है तब उसे पराए के दुःख का आभास होता है।

ठाकुर ने उस छाँवगा बी। पर उसने पावत की तरह सम्मत् होकर राम का गाना पकड़ लिया 'तू ने मेरे स्रोत को जलाया तू ने मेरा सर्व भास किया। ठाकुर सा इमे रंड मिलना चाहिए, मर्द-बाप! इसे सूली पर लड़ा दिया जाय यही है वह जो हमारी नाक के बावज को रखने नहीं दे रहा है यही है वह जो जनता के साथ "

'बुप रही। ठाकुर एक साथ बिस्ता पड़े। उनका तब काँपने

सगा। उनके मेज धमारों की तरह बहक उठे। कर्कश स्वर में बोले
 "यदि फिर कभी हमारी बेटी के बारे में अपमान-भूषक शब्द निकला
 तो हम तुम्हें जिंदा बीमार में मड़वा देंगे।"

धीर तब उन्होंने भूख सिंह की जाति रामू को देखा। उनकी बसती
 दृष्टि में उनके धन्यार्थन का विरूप बीज ढा रहा था।

दुर्जन दुराका से स्तब्ध धीर संझाई हो गया था।

धर्म की प्रशंसा ज्वालाएँ। बटसन की क्षमिष्य धर्मियाँ !!

बिनाम धीर महाबिनाम !!!

"मैं मूट गया डाकून सा मैं मूट गया।" दुर्जन एक बार पुन कड़क
 कर रो पड़ा।

धीर भी ने झम्माकर कहा "धुन रहो।"

बम्पू इस तरह साबमान हुआ जैसे किसी धारम्य धीरसुखमयुग्म नाटक
 का एक समाप्त हुआ हो। वह धीरता ने बोला "घाय का बुझाओ।"

छाया समूह धाम बुझाग में लग गया।

प्रातः होने-होते गत एक मुक्तिग समयान में बहक गया।

बम्पू मौन रहा था यह धाम किसने लगाई?"

मजान बन एकीन धीर मौन।

"यह धाम कौन लगा सकता है? उनकी प्रतर प्रका दस प्रदन के
 माह भंड वह जाती थी। उनके मान-संगु कछुए की मग्नर धति सदा
 धाम कर रहे थे।

प्रदन का तेज भौंका कभी-कभी उसकी विचारपारा में धरोप
 उलान कर देता था।

"इस दुर्घटना के साथ इतना गहरा लगाव धीर किये हो सकता है?
 कहीं बमसा तो धारम के बलीभूत होकर पैना नहीं कर बीटी? सोचा होवा
 कि रामू उसे हरावे की पुनती समझया उसके प्रम को निबल धीर बुद्ध
 मानेया। कहीं धरने प्रेम का महान प्रसारित करने के लिए धरोप

तो वह ऐसा न कर बैठी हा ? क्योंकि प्रायः स्त्रियाँ ऐसे घबीर लम्बों में साधारण धर्म का त्याग कर देती हैं। उनका विशेष प्रत्येक कुर्बाना के धर्म के मात्र से भयल हो उठता है। उनका मन दुर्भका की कल्पना मान धं बेचैन हो जाता है क्योंकि वह अत्यन्त कोमल भावनाओं से बनी हुई होती है। बिनाता उसे विशेष रूप से बर्बाद बनाता है। मैं गोपी से पूछूँगा ? वह रात भर उसके साथ रही होगी। जनना भी उससे विशेष स्नेह रखती है। प्रत्येक प्राणी उसके धर्मोपन के कारण उसे आबस्वकता से अधिक करता है।

गोपी ! बेचारी क्यबती धुंधली बुझती !

वह गति मानवीयता के प्रवाह में बहता ही गया। बोरी उसके समक्ष उठनी ही बयनीय जयती की बितनी लक्ष्मण को सीता बन में छोड़ने पर लगी थी। वह पछनुत हो उठा। कस्सा के धमक सवेन में वह बहरों पर भटकते हुए काठ के टुकड़े की तरह भटकता रहा।

“बम्बू !”

“कौन ?”

“मैं हूँ साबसा।”

“साबसा ! बोसो क्या बात है ?

साबसा अपनी छोटी-छोटी बिच्छू-भी घाँसों को एक बिचित्र तरह से निचमिचाकर बोला “एक बात बताऊँ ?”

“बताओ।

साबसे की घाँसों में मय की दो बार हल्की रेखाएँ उठी और मिटीं यह धान किसने मचाई है इसे मैं जानता हूँ।”

बम्बू के हृदय पर बध्नात हो गया। धारण्य बरिष्ठ होकर बोला “किसन लगाई है यह धान जल्दी बता।” वह तुरन्त घबीर हो गया “तू चुप क्यों है ? धरे, मुझे क्या देखा है ? बोस न मैं कहता हूँ कि जल्दी से बता दे नहीं तो मैं पचात मय के मारे भर बाईना। तू नहीं जानता कि मैं उस मेव को जानने के लिए कितना घबीर हूँ, रात भर

छोटा नहीं। आपत व्यवस्था में भी बड़े ही विविध स्वप्न देखता रहा, उन स्वप्नों में मेरी आत्मा को निर्बल बना दिया है, सब कुपा करके धीघ्र बता दो कि यह धाग किसने समायें है ?”

पाँव का मरीच कृपक साँवसा उसकी नाचमता को देखकर असमंजस में पड़ गया। जम्बू उसे बार-बार कह रहा था कि जल्दी कहा कि यह धाम किसने समायें है पर उसमें उसे बासने का मीका तक नहीं दिया।

“तू चुप क्यों है ?” अपने स्वेद कणों को पोंछते हुए वह दृढ़ स्वर में बोला।

“मेरी उस छोकरी ने

‘मेरी छोकरी ने ?’ मानो सहस्र बिण्डु उसे एक साव काट बीठे हों धीर वह मर्मन्तिक पीड़ा से कराह उठा हो ‘मेरी छोकरी ने। मेरी कौन छोकरी है मैं तो अभी तक कुंसाप हूँ फिर मेरी छोकरी कौन हो गई ? तुम्हें धरम कोई भ्रम हुआ है। मैं तुम्हें सब कहता हूँ कि मेरी एक भी छोकरी नहीं है।”

वह इतना उद्विग्न धीर विचलित हो गया था जितना एक निरपराध व्यक्ति अपने पर हत्या का झूठा आरोप लगा चुनकर हो जाता है।

साँवसा पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। वह धान्ति से बोला “धरे नहीं तेरी छोकरी या यूँही है।”

‘गोपी !’ उसके न बाहृत हुए भी गोपी का नाम उसके मुँह से प्रस्फटित हो गया जैसे प्राणी का अवचेतन मन उसकी अपनी आत्मा से धार्मिक बाध्य घटनाओं के प्रभाव में हो धीर को समय पर प्रतिश्रिया के रूप में गन्त हो जाता है।

अलकाल तक मृत्यु-सी मूकता। धान्दोसम। बात प्रतिपाठ।

अपानक बारण हुआ धीर और निकला।

‘मोह, वह यूँही युवती बचारी एसा धरम नहीं कर सकती वह तो धरम भी नहीं धीर कोमत भी। वह एसा नयम कार्य नहीं कर सकती धरम ही तुम्हें भ्रम हुआ है।”

“नहीं चम्पू मैंने उसे अपनी घाँसों से देखा था।”

“स्वप्न में देखा होगा।”

“नहीं ! वह बुढ़ता से झिड़कर बोला जैसे उसे चम्पू के हठ पर रोष था गया हो।

“फिर वह कहाँ है ?

“मैं क्या जानूँ ?”

“जसो उसका पता लगाया जाय।”

“क्यों ?

“एसी राजसी-बसिवासी नारी कभी हमें बड़ा बड़ा बंद दे सकती है।”

चम्पू धीरे सीबला ने उसे कुछ झूठा पर उसका पता नहीं लगा।

हताश होकर चम्पू ने कहा “वह अवश्य गुप्तधर होगी।”

“कोई भी हो पर हमें इस मय को मर ही जगाकर रखना होगा चम्पू का तुझ पर विपत्ति टूट पड़ेगी।”

चम्पू गद्गद हो उठा धीरे मौनमा जला गया।

फिर वही धूम्रता एकान्त एकान्त में उठते हुए विचारों का झंझर।

चम्पू सोच रहा था “इस नारी में पाश्चिमी ब्रुति का ऐसा निर्मम बख्तर क्यों ? वह वही कोमल धीरे सीम्य थी। उसके ससोने बेहरे पर राधा की निस्स्वतता धीरे सहजता थी। वह विसफट स्वरज हो गया

मय समझ मनुष्य प्राबोद्ध में इनना डूब जाता है कि वह यह निर्णय करने में भी असमर्थ हो जाता है कि कौन अच्छा धीरे कौन बुरा है ? मैं भी किशता बूझूँ कि प्रथम दर्जन धीरे बाँसुरी-बादन पर मुग्ध होकर अपने प्रेममयी राक्षस समझ बैठा। लेकिन सावधान भी मैं सीधे हो गया था कि यह हो न हो कोई विधिज मकती है। इसके पीछे इतिहास के महत्वपूर्ण छद्म पृष्ठ है। मेरी इस सन्निक घनास्था को रामू का परिज विस्वास फिर विचलित कर बैठा। उसने उसे धर्तीय अनुकम्पा दे दी। वास्तव में जैसा व्यक्ति स्वयं होता है उसे वैसा ही सारा संसार

सगता है ।”

उसने अपने समाप्त की मला दीने वह मानसिक रूप में भाँट हो गया है । पर उनके हृदय के उठते हुए उद्गार उस प्रकार की बिना किए बिना ही उनके मस्तिष्क को झकझोर रहे थे । पर उसने तन में भाग क्यों लवाई ? इसमें उमरा कीन-या स्वाप छिन्निहू है ? तिरदस्य ध्वंस की प्रगति समाप्त में बहुत कम देलती में मिलती है । यदि मया मरेगा उसे क्या ? फिर उसने सत बनाकर तो हमें पीर ही सफट में डाल दिया सम्यक् इम दुबन को समझा-बुझाकर कुछ पैर पीर कुछ बैठे या फिर धस्ति का उपयोग करते । उठ ! मोरी प्रवर्य कूर मोर मृगंस बननी है । उमे सभी को सफट में डालकर प्रवर्य ही मगरिछीम मानस प्राप्त हुआ होगा । मोरी ! कूर कठोर पासकिक ।

अग्नू न दीध निरवास मिया ।

उमके सम धय में शेषस्थ था गया ।

वह ममान पर निहाम हो गया ।

निहाम होने ही उसे निद्रा ने था घरा मृत्यु-नी निद्रा नीरव प्रथम ।

तीन दिन तक गाँव में मृत्यु की उरानी छाई रही ।

राष्ट्र का प्रथम प्रथम अमरुता का साम्निष्य-मृत्यु की साक्ष्य भाँप नहीं कर रहा था । वह प्रेम की मृन्दर पीर स्नेहपूर्ण दण्डवती के साथ प्रथमर पुठ बठगा था कि याम के बिना गाँव का क्या हाल होगा ?

अमरुता निरवास के साथ बहनी : “मममान पर भरोसा रखो । अपने जिस तरह हमारी प्रीत निभाई है उसी तरह वह गाँव के सफट का भी निवारण करेगा ।”

राष्ट्र न जान क्यों व्यथित हो उठता था । अपने प्रेम में वह दुब बाना चाहता था पर वह अभी मरुम नहीं हुआ ।

दुबन का मस्तिष्क इन दिनों विविध हो गया । गेन अमान पर

उसमें बहुत प्रयत्न किया कि रामू धीर बम्पू को अपराधी बना दे पर वह उसमें असफल रहा। तब वह अपमानित होकर रामू धीर बम्पू की निन्दा-स्तुति करने लगा।

ठाकुर के द्वार पर वह इसलिए असफल रहा क्योंकि उन्होंने स्पष्ट शब्दों में उसे कह दिया था “रामू धीर बम्पू निर्दोष है। वह उस समय हमारे पास बड़े थे।”

दो दिन के बाद प्रचानक गाँव में प्रसन्नता की लहर बीड़ गई। म्दान मुर्खों पर बसेठ की बहार उमड़ आई। ऐसा उत्साह लोगों में आया जैसा धान के माह की बूँदों के बरसने पर किसानों को आता है।

सबने भक्ति-भाव से विह्वल होकर एक स्वर में कहा “बम्पू सर्व व्यापी है, सर्ववृष्टा है, सर्वपामक है।”

बेमगाड़ियों की पंक्ति।

मधुर घंटा-ध्वनियाँ।

पराग के समान रेत के कण्ड।

ठाकुर स्तंभित प्रजा स्तंभित धीर रामू-बम्पू स्तंभित।

गाड़ियों के साथ अस्त्र-सस्त्र सज्जित सैनिक भी थे। वे कहते जा रहे थे “महाराजाधिराज राजा रिखानू ने प्रजा के हितार्थ अपना देवा है।”

प्रजा में उत्साहपूर्ण जय-जोश—

राजा रिखानू की जय।

बर्माबतार महाराजा की जय।

प्रजा-पामक की जय।

एक ही बात एक ही चर्चा।

स्वयं ठाकुर ने धाकर प्रधान सैनिक का सम्मान किया। उनके प्रतिष्ठा का समुचित प्रदर्शन किया गया।

राज-मर घतिषियों का भय स्वानत होता रहा। डोमणियों के कामोत्तेजक नृत्य धीरे धीरे। बारण के प्रचलित गान।

प्रभात होते-होते सैनिकों ने वापस प्रस्थान किया ।

एक बार घमा रियालू की जय के नारे फिर समाये गये ।

बार में समस्त धनाज गाँववालों को बाँट दिया गया ।

सैनिंग उस पुष्ट बार्ता को ठाकुर ने रहस्य ही बनाकर ऐसा जो
प्रधान सैनिक पीर उनके बीच प्रस्थान के पूर्व तीस क्षण तक हुई थी ।

सात

रात की बरफ राजा रिछामू के रंग रंग में बस गई थी। खैरां छोड़ने की इच्छा न होने पर भी राजा रिछामू को उठना पड़ा। मन्दिर के नुबत का समय हो रहा था। कभी-कभी बड़ियास और बंटा बज-बज कर समस्त नगरवासियों को सावधान किये जा रहा था कि जापो और मन्दिर की ओर भागकर अपने धर्मिष्ठता के दर्शन करो।

राजा रिछामू प्राप्त कर्मों निवृत्त होकर साधारण बस्त्र पहन मन्दिर की ओर जाने के लिए रात पर भागड़ हुए ही थे कि सेनापति का जोड़ा आकर रुका। राजा रिछामू ने बन्धुवृष्टि से सेनापति की ओर देखा जिससे सेनापति को यह आगते दौर न लगी कि महाराज उससे बत दिन से रुष्ट हैं जिस दिन से राजी खीचमहल से भाग गई थी।

“महाराज की आज्ञा!” सेनापति का चिर झुक गया।

राजा रिछामू ने ठिरडी वृष्टि से केवल सेनापति को देखा।

“राजी का पता लगा लिया गया है। यह बन्दिनी बचा ली गई है।

यह भी वह हटी अपने साधारण प्रती का नाम अपनी है। कहती है
"रिसालू जैन निर्दयी और दुष्कर्म को वह अपना पति स्वीकार नहीं
सकती।"

यह सुनकर राजा रिसालू के दरबारी पर धार्मिक मुसकान नाच
उभे मन्दिर लाया जाय रख हाँको।"

रख बस पड़ा।

दुलदबी का पारल भस्मिर। अपार जन-समूह। बंटों की पुनीत
नि। हृदय उत्साह और शक्ति। जय-जयकार। दर्शन।

नपाकों की पूँज—बड़ बड़ बड़ बड़

सनापति ने उच्च स्वर में कहा "प्रजाजनी। शांत! शांत हमारे
प्रिय राजा आपके समक्ष कुछ बहने।"

प्रजा शांत निरस्त भविष्य।

राजा रिसालू ने आनपूर्ण स्वर में कहा "ईश्वर ने कहा कि प्रजा
उत्तम द्वितीय राजा बही है जो न्याय को अपने हाथ की कल्पवृक्षी
बनाये। वह सम-दृष्टि रखे, सम-विचार रखे और सम भाव रखे। मैं
ही प्रम का शुद्ध धर्म हूँ और उसके न्याय का उत्सर्जन नहीं कर सकता।
मोक्ष मैं चाहता हूँ कि प्रम सबको देलता है। काम सबकी प्रतीक्षा
रहता है। वह सबोप धैर्य उन्मार्ग धीरज और निमकटे बुझाये पर
मा नहीं करना। मतलब है कि एक दिन सबको उसके दरबार में
जिर होना पड़ता है। इसलिए मैं जो भी काम करना हूँ उसमें दृढ़
करता हूँ। जब मैं उससे करता हूँ तब मैं सम्पाद नहीं कर सकता।"
राजा रिसालू कुछ काम तक मोन रहे और पुनः बोले "मेरे कुछ प्रश्नों
का उत्तर स्वयं प्रजा दे?"

प्रजा सावधान हो गई।

राजा रिसालू और से बोले "महा-नगर के दह-विभाग से सब
निर्दिष्ट है?"

"हाँ।"

“यदि कोई स्त्री व्यक्तिवादिणी हो उसका बंड धम्म है या अधम्म ?

“अधम्म ।”

“क्या बंड है ?”

‘उस कुल्हा का मुँह कात्ता करके छारे मगर में बुझाया जाय और बाव में नगर के भीराहे पर बड़ा करके प्रत्येक नगरवासी से जूते सबबाए कार्यों और तब उसके प्राण लिये जायें ।’

“लेकिन ?” राजा रिसालू का स्वर उदास हो गया । स्वर में अस्वाभाविक कम्पन था गया “लेकिन मध्ये डर है कि आप अपराधी को बेचकर भयभीत हो कार्यमें । आपके पाँव छाव से डमकाने लगेंगे ।”

रिसालू मन्दिर की ओर सम्मुख हो गये । देवी के समक्ष अल्पकाश के लिए झुके रहे । तब बोले “मैंने कुम्हारी की शक्ति का बरदान माँव लिया है । छाहूँ माँव लिया है ताकि मैं प्रत्येक के छाव उचित त्याग कर सकूँ ‘सैनापति ! अपराधी को खाया जाय ।’”

प्रजा का छवि एक गया । माँवे फटी-फटी-ली रहकर मन्दिर की ओर बस गई । ऐसा कौन अपराधी है जिसको बंड देने के लिए रिसालू जैसे पराधी राजा को शक्ति माँगनी पड़ती है ? प्रजा ने देखा कि एक अरुणत सुन्दर किन्तु मुरझाई हुई कुवती उसके कावे तर्क-जात से कुंठित, छाँची में छाँड़, और नवनों में कनीमृत बेचना । ।

“प्रजा इस स्त्री को पहचानती है ?” राजा रिसालू ने पूछा ।

“नहीं ।”

“यह तुम्हारी माँ थी ।”

“माँ ! घृणा धम्म में फूट पड़ी ।

“तुम्हारे इस नगर की महारानी

“महारानी ।” प्रजा में ओर की इसलज मच गई ।

“यह हमारी महारानी नहीं है । सैनापति ने चाहे बढ़कर कहा

“महानगर के पवित्र सिंहासन की पविष्ठारी ऐसी चरित्रहीन मारी नहीं हो सकती ।”

राजा नहीं देखी करके बाता हमारी स्थिति बाबरण में रहती है इसलिए प्राण दनके साक्षात् नहीं हो सकते पर हम जो कह रहे हैं बिनाकुस सत्य कह रहे हैं।”

यवनी पीछकर बोली “आपके महाराज झूठ बोल रहे हैं। मैं इसकी पत्नी नहीं हूँ मैं आपकी महारानी नहीं हूँ।”

“चात ! राजा रिमानू ने धामा दी।

पस भर के लिए पट्टी निम्नव्यता छा गई।

“यन् महानगर की महारानी है जो गतिवत धर्म की मर्यादा को साँपकर नरक की ओर भागी।”

मुबर्गी दीव में ही बोल पड़ी “मैं महाराज को पहचानती भी नहीं। मुझे ग्याय बाहिन, प्रजावनो ग्याय।”

“क्या राजा रिमानू धम्माय करते हैं ?” बीबान ने धामे बढ़कर पूछा।

ही हाँ ”

“बुद्धा !” राजा रिमानू वा ह व वसपार की घूठ पर बसा पया। सेनापति ने बसा कि प्रजा में हाहाकार मच गया है। प्रजा आज महाराज का भय न गाकर बिस्ता रही है “धर्मवरायणी महाराज इस नाटी का ग्याय करें।”

घान !” सेनापति ने कहा।

प्रजा घान हा गई।

प्रजावनो ! राजा रिमानू मेरे पनि हे या नहीं मैं नहीं जानती। मेरिन मैंने कभी भी इन्हें पति के रूप में न देगा और न अब तक ब्रह्म ही बिदा। मैं घाने गिता के नाँव में रहती थी। मेरे रिता राजा रिमानू के बचीन भी हैं। मैंने कभी एक मुश्कल न प्रेम किया। उमे अपना परमेदवर माना। एक दिन तुम्हारे महाराज धामे और मुझे पकड़कर यहाँ से धामे। मैं रोती घीर बिपराती रही पर तुम्हारे कठोर महाराज ने अपने बानी में कैद बाल लिया। मेरे कून ने जोयन घीर स्वयं मे नहूर प्रभी

तो तुम्हारे राजा के सैनिकों ने निर्बलतापूर्वक पीटा । वह नाथार बिना पानी की मछली की भाँति तड़पता रहा पानी की एक-एक बूँद के लिए बिलब-बिलबकर सिर फोड़ता रहा पर तुम्हारे कल्या-बिबान महाराज को कससा नहीं धार् । ससारबासी ! क्या मही तुम्हारे महाराज का न्याय है बर्न है ?" बुधती ने बिक्कार मरी वृष्टि से एक बार सभी को निहाय "मैं बंड-बिबान का उत्सर्जन नहीं करूँगी । मुझ में नगर की शक्ति के विरोध की भी समता नहीं पर मैं इतना बकर कहूँगी कि मैं निर्बल हूँ निरपराध हूँ । यदि तुम्हारे बंड-बिबान में प्रेम करना अपराध है और अपहरण करना निरपराध तो मैं सहर्ष कहूँगी कि मुझे भीक्षित बना दिया जाय ? मेरे प्रति क्या का भाव भी प्रकटित नहीं किया जाय । लेकिन नगरवासियो ! यदि प्रेम महान है तो मुझे अपने प्रमी से मिलने दिया जाय । मैं प्रेम-बीबानी हूँ उसकी पीर में मेरा रोम-रोम बूब चुका है मुझे उसमें भी धान्य है । गर्ब में धान्य क्यों ? क्योंकि मैं किसी से प्रेम करती हूँ । वह प्रेम जो सर्वश से सहिष्णु और ममुर रहा है ईर्ष्यारहित रहा है जो धात्यस्माया नहीं करता गर्ब नहीं करता दुष्ट धापरस नहीं करता स्वार्थ की चेष्टा नहीं करता शीघ्र क्रोध नहीं करना । मैं उसी प्रेम की ही पुजारिण हूँ । तभी तो ईश्वर ने स्वयं कहा मैं प्रेम हूँ ।"

बुधती ने एक बार फिर स्तब्ध जन-समूह पर वृष्टिपात किया । समूह उसकी बात के प्रभाव में धा रहा था । सबके चेहरों पर व्यथा की छम्पी-हुस्की रेखाएँ उभर रही थीं ।

"जब ईश्वर प्रेम है, फिर अपराध कैसे ? जो सहृदय नगरवासियो ! तुम्हारे महाराज ईश्वर के नाम पर धात्यार का राज्य स्थापित किए हुए हैं । मैं तुम्हारे राजा की श्रेय के कारण निरा नहीं कर रही हूँ मैं तो केवल सत्य का उद्घोष कर रही हूँ कि अपराध-स्वस्थ यह धनदाता कितना पातकी कितना पायर और कितना धन्यायी

"साँठ हो बायो नहीं ता तुम्हारी बिब्ला पीच सी बाबगी ।"

राजा रिसामू संमीरणापूर्वक घाने बढ़े घीर बाले "सैनापति जी !
उसघामी को मेरे राज्य में बाध कहने का पूर्य अधिकार है । बहती
बाधो ।

“मन्दिर का पूजा गठ संख्या-बगल ही मनुष्य के भले-बुरे की
कसौटी नहीं । केवल महानगर की प्रजा पर प्रभुत्व-वर्षण ही सुयोग्य
प्राप्त्य का माप-बह नहीं । जरा घाप महानगर के बाहर जाकर देखिये कि
इस पीड़ित घरती की सन्तान किस प्रकार अपना जीवन बिता रही है ?
मूल बलिता अरथाचार में कैसे बल रही है ? उनकी बहू-बेटियों की
दुग्ध इसी भवधान के मस्त किस प्रकार सूटे हैं ? उन लालार घीर
घपहरण की हुई नारियों में से एक मैं हूँ । ईश्वर साक्षी है कि केवल
एक ही व्यक्ति से प्रेम किया है, उसे लन घीर मन समर्पण किया है घीर
तुम्हारा यह राजा मुझे बबरबस्ती उठाकर गड़ में से आया ! मैं पूछती
हूँ कि एक राजा को जो बाप क समान है इस प्रकार किसी नाटी को
उठाकर लाने का क्या अधिकार है ?”

प्रजा में उनके कथन की बहरी प्रतिक्रिया हुई । राजा रिसामू ने
एक बार लनाम समूह की धार इस तरह देखा जिस तरह भूजा घेर
बेटियों के गमूह की घोर देलना है ।

घुबनी जोर से बिस्लाई ईश्वर अधिकार घीर सक्ति के दुग्धपाग
की धामा नहीं देता । वह सवसक्तिमान घीर सर्वोपरि होने पर भी हम
लालारों पर प्रत्यन्त दुपामु रहता है घीर हमारे घपराघों को क्षमा करता
रहता है । पर ईश्वर व घय स निर्मित यह राजा काम-बासना की वृत्ति
के लिए नारियों का घपहरण करता है । बड़ की पोलावी बीबारों में उन्हें
बन्दी कर उनके शरीर को इस प्रकार लोभता है । जिस प्रकार पिकारी
कृता । मैं जानना की प्रलय सक्ति से पूछती हूँ कि क्या यही बलिया
राजा का न्याय है ? प्रथम कार्य घावरण में छिपाया नहीं जा लभता ।
यदि क्यामु व्यक्ति जामार की निर्भीक बीबारों से भी जाकर पूछे कि
उमने नाटी के लान क्या दुर्लभहार किया तो वे बीबारों बीक-बीककर

यही कहेंगी कि इस राजा की बाखी मजदूर धीरे धीरे ब्यापहार प्रिय है पर इसका धर्मर ईश्वर की तरह मजदूर धीरे धीरे है। यह बसत-बसती के साथ वैसाविक ब्यापहार करता है।

मैं एक बार भयमान की सीमन्त जाकर कहती हूँ कि यह मेरा पति नहीं है। मैं इसे जीवन में कभी भी प्यार नहीं कर सकती। मुझे मेरे प्रेमी के पास जाने दिया जाय। यह निर्मल धीरे सहाय्य स्थिति मुझे फूस की सुपन्न की तरह अपने हृदय में बसाये रखेगा। सुबती ने मन्तिम बार बीचकर कहा "नगरवासियों। मैं म्याम चाहती हूँ म्याम। मुझे म्याम चाहिए।"

सुबती जब मंथ पर बैठ गई तब राजा रिशाल उठे। अपनी एक बाँध से उन्होंने प्रजा के बेहतरों पर संवर्ष करते हुए मावों को पडा। पुस्तों में विद्वत् और विनीने हुए अपने बेहरे की कुरता को मुसकान में बबलते हुए यह धर्मन्त धीरे धीरे धेभीर स्वर में बोले "सात।"

प्रजा में उठता हुआ कोलाहल धात हो गया। खुप्री का साम्राज्य स्थापित।

'प्रजाबन्धो। नगर के म्याम धीरे धीरे-विधान के अनुसार आपने अपनी महारानी की बात सुन ली जो कस आपके नगर के महापवित्र राज्य-संस्थापन पर बैठनेवाली की जिसके समक्ष उस प्रजा के मस्तक झुकनेवाले थे जिन्होंने आज तक सिन्धु ईश्वर या ईश्वर के प्रथम अपने राजा के प्रतिरिक्त किसी के सम्मुख अपना धिर नहीं झुकाया।"

राजा रिशालू निःकाश छोड़कर पुन बम्बे स्वर में बोले "ईश्वर हम पर धर्मन्त ब्यापु है, यह हमारी धीरे हमारे सम्मान की रक्षा इस प्रकार करता है जिस प्रकार बंगल की धात बंगली जानवरों से तप में मल किसी योगी की। मैं उस ब्यापि धक्ति को बार-बार नमस्कार करता हूँ।"

"मैं इस नारी—नारी इसलिए कि म्याम हमारे नगर का म्याम बैचता नहीं सुनता है। द्वारा नभाये गये पति रिशालू पर धारोप की

सप्यार् में यह एकचम कुछ कहना चाहता है। प्रजा मेरी इस बात पर ध्यान है कि राजा रिसामू के स्थान पर अब कबल पति रिसामू धड़ा है, प्रजा और राज्य का अपराधी इस स्त्री का पति।

‘इम गारी का कहना है कि मैं उसका पति नहीं हूँ। मैंने इसका अपहरण किया है। इसका उत्तर में मैं इतना ही कहूँगा कि मैं इस युवती के बाप को प्रजा के सम्मुख उपस्थित करता हूँ। ठाकुर मजीठसिंह !’

प्रजा ने सौंघ रोकर देखा—एक प्रीट व्यक्ति जिसका मुग कुन्दन की तरह साम ब तथा हुमा है, सीमा ताने आभिजात बम के झुंड से बाहर निकल रहा है। वह मंच पर आकर प्रजा की प्रणाम करके मोन धड़ा हो जाता है।

राजा रिसामू ने उससे पूछा ‘ठाकुर मजीठसिंह ! आप भगवान की सौगम्य लाकर कहें कि क्या आपने धाह ! छहरिये।’ राजा रिसामू रानी के समीप गये और व्यापारमक स्वर में बोले ‘क्या तुम नहीं यह जानती हो ?’

‘हूँ।’ युवती ने गिर गिराकर अपनी स्त्रीवृत्ति की।

‘क्या यह तुम्हारे पिता है ?’

‘हूँ—और आपके आकाशारी बाब भी !’

‘प्रजाजनो ! मजराबिन यह स्त्रीकार करती है कि वह ठाकुर मजीठ सिंह की पुत्री है।’ मजीठसिंह को सम्बोधित करके राजा रिसामू बोले ‘अब आप बताइयें ठाकुर माहब क्या यह आपकी ही पुत्री है ?’

ठाकुर दुग ने मस्तक झुकाते हुए दृष्टे स्वर में बोले ‘हैं नहीं की। ऐसी बन्-बसंकिनी और दुराचारिणी को मैं अब घरनी बेटी नहीं मानता।’

‘ठाकुर माहब पदचाताप मत कीजिए। यहाँ ग्याय की बात है। आप मेरे प्रदनों का उत्तर दीजिए। क्या यह आपकी बटी है ?’

‘जी !’

‘इमाच इन्के साथ पाणि-ग्रहण हुआ कि नहीं ?’

‘मैंने इन्हीं हाथों से किया था ।’

सुना मयरवासियों ने ।” राजा रिसामू खोर से बोले ।

‘मरकार, कस्टा बुराचारिणी ।” प्रजा में यही तीन शब्द गूँज उठे ।

मुबली बीच में मड़ककर बोली “सात । लेकिन मेरा क्या हवा तुम तो मैं जानूँ ?” प्रजा पूरा प्रभाव के साथ गूँज उठा ।

‘जब तू दो वर्ष की थी ।” मरवासिंह ने कहा ।

राजा रिसामू क्रुद्धता से मौन हुईंसी होकर बोले “क्या तो हुआ ही है । तब यह निर्दिष्ट सिद्ध हो चुका है कि तुम हमारी परती हो—इस मगर की महारानी । प्रजाजनो ! बण्ड प्रमाश्रित हो चुका है । महानगर की महारानी बननेवाली मारी कस्टा बुराचारिणी ”

‘इसका मुँह कासा कर दो ।” खोर की आवाज प्रजा के समूह में से आई ।

‘ठहरो ।” राजा रिसामू ने हाथ ऊँचा उठाया ।

प्रजा में निस्तब्धता छा गई । तब राजा पश्चाताप भरे स्वर में बोले ‘ईश्वर ने प्राणी का निर्माण दोष रहित नहीं किया है । एक-एक दोष प्रत्येक प्राणी में निहित है । पर मनुष्य यदि अपने दोषों को स्वीकार करके आत्मालोचना करता रहे तो उसके हृदय का धक्का प्रभु की कृपा से दूर होता जायेगा और ज्ञान का प्रकाश उसके मानस में सूर्य की भाँति उदित होता जायेगा । पर प्रायः मनुष्य अपनी दुर्बलता और अज्ञान के अधीन होकर दुष्कर्म कर लेता है, जिससे वह पतन की चरम सीमा को पहुँच जाता है और मृत्यु का शायी होता है । तुम्हारी महारानी वास्तव में अतिशय धारण में अपने गारी-धर्म को तिसावती देकर कर्तकिनी बनी और अब मृत्यु के चक्र में गिराव और प्रभु की कृपा के अनुसार भेजी जा रही है । जीवन और जन में मरान यह कस्टा मारी हमारे नगर का कलकल पाप है अपमान है, पतन है, इसे स्वयं प्रजा अपने हाथों से दंड देकर संतुष्ट हो ।”

“कस्टा ब्यभिचारिणी दुराचारिणी ।

प्रजा क प्रत्येक घर में पूरा सम्पन्न थी । प्रजा के सम्मानित व्यक्तियों ने धाने बढ़कर बुबती को पकड़ा । बुबती भीसी ‘बड़े छोड़ दो मैं निर्दोष हूँ मैंने प्रेम किया था ।

ठाकुर धनीतसिंह अपने बानो में संभूती देकर चलते बने ।

बुबती को विमर्शनी नहीं किया गया क्योंकि वह रानी थी । लेकिन उसके मुलायम हासों में धूल भर दी गई । उसके सहर्षों सुपों की माँति दीप्त मुर पर नाभिया पोश थी गई और उसे तमाम नगर में घुमाया जाने लगा ।

नगर की पवित्रियों निवां थीर बूढ़ायां जिन्हीं ने उस बेचारी के प्रति सहामुहूति प्रगट नहीं की अपितु सभी ने उस विवश धारमा पर कोचड़ उछाला, जोड़नों की मोछारें की कस्टा थीर ब्यभिचारिणी बह-कर उन पीठित नारी के हृदय की धाम में भी की बाहुनियां दी । छोटे मोटे बच्चे तांतियां बना-बनाकर उसके पीछे भाग रहे थे ककड़ थीर तबल फेंक रहे थे ।

कितना मायिक थीर करतु रहस्य था ?

नगर के मध्य मगबान दिव वा मगिरर था । यवती जब उस मन्दिर सम्पन्न पहुँची तो एक व्यक्ति ने कहा ‘कस्टा से कहा कि वह नगर-वि महाकाम से अपने घरवालों की क्षमा माँगे ।

पर बुबती निरक्षर रही ।

सभी एक व्यक्ति ने धाकर कहा ‘यह नगर के सेष्ठ नागरिक थीर रज की भाँजा है इनका गुरुत नामन होना चाहिए, तुम नगर-देव महा-काम के सम्पन्न अपने घरवालों की स्वीकार करो । कहो कि मैं कस्टा हूँ दुराचारिणी ब्यभिचारिणी हूँ । धान मेरे घरवालों धमा करें ।”

बुबती अलमल तक थीन बढ़ी रही । उसने चलती हुई बाँधों से एक बार सबको देखा । समूह धारधर्म चकित हो गया । बुबती ने जिस बर-बरी लौटल दृष्टि से सबको देखा था उससे सब-के-सब

घाबका से रागाभिष्ट हो उठ ।

“धामा का पालन करो !” बेध नागरिक का कठोर स्वर घससु मूकता को भंग करता हुआ हुआ ।

नहीं कहेंगी । मुमती एकाएक बर्ती ।

“यह महाकाल है !”

“नहीं पत्थर है क्याहीन सत्यहीन, निर्दयी पत्थर ! मैं इसके समक्ष अपना रोना नहीं रोऊँगी । मैंने कोई अपराध नहीं किया । मैं निर्वोप हूँ ।

बेध नागरिक इस उत्तर से घबरा हो उठा । महाराज भी कभी-कभी मयकर मुँह कर बैठते हैं । सोलर्य के निर्मल सरोवर के नीचे जिने कौशिक को देखते नहीं । सोचते-समझते नहीं कि यह गरी दुन्दर बरु है पर निम्न कुटुम्ब की है, गोले ठाकुर की बटी है पुष्ट है । मैं बंजरारी को धाका देता हूँ कि जब तक यह अपने पापों को स्वीकार न कर मैं तब तक यह उसे कौड़े मारता रहूँ ।

इसके बाद बच्चों की किसकारियां धीर पुष्पों की हँसी के बीच बंजरारी ने कोमल मुमती को पीटना शुरू किया । मुमती भी बड़ी निश्चिन्त थी । मर्यादक पीड़ा भी शोकारें-सीत्कारें करती रही पर उसे महाकाल के सामने अपने अपराध को स्वीकार नहीं किया । धाम क बिच्छू वह झुकी नहीं । धाम में वह घबरा हो गई । बसि के हरे को कल करने से पूर्व जिस प्रकार सिताया-पिताया जाता है उसी प्रकार मुमती को धीर पीठने के लिये उसका उपचार करके उसे बैठ किया गया । जब उसे बेचना था गई तब उसे चौराहे पर ले जाया ।

एक व्यक्ति ने कल स्वर में कहा प्रजापति ! स्वाध्याय धीर निरपमर महाराज ने इस दुराचारिणी को बंध देने के लिये हमें पा है । धाम बंध-विभाग क अनुगार धम प्रत्येक नागरिक को यह बतार है कि वह इस मुमती के लूते मारे । प्रजा बरे धीर सहमे नहीं । कि वह अपनी महाराजी बरु भी पर यह एक साधारण बंद बाने

पोसे ठाकुर की बेटी है।”

इसके बाद मुबती के सिर पर जुते पहने सगे। जुतों की बोट बाते बाते घल में मुबती के मुँह से रगत बह उठा। वह फिर घबेठ हो गई। जमका उरबार करके उसे फिर होश में लाया गया।

खेठ नागरिक ने कहा, जब इसको मयानक मृत्यु-बंध दिया जायेगा। धरती इसे नगर के बाहर ले जाया जायगा और इसे एक पत्थर से बाँध दिया जायगा। पत्थर से बाँध दिने जाने के बाद इसे बालों से छलनी किया जायगा ताकि इसको अत्यंत पीड़ा-जनक मृत्यु हो और हमारा राजा इससे प्रसन्न हो।”

मुबती को नगर के बाहर ले जाया गया जहाँ उसे एक पत्थर से बाँधकर उस पर बाण छोड़े गए। जल्दा ही उस पर एक-एककर धातुमण करने लगे और उसके सुन्दर और कोमल तन से रक्त की धारा बह उठी।

मारी बीसती रही बगती निगबती रही और मिट्टी करण क्रन्दन करती रही पर राजा रिसामू के नगर के व्यक्तियों के बेहोशों पर समान बीच मुनवान लेन रही थी जब किसी धजात व्यक्ति को प्रसन्न करने के लिये वे इनके क्रूर और अमानवीय हो गए हैं।

माटी के प्राण उलोक जब उड़ गये तो वे निर्दयी भोज नहीं थे सीट प्राये। घोर सम्मारा छा गया।

“प्रभु! उन मन्त्रबागियों को कमी भी शमा नहीं करता है जो राजा के अत्याचार का लाभना महा करते।” एक धातुज नहीं मूँज रही थी “ओ विवेक ने नाम नहीं सिते।”

राज का गहरा लम्पाना जुतों की भों भों धातुज और बरती का क्रन्दन रोदन और एक धदुइय धातुज की रहमानवासी जोरों

निधीय का पहर।

शोध मयज के बाहर एक बायर मनुष्य जब निकल

निःशब्द करम उठाता बढ़ रहा है । उसने मय से बचने के लिये काले करम पहन रखे हैं । वह घाटा है भाध को बाहर निकालता है धीरे सससे बिपटकर धाठ-धाठ घाँघू रो पड़ता है । यह अभागा धीरे कोई नहीं है इस मुबली का प्रेमी है । इसने इस कमल की पंजुड़ियों को छहना-छहनाकर यह साहस बैबनामा या कि तू साक्षात् प्रेम है धीरे प्रेम निर्मम होता है । यह पराजय की जगह यत्न स्वीकार करता है धीरे इस प्रेमिका ने अपनी समस्त क्षुधियों का त्याग कर प्रेम को स्वीकार किया धीरे प्रेम पर बलिदान भी हो गई ।

पर यह कायर पुरुष छापी निकम्मा ! यदि इसमें भी नारी के हृदय की तरह प्रेम का प्रबल सूझन होता तो क्या यह अपनी प्रेमिका के साथ मर-मिट नहीं जाता ? अपने को समाप्त नहीं कर देता ? प्रकृति कह लड़ी—“अरुणोक्त ! अरुण अरुण है तू कला का स्तब्ध ! इसे हूँ न प्रेम को समिन्ध न कर । यह प्रेम की यह बिबल-नामन मूर्ति है बिब पर बिब नर्ब करेना धीरे तू ? तू बड़ है मानव नहीं । मानव होता तो इसके साथ अपने हृदय में बिब्रोह की स्पर्शित ज्वलित कर उत्सर्ज हो जाता । संसार कहता यह इसका प्रेमी है । धाकाध कहता—यह इसका प्रेमी है, भरती कहती—यह इसका प्रेमी है ।

“पर तू तो इसे अपवित्र करने के लिये आ गया है । पामर, नीच बुष्ट । क्यों तू ने इससे प्रेम किया ? जसा जा बिबकार है तुम्हें । “जसा जा इस पवित्र आत्मा को हूँ न तेरे स्पर्शसे यह अर्थात् हो जावेगी ”

पर उसका प्रेमी रोते-रोते इसका बाह-संस्कार कर ही देता है ।

जमाठ हो गया जा । पूर्व में सौन्दर्य का फूटता हुषा करना धीरे धीरे समस्त रिछामों में फैल रहा जा । पक्षियों की चहचहाहट धीरे नागरिकों का जमरता हुषा हस्का-हस्का कोलाहल नाटावरण में छा रहा जा ।

राजा रिछामू मजबूती नहीं पर उग्रा की समस्या में पड़े थे । वो

बाधियाँ उनके पाँवों को दबा रही थीं ।

“बतुर्खाने को बुसायो !” राजा रिवाज़ ने तग़्गिज़ बख़्शिया में ही आज्ञा दी ।

एक दासी ज़ठकर बसी गई ।

पाँच सण ऐसे ही बीत गये ।

“लम्मा बल्लवाता ? बतुर्खाने नर्दन झुकाकर सड़ा हो गया ।

“मज़ा ने हमारे ग़ायब के बारे में क्या कहा ?”

“लम्मा बल्लवाता ! सभी ने आपको ग़ायब-मिथ कहा और पुबक-समूह ने झगकी ।”

राजा रिवाज़ मुसक़रा पड़ा “पर किसी ने हमारे रूप की बर्बाती नहीं की ?

“नहीं बल्लवाता ।

“घोड़ ! घब्र मुम सभी भाग्यो ।”

समयबहाव वाली हो गया । राजा रिवाज़ ने पारमकद कीचों के सम्मुख जाकर अपना हाथ बैठा और आत्म-स्मानि से पीड़ित होकर बड़बड़ाये “मेरी नीति के मसल लोग मेरे इस मयानक रूप को एक धारा को बूझ रहे हैं ।” एक झपट गुल और आत्म-संतोष की रेखा उनकी भावना पर नाच उठी ।

घाठ

घोबूमि की बेला । गावों का बल से आघमन । राजा रिखालू का
चित निताम उद्विग्न ।

“बम्मा प्रमदाता ।” चतुरसिंह ने तिर झुकाकर कहा ।

“कहो ?”

“एक कपवती मुक्ती आपकी वर्धनाभिलाषिनी है ।”

“कौन है ?”

“मे नहीं जानता ।”

“कहाँ हैं पारि है ?”

“कह नहीं सकता ।”

“चतुरसिंह । बड़े पड़े राजा रिखालू “हमारे समक्ष कभी प्रमूरी
बात लेकर मत आया करो । आपो उसका पूरा-पूरा पता लगाकर
आओ ।”

“वह बोसती नहीं है उसने लिखकर बताया है कि वह एक सात

तक किसी से बात नहीं करेगी। यदि ससने मौन भंग किया तो वह बेटी प्रमिदाप से कोड़ी हो जावेगी।

“उसे हमारे समक्ष प्रस्तुत करो।”

“जो आज्ञा।”

चतुरसिंह बसा गया।

राजा रिसामू विचारों के संघर्ष में जंजल हो उठे। विविध नारी है, एक वर्ग का मौन धारण कर रखा है। किसी से बोलेगी नहीं वरों नहीं बोलेगी मैं प्रयास करके उसका मौन भंग करवाऊँगा। यदि वह इससे भी नहीं मानेगी तो राजा रिसामू इन हाथों से उसके रोम रोम को हथोच देगा।

चतुरसिंह ने पुनः आकर प्रमिदापन के साथ निवेदन किया कि वह आपसे तत्काल मैं मिलना चाहती है।

“रहस्यमयी!” राजा रिसामू दहकाये “उसे भेज दो।

चतुरसिंह बसा गया।

मुबनी कमरे में प्रविष्ट हुई।

राजा रिसामू उसे बिना देहे ही तप्त स्वर में बोले “हमारे दाई तुम्हारा ऐसा बूढ़ धीर बंधन नहीं बसेगा। प्रभु की महा सत्ता में घरोसा रहनेवाले राजा रिसामू के समक्ष नाम बल पाओ। प्रभु ने मुझे यह रसा है कि तुम सर्वस्व हो। तुम्हारे मत अम्म के पुण्य महान् है। यद्यपि हम किसी दुष्कर्म के लिए सज्ज हो। इसके पूर्व तुम अपना हठ छोड़कर अपने बारे में कहो। हमें यह बताना कि तुम कौन हो? राजा रिसामू ने हठात् पुबती की ओर देगा। बगले रहे एकटक, अचल निरन्तर।

पुबती ने अपनी पलकें झुका लीं।

“मैंने तुम्हें नहीं देगा है। जागरण में या स्वप्न में पर मैंने तुम्हें देना प्रवर्त है।”

पुबती स्थिर भाव से गड़ी रही। वह कुछ भी नहीं बोली। उसका मौन राजा रिसामू के लिए असह्य हो उठा। शेष से उड़नकर बोले “मैं

कहता हूँ कि आपका मौन तोड़ दो।”

मुबती ने तुरन्त समीप रखी हाथीदाँत की कलम से सिचकर बताया “मैं भूँगी हूँ पर महाराज की कृपा और दया का शंका सुनकर घरणा में धा गई हूँ। घरणागण पर दया कीजिए।

“पर तुम हो कौन?”

“आपके रूप की प्यासी। मैं आपके धान्तरिक मीनस पर विभुज हूँ। राजा रिसालू ने बोलने का प्रयास किया पर मुबती लिपटती गई “बचपन से आपके प्रताप की कहानियाँ सुनती आ रही हूँ। मगवान के आभिशाप से अब मुँह में बिह्ला नहीं है पर हृदय की बासी सदा आपके बरान के पीठ काया करती है। मैं धन्य हूँ कि आपने मुझे दर्शन दे दिए।

मुबती की आँखों में कृपणता चमक उठी।

उसके रक्तम कपोलों पर लज्जा की रेखाएँ हतनी आकुसता से खींची कि राजा रिसालू उठकर खड़े गए। फिर भी संभलकर बोले “मैंने तुम्हें देखा है कहीं देखा है, मुझे स्मरण नहीं पड़ता। और अब तुम क्या चाहती हो? राजा रिसालू बहलकरमी करने लगे।

“मैं चाहती हूँ कि आप मुझे प्रायम हों। मैं आपको प्रेम करती हूँ— परम पुनीत प्रेम” मुझे आपकी बाँहों की जरूरत है। मैं आपके बरसों की बासी बनना चाहती हूँ।

“भूँगी!” राजा रिसालू मड़क पड़े “यह कुस्ताह्य?”

राजा रिसालू ने देखा कि वह अपरिचित भूँगी मुबती बनकी पजंता से तिल भर भी नहीं काँपी। पूर्ववत् धीर-जमीर खड़ी रही।

“मैं पुछता हूँ कि तुमने यह कुस्ताह्य कैसे किया? क्या तुम्हें अपने जीवन से मोह नहीं?”

मुबती ने अत्यन्त सफरसु दृष्टि से रिसालू की ओर देखा। कस्तुरा और कूरुता का संघर्ष बड़ा विविध सपना है। राजा रिसालू की बहल करमी बढ़ गई। कड़ककर बोले “भूँगी जीवन की सुरक्षा चाहती

हो तो लोट जाओ।

“कहाँ ? मुबती ने लिखा।

“जहाँ तुम्हारा मन चाहे।

मेरे मानके गढ़ में रहना चाहती है अथवा आप मुझे मोठ के घाट सवार बीजिए।”

“पूँबी !”

‘मार बीजिए।’

राजा रिसालू का हाथ बूझते ही क्षण तलवार की मूठ पर था। तपककर उन्होंने गुंगी का गमा पकड़ा घीर इस महा में धके हो गये जब वह उनकी यवैन काटनेवासे है।

मुबती निरंक भाव से खड़ी रही।

घीर राजा रिसालू ?

उन्हें यकाबक ऐसा लगा जैसे वह दुबल हो गये है। उनके बिप्लव काटी हाथ बड़ हो गये हैं। उनका गर-मुँहों से खेलनेवाला मन उस मुबती के निरुत्तता से त्रिरोहित मोने मुख की देखकर कण्ठा से अभिभूत हो उठा है।

मानवी रक्त-पिपासु राजा रिसालू का हृदय नहरी संवेदना की क्योति है। अममगा उठ। लौह-श्रुतता की माँति उनके कठोर हाथ बीने बढ़ गये।

मुबती मोन हँसी हँस पड़ी। उसकी सजल माँति राजा रिसालू के विद्रुत-कल्प केदरे पर स्थिर हो यह मानो वे स्थिर माँति बह रही हों कि वह क्यों मया ? मार कास देरात्री है कि प्यार की स्थिति में रहकर तु मानवीयता पर कैसे आघात करता है ? प्राणी भोप में घरनी धमस्य वेतना को लोकर बगु बन जाता है। तभी ही वह धम्य प्राणी की हत्या कर मरता है। धम्यया प्राणी प्राणी को नहीं मार सकता।

राजा रिसालू पुनः जहनजदमी करने मने।

भाषेय, ओय, मानि।

“तुम कौन हो ?” एकाएक वह बिहूँक उठे ।

सुबती ने अत्यन्त नीचैयपूर्ण अपनी जिह्वा निकाल दी । कटी हुई भीम-
देलकर राजा रिसालू का धमक-करता तड़प उठा “भूमी !”

भूमी भूमी भूमी !

यह पक्ष राजा रिसालू के चारों ओर सहस्रों कंठों से प्रस्फुटित
होकर पून पड़ा ध्वनित-प्रतिध्वनित हो उठा ।

भूमी आत्मस्त होकर सीमा पर घर्षसाधित हो गई । राजा रिसालू
के ललाट पर बेचैनी के स्वेद कण समर धाये । वह प्रकोष्ठ के एक छोर
पर नेत्र मूँदकर सड़े हो गये ।

सुबती ने देखा विद्या-स्वप्न में मग्न राजा रिसालू सुखद-कल्पना में
विचरण कर रहे हैं । उनके चेहरे पर कुछ क्षण पूर्व की विकसिता
उद्दिप्तता धीरे ध्वजा थी वह इस भाँति लुप्त हो गई है जिस तरह वर्षा
के बाद कान्ही घटाएँ ।

वह बड़ी सरसता से बोले “मैं तुम्हें अपनी पड़दावतण^१ बनाऊँगा ।”

भूमी ने अपनी आत्मीकृति दे दी ।

“फिर ?”

“मैं रानी बनकर रहना चाहती हूँ ।” सुबती ने बड़े साहस से
लिखा ।

“रानी ?” चौंक पड़े रिसालू ।

सुबती ने अपनी गर्दन हिला दी ।

राजा रिसालू पुनः विचारों में मग्न जाग पड़ा । उत्पन्नात उत्सुकता
से बोले “तुम रानी बनोगी ?”

राजा रिसालू सोचने लगे । उन्हें अपनी रानी के वे धम्क याद धाये,
जिन्हें एक दिन उसने विपन्न स्वर में कहे थे “धापने कभी बर्षस में

१ विशेष रीति से रानियों के बाद सबसे अधिक सम्मानित होती
है और पड़ में ही रहती है ।

अपनी प्रतिभाय बेसी है ? इम्तान क भेय में हीतान कस्य भिनीता ।

गया रिसामू ने तड़पकर उसने कपोलों पर दो धूलि मचा दिए थे ।
रानी लपेट होकर मिर पड़ी थी पर उस प्रवस्था में भी वह महु महु रही
थी मतलब करुण धिगौना ।”

यस्यादिन अरिहीन अज्ञान आनंद की अनुभूति से राजा रिछानू का ध्यान दिव्य शक्ति की भाँति बीज हो उठा। बाबा और बाबा का महासागर उनकी एक धारा में नहर बन गया।

‘यह गुंगी है— यह वाक्य उनके अन्तःस्वत की गहृपाइयों से उठ कर उनके मानस में गंभीर रूप से छा गया जैसे यह वाक्य न होकर उनके भावी जीवन का सदाय घोष हो।

“यह यूँ ही है !” उन्होंने इस वाक्य को उसी अज्ञा और भक्ति से दोहराया जिस अज्ञा और भक्ति से एक अपराधी प्रभु के समक्ष अपने पापों की क्षमा माँगता हो।

सूबरी घनिमेघ वृष्टि से रिताम् के बेहरे के परिवर्तन को देख रही थी। उन्ना रिताम् ने सबसे एक बार देखा फिर प्रस्तर-निभ से सज्जित प्राचीर पर अपनी वृष्टि बनाकर बिचारने लगे—यह पूर्वी है, घन यह मुझ कभी भी नुकुप पिनीना दौतान नहीं बहेगी। फिर यह मुझ हार्दिक प्यार करती है मुझे कभी भी उल्लाहना नहीं देवी प्यार करेगी वास्तविक प्यार। फिर इसकी विज्ञा ?

मैं तुम्हें प्यारी पानी बनाऊँगा !” बाबू उसके बानस से जब्त बढ़ा । “श्रीमद्वर्मा तो है ही फिर ?” वह जवाबनी से बोले “मैं तुम्हें प्यारी पानी बनाऊँगा ।

सुबरी ने एक पत्रिका की भाँति जगद बरसु हाथों लिए धीरे जलस
प्रार्थना की कि वह ठाकुर जोर जी के गाँव में अपना घर बनाये । वहाँ
सबाल बड़ा हुआ है ।

रामा रिनालू ने पड़ा धीरे छात्रा की "नुरन्त गादियों पर घनाज
मारकर भज दिया जाय।" रामू ने गाँव में घनाज घाने का बड़ी खुस्य बा।

मौ

पाँच वी राजपूत टोली में रामू और बनछा के प्रति जो रोष उत्पन्न हुआ था वह दिन-ब-दिन घपना मर्चकर कम बारस्त करने लगा । राजपूत टोली का सरदार बुर्जानसिंह जो स्वयं बनछा पर मोहित और घातक था वह राजपूतों में बिप ममन करके बकसा रहा था कि वह राजपूतों के सम्मान का प्रश्न है, एक सुनार का लड़का राजपूतनी के सम प्रेम सीमा करे, वह राजपूत जाति के लिए शून्य मरने की बात है ।

बाद केही की हूँ पर राजपूतों के लिए वह असह्य था कि उनके कुटुम्ब की पयड़ी उनकी ही रीसत का एक साधारण छोटा सन्ताने । इसलिये वे सबके सब ठाकुर भोर जी के दरबार में हाजिर हुए ।

ठाकुर भोर जी अपनी बैठक में बीठे-बीठे किसी कारण से अपनी स्तुति के बोहो सुन रहे थे । उनके बाहर बाह-बाह करके बारत को प्रोत्साहित कर रहे थे ।

बुर्जानसिंह राजपूत-टोली के सहित ठाकुर भोर जी की बैठक में

गहूँ। घोर जी ने मुसकराकर उन सबका सम्मान किया और पूछा
‘क्यों दुर्जन घाज रास्ता कैसे भूल गये ?’

दुर्जन ने एक बार राजपूत टोली की ओर देखा और बोला “ठाकुर
सा ! घाज दुर्जन धकेला नहीं सारे गाँव के राजपूतों के साथ घाया है।”

“यह तो घोर भी प्रसन्नता की बात है।”

‘सिद्धि हमें बहुत कुछ है।’ दुर्जन का चेहरा उजाल हो गया।
उसके स्वर में गहरी बेवनाशी थी।

“क्या बात है दुर्जन ?” घोर जी बंसीर हँस गये। उनकी दृष्टि
दुर्जन पर स्थिर हो गई ‘साफ-साफ कहो।’

दुर्जन गहमठे-सहमन बोला मैं मरगा नहीं य सारे राजपूत
कहते हैं कि ठाकुर सा हमारी पपड़ी को उछालने पर उठाक हा गये हैं।
वह हमारी मान जान-बूझकर बटवाना चाहते हैं।”

“क्या बकते हो दुर्जन ?” ठाकुर सा एकदम लाल हो उठे—
“दुर्जन ! तुम जानते हो कि तुम किसमें बात कर रहे हो ?”
घमसाता।”

“घोर सा ने सब राजपूतों की भलाई और धृष्टाई में अपना
जीवन होमा है और तुम उन पर यह साँपन लगा रहे हो ? मरगा नहीं
पाती ?”

दुर्जन ने कहा “ठाकुर सा ! बात यह है कि बनगा बोली के छोटे
के साथ जिन के उजाले में घोर रात के धँपेरे में ”

“दुर्जन ! घाज एक घर की बाना तो हम तुम्हारी बबान निकाल
लेने। बनगा हमारी बेटी है और हम अपने गुन में भली भाँति परिचित
हैं। इसके बारे में यदि कुछ कहने धाये हो तो बाइस बने बायो। राज
पूत हाऊर घननी ही पुनी के बारे में इतनी हँस भावना रखते हो ? हम
करते हैं कि तुम्हारे पाज की सीमा या गई है और यदि ये सारे राजपूत
भी ऐसा सोचते हैं तो हम इन्हें भी धाया देने हैं कि वे बाइर-नहित
यही से प्रमाण कर में।

सारे राजपूत जोर में तमतमा कर चले गये। कुर्जन की यह रसा भी कि उसके शरीर में तो प्राण ही नहीं रहे। अपनी मानसिक प्रस्थस्वता पर अधिकार कर उसने मम-ही-मम निश्चय किया कि वह जब तक रामू जनसा का विनाश नहीं कर देता तब तक नहीं बैठेगा। ऊपर से राजपूत टोमी ने उसे धीरे मला-बुरा कहा। लेकिन सारे राजपूत जोर भी के इस व्यवहार से असंतुष्ट हो उठे। वे सीधे जोशी के घर गये और उसे टाकना ही "यदि तू अपने लड़के को काबू में नहीं रखेगा तो हम उसको कत्ल कर देंगे।

कुम्हार कुम्हारिन से पहुँच न पाये तो गधे के कान चौंभने लगे। जोशी ने हाथ जोड़कर उनसे समा माँगी और विस्वास दिलाया कि वह रामू को जमणा से नहीं मिलने देगा।

राजपूत टोमी के भले जाने के बाद जोशी रामू की माँ के पास गया। माँ जान कूट रही थी। जोशी इस तरह बैठ बैठा जैसे धब उसके पाँवों में शरीर का भार डोने की शक्ति नहीं है।

"यह राजपूत मोय क्यों पाये न ?" माँ ने घम्यमनस्क भाव से पूछा मानो उसे इस घटना से बहुत ही कम विनवस्पी है।

"मेरा चिर काटने।

"हाम माँ ऐसे बोल अपने मुँह ने मत निकालिये। पहले मुझे चुनरी धोका कर बिछा कर दीजिए।" और माँ किसी असीम शक्ति के प्रति अज्ञान हो उठी।

"मुझे चुनरी धोका कर मैं निकालूँगा या तेरा लाडला मेरी बोटी बोटी कटवाकर बीसों और बिरों को धिलवायेगा यह तू देखती ना।"

"यह आप क्या कह रहे हैं रामू के बापु ? रामू ऐसा नहीं कर सकता। वह तो गान की तरह सीधा और सीधा है।" माँ के स्वर में ममता उमड़ रही थी और आँखों में स्नेह का सागर।

तेरा साढ़ ही तो उसे बिबाड़ रहा है रामू की माँ लाख बार कहा कि उसे जमणा से न मिलने दे पर तू जो ठहरी कि बच्चा है बाप में

समझ जावेगा धमी लेलगे दो । दोनों एक-दूसरे को बहुत चाहने हैं पर धम ? धम राजपूत कहते हैं कि यदि रामू ने बनरुा से भिमना बन्द नहीं किया तो वे रामू को कत्त कर देंगे ।

‘हैं ! एक बीर के साथ मैं की जानें बिस्फारित हो गईं । पल्लुसुन्द के कागज उसके सलाह पर दलीला बन्दक घाया ।

रामू के बाप का हाथ पकड़ती हुई वह कर्माँची भरी स्वर में बोली “वह बाप क्या कह रहे हैं ?”

‘रामू की माँ ! मैं झूठ नहीं बोल रहा हूँ धमी धमी राजपूत लोग मुझे कहकर गये हैं ।’ बोबी का स्वर घात्र हो उठा “रामू की माँ ! यदि राजपूतों ने कत्त कर दिया तो ?

मैं सबका कमेजा निकालकर खा जाऊँगी रामू के बापू । यदि राजपूतों को अपनी इज्जत ऐसी ही प्यारी है तो अपनी इज्जत की लालों में बन्द करके रख लें । मेरा रामू लाला नहीं छोड़गा ।” माँ का रूप पीर हो उठा । स्वर में बिग्रेह भर उठा । रघुबंदी की भाँति गर्जती हुई बोली “मैं माँ हूँ, मेरी कीमत खाली करते इस बीचबालों को जरा और घाएगा ।”

बोबी ने उसे समझाया ‘नहीं रामू की माँ तु तो बुद्ध में भर उठी है । समझती नहीं कि इस गाँव पर राजपूत राज करते हैं । क्यों नहीं अपने बेटे को ही रोक लेती ? अपने रामू के लिए तो बनरुा से बोबी-बोबी छीरियाँ मिल आवेंगी ।”

माँ ने कहा ‘बगठा बगठा ।”

“माँ !” रामू ने घर में प्रवेश करते ही पुकारा । माँ कुछ बोले उनके पूर्व ही बोली च’ बड़ा “कहाँ मरा बा ?”

रामू हतप्रभ हो गया । प्रसन्न मरी दृष्टि से माँ की ओर देखकर बोला “यही बा गीदू के साथ बीठा-बीठा गप्पें लड़ा रहा बा ।”

‘वा बनरुा के साथ रात की अरमुट में ”

‘यह बाप बुन रहिए, देख रामू ठेरा बनरुा से बोसना राजपूतों

को भ्रष्टा नहीं सग रहा है इसलिए तू बनला से मिलना-जुलना बन्द कर दे।”

रामू कुछ देर तक सोचता रहा फिर बुझता से जाता “मैं उससे मिलना-जुलना बंद नहीं कर सकता।”

“क्या कहा ?” बोली ताब में आ गया “क्यों नहीं बन्द कर सकता ? है कौन वह ठेरी ? नाताबक कहीं का ! सबकी घोलकर पीना चाहता है !”

माँ धीरे से बोली “इसमें लाल-पीले होने की क्या बात है ? बात की बात के डग से समझावने लायक है।” उसने रामू के धिर पर हाथ फेरना शुरू किया “देख बेटा बनला से मिलना-जुलना कोई पाप नहीं है। पर इसमें उस बेचारी का ही बुरा है। भुगई^१ जाति ठहरी सोम कर्म बचनाम करेंगे धीरे फिर तू उसके बाप को भी जानता ही है। राजपूत है, वहाँ इज्जत के बचनाम होने का खयाल बठता है, वहाँ उसबारें ही निकलती हैं। यदि तू बनला को मरवाना चाहता है तो मरवा दे।

रामू का श्लेष ठका पड़ गया। बनला की मृत्यु की कल्पना से उसकी आत्मा काँप उठी। स्नेहपूरित स्वर में बोला “माँ ! मैं जतन करूँगा।”

वह छठकर जाने लगा कि बोली ने टोका समराज की भव बले कहा ? बसिये बँठक में कुछ कहनों के तनीने कहने हैं।”

रामू सम्मन-सा बँठक-घाने में आया गया।

बोली रामू की माँ से बोला “यह बनला को मोल प्रीत करता है, एक न एक दिन इसकी प्रीत रंग लाकर ही छोड़ेगी रामू की माँ।”

माँ बिड़टे हुए बोली “मोह ॥ प्रीत नहीं। धीरे बचपन की बातें भी एकदम से तो नहीं भुगई जायेंगी। धीरे-धीरे सब ठीक हो जायेगा। मैं अपने रामू के लिए बहुत ही कल्पती बहुत लाऊँगी। ऐसी कल्पती जिसे देखकर भाव दाँतों तक घँघुमी बहा ले।”

“मैं उस दिन की यादों को रचूंगा। तभी उन लोगों ने सुना कि बैठकलाने से ठक-ठक की बीबी ध्वनि आ रही है।

उस राती गीत सेठों टीलों धीर प्रकृति पर अपना ठारे स्पी फूलों का धाँधल छोड़े धाई। गीत के हनुमान जी के मन्दिर के आगे बाबा हरिराम कुछ व्यक्तियों के साथ बीबी का दम मारने लग गये थे। दम मारते समय जो उक्तियाँ बोली जाती थीं उसकी बीबी भीमी मनक कभी-कभी राम के कानों में पड़ जाती थी।

राम बनारस के ध्यान में मग्न था। उसकी धनुर स्मृति में बूझा हुआ वह स्मृति का सहारे दूर-दूर की उड़ानें भर रहा था। उन स्मृतियों के सुन्दर विस्तृत बाधों में राम खो गया था।

रात ठक रही थी।

बाबों का धाम्नीतन उनके हृदय में चुपकने लगा। ऐसा मामूली हो रहा था कि बिना बनारस को देख उसका हृदय धुट रहा है। वह उस धीर उसी मुठहा हुआ के आगे एक कृप पा उसके नीचे बैठ गया।

“धन्यता।”

राम बीबी। कौन पुकार रहा है उस ? उसने धारों धीर देखा—
धूम्रता गहरी धूम्रता निर्जगता धीर भय।

वह उस धीर धनुर के डरे के कछ ही दूर पर लड़ा होकर पादल की भाँति डरे का मिहारे लगा। उसने धारों की धाँधल-मरी दृष्टि से देखा जैसे धाँधल की महुराई का भेदते हुए उसका लक्ष्य वे धारे बनारस तक न ही आये। वह ध्याकुल हो उठा लड़ने लगा छटपटाने लगा।

भावावेश में पुकार उठा “बनारस।”

राम भुँडकर रह गया।

तब वह बड़े बड़े स्वर में डरे के पीछे धीरे-धीरे गाने लगा—

“मिहारे मिहारे में पड़े रे बनारस

ठंडी धारों धाँधल

घबके बिछड़या घे कि बनला कब मिसोना १

हई मरा भीठ कमल ठेक होता गया । देखते-देखते सारा बाटाबरन
हई से भर उठा । कलु-कलु नही बिरलन देवना मरा गीठ बा उठा ।
मनुर और हई मरे स्वर में—

झिरमिर झिरमिर मेंह पड़े की

ठही बानी बाल बनला ।

रामू इतना लम्बव हो गया कि उसे बनला का स्वर पूँचता हुआ
सुनाई पड़ा—

“छत घोंबेरी पिया

की बबरावे रे-

घोछू बली घावे

बारी घोछू बली घावे रे

स्वर सुनते ही रामू के नेत्र भर घावे । वह डेरे की ओर भाया ।

मृत्यु ने उसे रोका “क्यों रामू मेरे नुह में आ रहा है ?”

प्रेम ने कहा “बड़, घावे बड़ ।

प्रेम भीठ गया ।

रामू ने ओर से पुकारा “बनला !” और बनला उसके घासिगत
में की “रामू, रामू तू सारे दिन कहीं रहा ?”

रामू का तन और बनला का तन एकाकार हो गया और मन भी ।
वह बनला के सिर को सहवाता हुआ बोला “बनला ! धेरे पंछी के
पंछ बाँध दिये वे । वह उड़ नहीं सका साधार बा दु-सी बा ।

“अब बसो दिन अपना नहीं है वो क्या हुआ ? छत वो अपनी
ही है ।”

दोनों जाने डरे थे बहुत दूर एकान्त में था यमे । वियोग में तड़पती
हुई आत्माओं मिलकर स्वर्गीय सुख का धारद नूटने लगीं ।

१ रिमझिम रिमझिम बरपा हो रही है और छीतल बरन चल
रही है । बनला, अब के असम होकर अब निर्मल ।

“रामू !

“ही ।”

“ठाकुर सा कह रहे थे कि तू राम से न मिता कर ?”

तूने क्या कहा ?

“मैंने कहा कि मैं अपने भगवान से दूर नहीं रह सकती । तब रामू ठाकुर सा ने मुझे पीटा । कहा कि यदि तू राम से मिती तो मैं तुझे जहर दे दूँगा । मैंने कहा कि मैं जहर की बोली पर मुझे अपने देवता से दूर न करो अपना आत्मा से विलय न करो ।”

“मैं भी यही सोचता रहा बनखा कि गाँववाले अपने तन को ले ले तो कितना अच्छा हो ? तन के बाँध मन के मिलन को कौन रोक सकता है ? यह तन का आवरण ही आत्मा के मिलन का अवरोधक है । हमें इस अवरोधक से मुक्त हो जाना चाहिए ।

रामू ने यहाँ पर मनुष्य की स्थिति को समझ कर दिया है कि वह किसी भी बंधन की ओर मोड़ से अपनी धर्म से भक्त नहीं हो सकता ।”

रामू कुछ देर तक मौन रहा । बनखा की धीमे धीमे में घटक रही थी ।

“बनखा !”

बनखा ने रामू का हाथ अपने हाथ में ले लिया ।

“तू मुझ से न मिता कर मैं तुझ पर होते अत्याचार नहीं देख सकता । बनखा ! तैरा एक-एक धाँसू धीरे धीरे का मोती है । यह घरती भी इन मोतियों की व्याप नहीं सह सकती ।”

“यह घरती सहिष्णु की पराकाष्ठा है । अपरिणीत दुःख सहने की इसमें अपार शक्ति है । यदि यही अपने से कठ गई तब अपना कौन रहेगा ? यह माँ ऐसी माँ है रामू जो अपने बच्चों के अफसोस-बुरे सभी बच्चों को देकर खुद रहती है । इसलिये ही इसे बड़ी माँ कहा है ।” बनखा के धाँसू निरन्तर कह रहे थे “रामू ! मुझे रोज़ दे दिन भर हँस बनता रहा है कुछ जमाता रहा है ।

जनणा ने स्पर्श से पता लगाया कि 'रामू ने अपनी मुट्ठी में मिट्टी भर ली है। अपने मुँह को जनणा के मुँह के निकट लाते हुए वह धावेध में बोला, 'जनणा ! कभी-कभी इच्छा होती है कि तुम्हें लेकर भाग जाऊँ, दूर, बहुत दूर, भाग जाऊँ।

जनणा ने उसके मुँह पर अपना हाथ रख दिया 'ऐसा भयंकर बिचार धाव के मन में कैसे आ गया रामू ? यह चितना बड़ा संसार है न ! उतनी ही बड़ी दुष्टों की मुबारों होती है। भावनेवालों को चैन कहाँ ?'

'पर जबमा में तुम्हें कुछी नहीं देख सकता।

'बैस रख मेरे रामू ! रामू को जो स्वीकार होना पड़ी होना। हम रात में निजा करेंगे।' इतना कह जनणा बरती की पोह में सेट गई। समीप ही सेट गया रामू। पवन ने दो कोमल हृदयों पर पड़ा झपा तो निद्रा न भयंकर आरामदेह धावन में इन्हीं तुरन्त सुना लिया।

उठती हुई तारिकाधों ने होने से कहा "तीन बज गए हैं धो सुख की नीव सोनेवासी। जागो मोर का तारा उगने से पहले अपने-अपने बसेरों पर जैसे जागो धम्यवा तुम पर बुल का पहाड़ टूट पड़ेगा।

पर बुल की नीव शक्ति नहीं होती। नहरी इतनी नहरी होती है कि सोनेवासी प्राणी निर्भीक हो जाता है। इसी निद्रा की चित्त पीर बुल से मुक्त निद्रा की इस अवत का हर प्राणी असीम शक्ति से कामवा करता है।

सहनाई का स्वर बुनाई पड़ा।

स्वर में दर्द और मरुता थी। तड़प से भीपी हुई धातें चुन रामू पीर जनणा के कर्ण-कुश्रों में गुंमने लगी। संपीत ने रामू को इस तरह आप्रव किया जिस तरह सूर्य कमल की विकसित करता है, या अपने प्रबोध बालक को अपनी गर्म-गर्म धैर्यताओं से कुल-मुबार करवाती है।

रामू ने उठकर समीप छोड़ जनणा की बयाया। जनणा ने 'हँ' करके करबट बरती।

‘जनणा बाय न उठ बेक नमू कितना प्रणम भजन वा रहा है।’

“मुझे सोने दे रामू।”

‘घोर मोर हो गया तो ?’

‘मोर !’ जनणा हड़बड़ा उठी “रामू ! तुने मुझे पहले क्यों नहीं सांगवा ? यदि मोर हो जाता तो ?”

‘तो ?’

‘तो सारे बाँब में हमारी बदनामी हो जाती । राजपूत क्या स्वयं ठाकर छा तुम्हे मौत के घाट उतार देते ? जनणा का स्वर काँप रहा था ।

‘राम हँस पड़ा ।

‘तू हँसता है ?’ वह विस्मित हो गई ।

‘हँसू नहीं तो क्या करूँ ? घरी पयसी घमी तो तुने कहा था कि इस तम न मुश्किल मिल बाय तो मन मिला जाय ।

मुक्ति की कामना मैंने बोसो की एक साथ की थी । एकमी न मैं मुक्ति पाना चाहती हूँ घोर न तुम्हें पान बना चाहती हूँ ।”

‘रामू सम्झी माह छोड़ता हुआ बोला बिपाता नो ओ स्वीकार होया नही होया ।’

इसके बाद रामू घोर जनणा गाँबवालों से छिपकर हर दिन मिला करते थे ।

बस

काहुन आया ।

बासंती पवन लग्नाव मरे झोंके उस्मास से परिपूर्ण मौन इस-
पहिास की सामाजिक स्वतंत्रता । बंध्या बरती का सुहाविन बर मूमना
मिट्टी की ध्वजा का अपार प्रसन्नता में अवलना ।

एक महापरिवर्तन । रसमय और आवक परिवर्तन ।

रात का समय ।

मघानों के प्रकास और चांद क लजाले में सारा बाँव एकत्रित हो
मगा बा । भाव ठाकुर की घोर से गाँव के बहुचर्चिते 'बीर' और 'वीर'।
मादि नृत्य करेंगे । नय अवर्तिन कद पर लार्नेने और बायेगे ।

ठाकुर के लिए अन्वासन बनाया गया बा । उसके पास बनना
बैठी थी । भाव रामू भी समान बायेगा अपनी बनना को प्रसन्न करने ।

मंच पर रामू कैसरिया रंग का बोला और बसती रंग का छाटा
बाँधकर उतरा । बनना ने मत मर के भिये उस बैबा और वह कुड़ी ने

भूम उठी ।

रामू ने एक हाथ माल पर रखकर घामे के सिध घपना मुँह घम्ट
रिक्त की घोर किया । सारा समूह शांत हो गया ।

‘ताहर मिट्टी ताकर भिन’

बंद का बजना घारेम हुआ ।

घनगोत्रे की माइक टेर घासी की घमघनाहट, घीम की घबुर
घनि घोर घंजीरों की घनघनाहट ।

रामू रसिया हो गया । घमाल की पहली पड़ी उठी न ही कही—

‘‘रतन कचोस भी दुस्यो ठो कूँडे दुस्यो कसा’’

मुरख में तनै घुबली घर मोतयो की घाल

बनेक मोड़ो उबगयो

घाँरो मानटियो भरतार

रामू के चुप होठे ही सारा बन एक साब ना पछ —

‘‘घाँरो मानटियो भरतार’’

घिन्ना घिन् घिन घिन्ना घिन् घिन डक बजा । घासी की घन
घनाहट घोर घंजीरों की घनघनाहट ।

घोजाघों की बाह-बाह घोर घुरघियों की घमघनाहट । घनला के
घाल बीटी एक बँवारी सड़की ने जो बाट की घालिन भी घपने समीप
बीटी एक सड़की से बड़ा ‘‘भायसी । यहि यह मासी का घामा’’ होडा
नी में इनके साथे बकर घ्याह करती ।’’

घनया की घाँगी में रोप घोर जोड के भाव एक साथ घामे । तब

१ यह एक घुबक की घनि है की घनमेत बिबाहित नारी के
विषय में बहता है कि रतन-जड़ित कचोस घानी घ्यामे में ही घिपरा
पड़ा है और कूँडा मिट्टी का बन हुआ डेबे किनारेवाले बर्तन में पड़ा
है बतार यह गब तेरी घुबा के लिए है । हे सुयंदेव । घिरे घनि की घोर
बोड़ा बेराकर बेरी से उमना क्योंकि मेरा भरतार छोटा है । २ बजना ।

उसके होंठों पर धड़म-धरी मुसकान नाच उठी ।

रामू की धाँधें जगजा पर एक पल टिकी धीर वह नाचकर मा
उठा—

“तात्त चुप पद-पद पड़ी हुंता छड़ छड़ बाय

प्रीत पुरानी कारनै चुप चुप ककर बाय ।

समस्त साजो की एक साथ जगजन । उफ धीर छमछमों का सम्म
नित स्वर उसकी स्वर-सहरी—गारक धीर रसमयी ।

फगण धायो

फगण धायो

मनै नेर नयू न बाय बसमा

प्राप नहीं धावे डोलों समुदा जी न धेरे

ससुरा की की म्हाजे जाब धावे

बासम फगुन धायो रे”

रस की बारा प्रवाहित होती रही । लोप मल होकर मूम मूमकर
जा रहे थे । रामू का मन पसीने से तर-बतर हो गया था । जनसा ने
एक झमकी तक नहीं ली पर अचुर अपनी निद्रा को नहीं छोड़ सके ।
वह बीच में ही उठकर चले गये ।

चार बजे मृत्यु धीर गीत की समा खरम हो गई । अचुर सा पहले
ही चले गये थे इसलिये जनसा सबकी दृष्टि बचायी गाँव के छाहूकार
की इत्तेली के पीछे जा बड़ी हुई । इत्तेली के पीछे से रामू के घर का
पस्ता था । वह वहाँ से बुझा कि जनसा ने उसे पीछे से पकड़ लिया ।

वह पीक उठा ।

“कीन है ?

“मैं ।”

“जनसा बमाल कैसी रही ?” रामू उच्छ्वासित होठा हुमा
बोला ।

“बहुत ही प्यारी !” जनसा रामू के तलिकट धा गई, “रामू !

हरे भीठे झंठ धीर कप की सारे बाँव की छोरियाँ प्रसंसा कर रही थी।
 बालिन कहती थी कि तू मासी होता भोबिन कहती कि तू बोबी होता,
 सेठानी की छोकी कहती कि तू किमी सेठ का सड़का होगा कहने का
 मतलब है कि तुम्हें सब पारंग है।”

“पर एह सड़की मम्मे नहीं चाहता ?” उधने उपहास-मिश्रित स्वर
 में कहा।

“बह कीन उमने हुआ पुछा। उसकी धाँपों में पिस्मय तीन
 उठा।

“भिमकी मैं रात-दिन पूजा करता हूँ। वह भाव-विह्वल हो उठा
 “बनला संतार का क्या वह नियम है कि भववान उस भवत के प्रति
 बहुत कठोर होता है या उसकी सत्त्व धीर पवित्र हृदय से प्राप्त करता
 है।

बनला का स्वर मधुर हो उठा “सत्त्व धीर पवित्र मन में पूजा
 करनेवालों को ही भववान के वास्तविक दर्शन होते हैं। तभी धीर
 दर्पकी इस वृत्ती पर निरपेक्ष भववान की रचना करते हैं धीर निटाते
 हैं। उनका भववान उनका स्वाय होता है।

“बनला ! तू मुझ से जुदा न होना। तू है तभी तो मैं हूँ।”

बनला उसने दृष्टान् घलन हो गई। भयभीत स्वर में बोली
 “यमू ! किसी के पगों की माहट !”

“कुनन होगा वह कुछ कभी हवें मारकर ही रहेगा।”

“घण्टा में बनी” बनला मुचली-डिली बनी गई।

जब वह घाने डरे पर पहुँची तो कुनन ठाकुर सा के सम्मुख हाथ
 जोड़कर बिनती कर रहा था “माई-बाप ! मैं झूठ नहीं बोल रहा हूँ।
 मैंने अपनी इन बातों से देखा कि वह तुम्हारे का बच्चा बनला की
 अपनी बाहुओं में लपेटे भववान भववान बिस्मा रहा है धीर बनला
 उसके तन में सब तरह पकावार हो रही है कि राम ही उनका विराट
 बन है, निर्मातृ-भाव है।”

‘बुर्जन्तसिंह !’ ठाकुर ने बेताबनी की ‘यदि ऐसा कहा झूठ निकला तो ?’

‘घाय जो भी बंद होने में जोड़ना !’

‘बसो !’

ठाकुर और बुर्जन्तसिंह दोनों रात के पहरे धँसेरे को पार करते हुए खसी बगह पर घाय जहाँ बोड़ी देर पहले बरा बीज को अपने धंफ में समेटकर आरामसात करना चाहती थी। ससीम बसीम के बिपट रूप में अपने प्रकिरण अस्तित्व को एकाकार करना चाहता था।

ठाकुर ने कहा ‘बुर्जन्तसिंह, कहाँ हैं वे ?’

बुर्जन्तसिंह ने धँसेरे में देखने का असफल प्रयत्न किया। दृष्टि भी बौकाई पर फल कुछ नहीं निकला। कपिता हुआ बोला ‘ठाकुर सा ! यहीं पर यहीं पर मैंने अपनी आँखों से देखा था।’

‘बकता है !’ ठाकुर के ठन-बदन में घाय लप गई। खून आँखों में छतर घाया ‘तू हमारी मान-मर्यादा को कर्मकित करना चाहता है। दृष्ट हम तेरी गर्दन बड़ से अलग कर देंगे बस कहाँ है तमू बकसा ?’

बुर्जन्तसिंह ने झपटकर ठाकुर के पाँव पकड़ लिये। अमा-माचना करते हुए निङ्गुनिया ‘मैं झूठ नहीं बोलता ठाकुर सा। मैंने अपनी आँखों से देखा है उन दोनों को।’

‘छिड़ क्या वे इस बरती में समा गये ?’ ठाकुर ने बुजम के बात पकड़कर लीचे ‘कम हम समस्त राजपुतों के सामने कहेंगे कि इस जैसे पापी व्यक्ति ही गले भिगाखों की दम्भत बिपाकृते हैं।’

‘मेरा नाम ही खराब है। कर्म ही बुरे हैं नहीं तो आँखों ऐसी झूठ कैसे हो सकती है ?’

‘हजारनाश कहीं का !’ ठाकुर पुनः बेरे की ओर चले।

बुर्जन्तसिंह ऐसा रह गया। उसने एक बार बराती पर हाथ फेरकर अपने घाय से कहा ‘नहीं ! तू भी मुझसे कम बरती है। एक तो मुनार

वा जाया हमारी माक सेकर वा रहा है और हमरी तू भी उसका साथ दे रही है ?”

दुर्जनसिंह की यह महसूस हुआ कि यह पृथ्वी और प्रकृति आनंद के महासागर में गिरोहित होकर कह रही हैं—“प्रेम धर्मज्ञ और महान् है । निष्कण्ट और निर्द्वन्द्व है । कोई भी प्राणी प्रेम के विपुल सागर में बासना के बुलबुले उठाने की चेष्टा करेगा उसका विराज का प्रत्येक कलु विरोध करेगा ।

दुर्जन ने जोश में सङ्कपकर कहा “प्रेम कैसे संकल होया ?”

रथारह

पोपी बत्ती गई पर बम्बू के प्रस्तर में अपनी मधुर स्मृति और विविध स्वभाव का वहरा प्रभाव छोड़ गई। बम्बू गंभीर और मौन रहने लगा। उसके मानस-मन्दिर से न जाने कौपी गोपी का चित्र क्यों नहीं हट रहा था। प्रस्तराल के मुने और बहरे कोने से एक प्रश्न रह-रह सदा उठा करता था कि बाहिर वह कौन थी ? वह क्यों यहाँ आई थी ? उसने उस पर अपने स्वभाव का इतना गहरा प्रभाव कैसे छोड़ दिया ? पर बम्बू केवल प्रश्नों के संसार में खलझकर रह जाता था। संसार में क्षुब्ध विस्तता था। निराकार ब्रह्मने जिस प्रकार बोझी रेर में पककर टूट जाती है, उसी प्रकार बम्बू का चिन्तनधीन और सर्वर मस्तिष्क बक जाता था।

प्रश्न बचकानी राजनीति की तरह चलझता जा रहा था।

कई दिन से वह बेचैन था।

एकाएक उसे किन्हीं घर के टापों की आहूट गुनाई पड़ी। उसने

मजब होकर देमा—एक पत्थरपान लीम्य किन्तु उदास मूर्ति परस्परक हुई
मासी पत्नी या रही है ।

बहु मर के पास की पगडंडी की धीर से उसके पास आया ।

परवापोही ने बोड़े की रोवकर पूछा मैंमा क्या आप मुझे बता
सकते हैं कि एक सुन्दर लंबी युवती इधर से कभी गुजरती थी ?

“क्यों ?”

“यह मैं आपको कभी नहीं बता सकता क्योंकि मुझे उस दुष्टा की
बन्दी बनाना है ।”

“हाँ वह पार्स की धीर मुझे भी मूल-मूर्तिया के बक में हासकर
कसी गई । भीमान की क्या आप उस युवती के बारे में मुझे कुछ बताने
का कष्ट करेंगे । उतरिये न धन्य मे आप बहुत बक नये हैं आइय
आइये न ।”

परवापोही मन्त्री लौंघ भीषकर उत्तर दिया ।

मुठहा क्या मुठों का पर निर्जन धीर मूल्य !

एक धीर बम्बू राम धीर बनला बड़ी शांति से बैठे थे ।

दूसरी धीर भावन्तुक विद्वक संकट मोचन वालकी मारकर बिचार
मज्य था ।

बम्बू ने मुरज की धीर देकर कहा “यह बरसी मुरज को छुपाई
तो मजा था ज्ञाय ।”

बनला ने उद्दाम-विभिन्न स्वर में कहा “क्यों बम्बू, यदि इन्
अपमान प्रान्त हीकर कृष्ण करने लग लीं ? मैं समझती हूँ कि यह
बागती हुई धरती भी हूँ पड़े ।”

राम ने भी मुसकराकर कहा “कल्पना यदि सुगर है स्वप्न रूप
होना चाहिए ।”

विद्वक ने कहा “आज यह धानी-मपनी धीरें बन्द कर सीधिए,
स्वप्न रूप हो जायेंगा कल्पना गावार हो जायगी ।”

सब हँस पड़े ।

प्रसन्नता के तार भँकल हो उठे । उस भँकार को बीच में ही रोकते हुए विह्वल होकर बोला "बहू रूंगी धर्मपुर की दुष्ट राजकमारी है । जब धर्मपुर की प्रजा उसके निरंकुश शासन और मर्यादा की पराक्राम्य पर विद्रोह करना चाह रही थी तब एक विचित्र घटना घटित हो गई ।"

विह्वल होकर कहकर चुप हो गया ।

उपस्थिति की उत्सुकता बढ़ गई ।

जनरल ने सलाहशील से पूछा "क्या ?"

विह्वल ने साहस छोड़कर कहा "सम्झी कहानी है सुमाझी ठाकुर तक बहू दुष्टा मुझसे मरवा की भाँति बहुत बुरा बनी जायेगी । और मैं चाहता हूँ कि उसे बमिनी बनाकर उस प्रजा को सीप बूँ जिस प्रजा के लह से उसने अपने कपोलों की परछाई को स्थिर रखा है ।

जम्हू ने प्रसन्न-मरी दृष्टि से विह्वल की ओर देखा "बहू भापको नहीं मिलेगी । पंक सवे पकी की तरह बहू बढ़ती है । भापको उसे पकड़ने के लिए धम्म साधन ही भयानक होंगे । क्षाति से उन साधनों पर विचार करना होगा । न जान सब तक बहू कहीं पहुँच गई है ?

"फिर भापने सभी भोजन भी नहीं किया है । कल प्रभात होते-होते भाप बसे जाइएगा ।" रामू ने विनीत स्वर में कहा ।

जनरल ने संजीर होकर कहा "गरी इसकी दुष्ट और पापाबी हो सकती है, मैं नहीं मानती । बहू तो सब प्रसमयी रही है और भाप ?" मैं उसके चरित्र के बारे में पुरा न जाने भापको नहीं जाने हुनी ।"

"जाने की मेरी भी इच्छा नहीं है । बहुत बक गया हूँ । फिर भी मामला चाहता हूँ । कभी-कभी मनुष्य कर्तव्य के पीछे प्रतिष्ठा ॥ भावता है हालांकि उसका हृदय उस कर्तव्य का पल भर भी साध नहीं देता है ।"

"फिर भाप आज भर के लिए रुक ही जाइये ।" जनरल ने साहस कहा । जम्हू कुछ में डूबा हुआ बड़बड़ाया । क्या बातें हो रही हैं, इस भविष्य ।

संछट मोचन ने अपने गिर का मुकुट उतारकर एक धीर रसा
धीर भावस्थ होकर बोला 'धनंजयपुर नौ कया—

राजा रणमर्दन ने गृध्रावस्था में एक धूमती से ब्याह किया। महा
धामारय ने इस विवाह का कड़ा विरोध किया पर रणमर्दन अपने विचार
पर दृढ़ रहे।

नई रानी मेनका ने राजमाताओं में प्रथम कदम रखा ।

रएमेरिडी मनाका घोर शान्ति के स्वागत है राजप्रासाद की अपूर्व
गोमा हो गई।

दीर्घों की जगमगाती चंचलियाँ और नृत्यियों के शरत्कृत्य में प्रानाद
इस की समा जान पड़ा।

उत्सव की गमाछि के गन्नात मद्दाराजा ने बड़ी रानी सोनईबर को धारा दी कि वह गई रानी का स्वागत-सिमक ५०० । पर बड़ी रानी के तन में वास्तविक धार्य रत्न प्रबहिउ हो रहा पा अतः वह गई रानी का स्वागत गया रुपय करने के लिए भी शशी नहीं हुई । परिणाम—दोनों रानियाँ एक कुमरे की पुत्र हो गई ।

बड़ी रानी का कहना था कि नई रानी का पितामह उसके राज्य का एक साधारण सरदार था। महाराजा ने यह विवाह करके उसका धर्म उसके शासन का धर्ममान किया है।

घोर नई रानी भौंहें छानकर ममूर हँसी हँसकर कहती थी 'कृम परमेश्वर मानवी-रक्त से घबिक महत्त्वपूर्ण नहीं है । मेरे पिता भी मे महापद्म की अभ्यर्चना नहीं की कि धारा मेरी पुत्री का हाथ धामिये बल्कि स्वयं महापद्म भी मे मेरे रूप पर मुग्ध होकर यह प्रस्ताव दिया था । बड़ी रानी को चाहिए कि यह अपनी दाता का धनसौजन्य कर नष्ट न ठगवे । बड़ी रानी को चाहिए कि इनता जीवन बाधोद्य का बाधरूप छोड़कर उनही जिम्मेरी को मनबता हुआ धर्माराज बना दे ?”

इस तरह काव्य-मुख शिव प्रतिदिन तीव्रतर होता गया। राधा स्नान करने बाद के सोमरस में डूबरकर नई रानी के कुम्भन शङ्खुष तन के पीछे

इस तरह निपटे रहते थे जिस तरह साध के चारों ओर सत्ता ।

बिबस होकर बड़ी रानी ने महामंत्री तीव्रबुद्धि से सौंठ-सांठ करनी शुरू की । तीव्रबुद्धि महामंत्री होकर बहुत ही महत्वाकांक्षी था । वह मंत्र बुद्धि का पर उसकी आज्ञा प्रयत्नपूर्वक राज्य-सत्ता और गृह-राज्य की सपटों में एक नए कर्मकांड को चिलते देखने लगी । उसने बड़ी रानी के जोर और ज़ोर से सत्ता के पाँवों को कमजोर करने की सोची ।

एक दिन एकान्त में बड़ी रानी ने तीव्रबुद्धि को बुलाकर सहमते हुए कहा "मैं चाहती हूँ कि मेनका का सीटिया-आह अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच चुका है, आज महाराज ने उत्सव का आयोजन किया है उस उत्सव में हमें निमन्त्रण एक नहीं दिया गया । हम चाहते हैं कि उत्सव-यमन करती हुई छोटी रानी का काम तमाम कर दिया जाय । यह कार्य इतनी सज्जता से किया जाय कि हमारा और आपका एक किसे भी न हो । बड़ी रानी की आँखों में प्रतिहिता की आग बहक उठी । अपने फूल उठे और उसकी बड़ी-बड़ी आँखों में कम्पन-सा आ गया । वह अपने महल में बहसकर्म कराने लगी ।

तीव्रबुद्धि ने भयभीत स्वर में निवेदन किया "मैं ऐसा कार्य करने में असमर्थ हूँ, महाराज का आज्ञा पुर की ज्वाला रियासत में प्रकाश की आग बना देगी । महाराज के बिहोही सरकार इस बिबस परिस्थिति का सामना बैठकर सिद्धान्त बदलने की कोशिश करेंगे ।

"कुछ भी हो हमें प्रतिघोष लेना है महामंत्री ?

"परिणाम ?"

"हम परिणाम से नहीं डरते ।"

"फिर ?" तीव्रबुद्धि कहते-कहते चुप हो गया । उसकी चुप्पी रहस्यमयी थी ।

"मैं आपको आज से धरबा दूँगा । उसने निर्भय होकर कहा ।

"मैं तुम्हें आमायास कर दूँगी ।"

"मैं पन-मोक्ष नहीं हूँ ।"

“फिर ?”

“तीव्रबुद्धि अपना पुरस्कार स्वयं ही लेना !” कहकर वह बसने लगा फिर कहा “पर यह सत्यव किन लिये हो रहा है ?”

“छोटी रानी गर्भवती हो गई है। बड़ी रानी ने असफल रहा। उसकी माँओं में गुला बसक गयी।

धीर तीव्रबुद्धि उसकी धीर बिना बेल ही बाहर बसा गया। उसके बाहर जाते ही बड़ी रानी ने कमरुमें का चपक उठाया धीर विद्रोह की पुनर्जीवनी बोलिया बाह से लपट होकर मध्ये में लग्न होने लगी।

विद्रुपक ने सीधे बगैर लेकर पुन कहना प्रारम्भ दिया—

“तीव्रबुद्धि वस्त्रास-मायार में नैर रडा था। बड़ी रानी के साथ वद्वयन करके यह अभी अभी आया ही था। अभी ठीक उसने अपने बदन भी पूर्ण रूप है नहीं उतारे थे कि छोटी रानी के विश्वासही मीकर विद्र ने अपने प्रायमन को सूचना थी।

तीव्रबुद्धि सज्ज हो गया।

मीर ने विद्र को देखने लगा। विद्र ने समिवादन दिया “यहामंभी की की वय। छोटी रानी ने आपको इसी समय बाद किया है।”

तीव्रबुद्धि के पाँवों की अभीन विमृशक गई। सम्राट पर स्वेद-बल उमर आये। सममता हुआ बोला “उन्से प्रार्थना करना कि सेवक यावही मेरा मैं अभी उद्विग्न हो रहा है।”

विद्र पुन नीर आया।

तीव्रबुद्धि रास्ते भर बानान रहा। प्रायश्चित्तों का अज्ञानपन रह रह कर उन ऊँच बानानाओं के मागर में फँक रहा था। वह साथ बचने की चेष्टा करता था उमने मन का जोर लेने उसकी गपरात इच्छियों को केवल एक धीर ही मेन्त्रीभूष कर रहा था कि छोटी रानी उसके रहस्य को जान गई है धीर वह।

छोटी रानी के पितास वय में फुलों की रंघ आ रही थी। एक धीर

महाराज के पाँव से अचानक मोच लाया स्वर्ण-चपक सुझका पड़ा था। एक बाँधी का टूटा हुआ हार इस बात का प्रतीक था कि भासव की उत्तेजना में मरान्ध बर्षमर्षन ने उस बाँधी से जबर उत्तेजना से परिपूर्ण कचेष्टाएँ की थीं।

छोटी रानी ने तीव्रबुद्धि पर अपनी तीक्ष्ण दृष्टि फेंकी। वह तिर से पाँव तक काँप उठा।

“काँप क्यों रहे हैं महामंत्री जी? ‘मात्र धाप साधारण शिष्टाचार को भी भूल गये! हृदय में ऐसी चंचलता कौन-सी है?”

तीव्रबुद्धि को ऐसा लगा जैसे छोटी रानी उसके समस्त रहस्यों को जान गई हैं। उसकी दशा दयनीय हो गई।

‘तो मात्र तुम मुझे कत्त कर लेनासे हो? रानी का शून्य कक्ष उसके कर्कश धीर ब्रूहा-विकृत स्वर से काँप उठा ‘मूर्ख महामंत्री तुम्हारा नाम तीव्रबुद्धि की बजाय क्षुब्धबुद्धि होता तो अत्यन्त श्रेयस्कर धीर उपमुक्त होता।” वह उठकर तीव्रबुद्धि के समीप घा गई। उसकी पुठबिचों में जड़ता थी धीर उस जड़ता में हिंसा की बहुरीसी सपटें ‘तुम मुझे संभ्य-वेना कत्त करोगे धीर मैं तुम्हें घमी बन्दी कराती हूँ।”

छोटी रानी के मुख से इतना शब्द उच्चारित हुआ कि तीव्रबुद्धि ने अपनी उत्तेजना को संभाला।

“मैं ” वह हठात् बोला कि विप्र की तलवार की नोक ठीक उसकी गर्दन पर घा टिकी।

‘जरा भी हिंसे तो गर्दन बड़ ”

शेष में ही छोटी रानी मुसकराकर बोली, ‘यह बेचार मुझे क्या मारेगा विप्र? छोड़ दो इसे धीर समझ दो कि भविष्य में अधिक सबम होकर पर्यन बगावे। हत्या करना मेरा कार्य नहीं है। मैं किसी को नहीं मरवा सकती। यही तो मेरे हृदय की कुर्वनता है विप्र।”

तीव्रबुद्धि मुक्त कर दिया गया।

इस मुक्ति से तीव्रबुद्धि के बीरत्व को जैसा चुनौती दे दी। वह प्रपन्न की धार में जल उठा।

उसने यह निश्चय कर लिया कि वह छोटी रानी से प्रत्यक्ष प्रतिपक्ष लेगा।

वह प्रपन्न पर धार की धीर यह सोचने लगा कि वह किन तरह छोटे प्रपन्न के प्राणों से लड़े ?

उसके समक्ष तीन वस्तुएँ पड़ी थीं।

एक प्याले में बिना एक हीरे की धूपटी और एक मजदूर का लकड़ा।

तीन वस्तुएँ, विभिन्न उपाय की संघर्ष।

प्रतिपक्ष उसने प्रपन्न की बाँधी मजदूरिका की पकड़।

“बीरत्व की धीर !”

मजदूरिका राजपुत्राने का भाई बड़े बाँधी थी। इसलिये उसका प्रपन्न स्वामीय बाँधी थी। प्रपन्न मुक्त की धीर चुनौती था। रंग गोला की धीर प्रपन्न-भाऊ भी प्रपन्न रबिकर लकड़े थे। मजदूरिका की धीर प्रपन्न पर प्रपन्नाने का बहुत प्रभाव था।

प्रपन्न उसने रंग-बिरंगी लोहे के धार की चुनौती लई। प्रपन्न की धीर रंगी थी। उसके धार का प्रपन्न की धीर के कारण प्रपन्न था। वह चुनौती थी इसलिये उसके धार पर धीर नहीं था। प्रपन्न का धीर प्रपन्न की धीर प्रपन्नाने से धीर हुई थी। प्रपन्न धीर प्रपन्न के धारों की धीर धारियाँ थीं और प्रपन्न पर प्रपन्न लकड़ा था।

“मजदूरिका !” तीव्रबुद्धि ने प्रपन्न की धीर धीर धीर उठा दी। वह “प्रपन्न प्रपन्न स्वामी प्रपन्न धीर में प्रपन्न है। प्रपन्न प्रपन्न प्रपन्न की धीर प्रपन्न है।”

मधुसिका ने मन नयन करके बीमे स्वर में कहा 'भाजा कीबिए, भल्लाता ।'

'तुम यह भसी माँति जागती हो कि राज्य गृह में पारस्परिक द्वेषता की घाम तीव्र गति से बल चुकी है । दोनों राज्यों की बचन पहुँचे-पहुँचे एक दूसरे को नीचा दिखाने में लगी हुई थी और अब एक दूसरे के प्राणों की मूखी हो गई है । अबसर अबका है । यदि हम इससे लाभ उठावें तो धर्मगपुर का सिंहासन तुम्हारे स्वामी का हो सकता है ।

'आत्यर्थ ?'

'तुम किसी भी तरह छोटी राजी को समाप्त कर दो ।'

'क्या ? मधुसिका का पहर स्याह हो गया । नयनों में जड़ता आ गई । मयागक बिचार सुनकर मधुसिका बिभूक हो गई ।

'क्या सोच रही हो ?

'भल्लाता ?'

'समता है कि तुम किसी निष्पक्ष द्विविधा में पड़ गई हो ?

'हाँ भल्लाता आप जानते हैं कि छोटी राजी कितनी बुरा है ?

उसकी मारना कठिन ही नहीं असम्भव है ।

'मधुसिका सुनता था कि बाँधिया अपने स्वाधियों के लिए प्राण तक बिसर्जन कर देती है और तुम ?

'भल्लाता मैं इसे करने में तर्जना असमर्थ हूँ ।'

'तुम्हारे मुँह से आज हम यह क्या सुन रहे हैं ?'

बात यह है कि छोटी राजी की प्रतिभिया से हमारा सर्वनाश होना ।

आप समझते हैं कि इस मयागक पदार्थ के बारे में छोटी राजी ने न मूक कर बीठी है ! मेरी समझ में अभी उसके परितोष में कैकयी की एका प्रिया होती । जिस तरह कैकयी की सारी क्षति भारत को सिंहासन दिखाने में लगी हुई थी और उसी प्रकार अभी छोटी राजी का ध्यान बड़ी राजी को येन केन प्रकारेण पराजय होने में गया होगा ।'

तीनबुद्धि कुछ खण बहुतकमयी करने गया ।

मधुमिका ने समीप पहुँच चुम्बुम्बे के प्याले को बोझान की की मोर बढ़ाते हुए मधुर स्वर में कहा "सम्पन्नता की रानियों के भगड़े में सहपायियों का भाग्य-तारा जो ही परिणामों से टकरा सकता है या वो के लक्ष्मीय बन जाते हैं खसबा के सदा-सदा के लिए मृत्यु की गीद में मुना रिग जाते हैं ।"

"मधुमिका हमने तुम्हें परिणाम नुस्खे के लिए नहीं बुलाया है । हमने सिर्फ बुलाया है कि तुम छोटी रानी को किसी की तरह मार सकती हो कि नहीं ?"

"मैं नहीं मार सकती ।

"तुम्हें प्रयत्न करना होगा ।"

कर्मवी पर यह

हम बोरी के मुख ने यह धीर बहु धार मुनने के पानी नहीं है ।"

"बाँधी सागर है ।"

"मधुमिका ।"

मधुमिका कुछ खड़ी रही ।

"जाओ यहाँ से धीर प्रयत्न करो कि तुम्हें सफलता मिले ।"

मधुमिका कभी नहीं ।

तीनबुद्धि विचारने लगा—'एक नहीं जो बातों पर एक साथ दिखाने में कोई निर्णय नहीं हो पा रहा है । इन विरहीन उमरी व्यथा बढ़नी जा रही थी ।

बहुमना धनवाना धीर बहुतकमयी ।

"रानी ने मुझे जीवन-दान दिया ?" वह हल्का बढ़नडाया । उसकी बहुतकमयी एक पक्ष । वह कुछ व्यतिरिक्त-मा हुआ । तीनों ने मुरा गरबनार पर धर्म-लापित होते हुए उमर चुम्बुम्बे का एक पेट धर्म

कंठ से उतारा ।

‘छोटी रानी ने मुझे जीवन-दान क्यों दिया ?’ उसकी समझ बेतना एक इसी मान्य पर केन्द्रीभूत हो गई । वह उस धबधब प्रश्न में साकार हम डूबने लगा । उसकी दृष्टि प्रस्तर की प्राचीरों पर इस तरह बम बर्ष की जैसे वह समझ रहा था कि यही किसी चमत्कार की भाँति उसके इस प्रश्न का उत्तर इस प्राचीर पर लिखित हो जायेगा ।

‘जीवन-दान !’ समझा केवल इसलिए कि वह मुझे इतना असमर्थ और आचार समझती है कि मैं मुक्त होने पर भी कुछ नहीं कर सकूँगा । मैं इतना शक्तिहीन हूँ कि मैं जीवन होते हुए भी छोटी रानी का हाथ भी बाँका नहीं कर सकता ? पर उसने मुझे क्या समझ रखा है, मैं उसका समूझ नाश कर दूँगा ।

दीनदुष्टि ने निजि सेवक द्वारा प्रधान मन्त्र-संवाक्य की महोधि को बुझाया ।

वीर महोधि ने दीवान की आज्ञा मानना अपना कर्तव्य समझा और जब दीवान ने अपना निश्चय महोधि के समक्ष रखा तब महोधि ने उपहास भरी हँसी हँसकर कहा ‘आपको वह जानकर अत्यन्त दुःख होगा कि छोटी रानी ने अत्यन्त पूर्व समस्त मन्त्र-संवाक्य अपने अधिकारों के अन्तर्गत ले लिया है । मैं तो नाममात्र का सेनापति हूँ ।’

‘और इतना अपमानित और शक्तिहीन होने के परचाह भी आप उस पद पर प्रतिष्ठित हैं ?’

‘क्या करूँ ?’

‘इस सिंहासन को उलट नहीं देते ?’

‘मैं अधिकारहीन होकर बेधड़ोही नहीं बन सकता । दूबों से की गई अपनी सेवाओं पर पानी नहीं फेर सकता । इतिहास के पृष्ठों पर अपनी झोही व्यक्तित्व की क्या अपमानजनित धब्बों में नहीं सिझाना चाहता । मेरा विश्वास है कि यदि मैं सच्चा हूँ यदि मैंने सच्चाई के साथ राज्य-परिचार की सेवा की है तो मैं कब पुनः अपने पद पर

घासीन हो जाऊँगा ।”

तीरबुद्धि साँसक परबासाप-भरी हुई ही हँस पड़ा । उसबार ये हीबार पर टंके घर के बैहरे पर इसकी जोर करके बोला ‘सत्ता इस तरह अधिकार में नहीं आती ? मृतप्राय होने पर भी सत्ता सत्ता कहलाती है । रात्र को सदा उससे सावधान रहना पड़ता है । घाय यदि घपना लीया हुआ सम्मान पुनः प्राप्त करना चाहते हैं तो बिद्रोह कीजिए । उस बल धोर कीमत से छोटी रानी को पचास कीजिए ।”

महोब ने लम्बी उरबाँध छोड़कर दूरसे हँस खर में कहा ‘मैं ऐसा करने में सर्वथा असमर्थ हूँ । घाय मुझे दया करें ।”

बह जाने को उठन हुआ ।

तीरबुद्धि ने उसे रोका ‘मुनो हमारे मुंहारे मध्य की बाँत बाहर नहीं जानी चाहिए, नहीं तो’

‘घाय निश्चय चले ।”

उसके जाने जाने न था तीरबुद्धि धोर बाबाप हो गया । उसे ऐसा लगा कि प्रहृति का प्रवाह उसके विरोंध है । जो व्यक्ति उसके एक एक संकेत पर प्राण लुटाकर कर दे, ये ये भी घाय उससे बचाने लगे हैं ।

‘मेबिन मैं भी तीरबुद्धि हूँ । जो टान लिया है उसे पूरा करके ही क्षम लूँगा । या घपना बिनाग कर लूँगा घपना रात्र का कर दूँगा ।”

बह बड़ी रानी के यहाँ पहुँचा ।

बड़ी रानी बिनिन-मी तमिल घमण्डा में बड़ी थी । दो-तीन परिचर-रिचारे बान्नी की हाँडी के पंगे रख रही थी । रानी में पननी मतमत की घोनी बहन रंगो की धोर बाँवनी जिसमे उनकी कपूर का घाघा बाग दियाई देना था । मधे में बमकनी हुई बिनी की धोर मने में लोने की जंजीर । उसमें पावनी का बिच लगा हुआ था । बाजूलों में नाहन-मुक होने के मुहर बह । घड़नियों में बई प्रहार की लड़कियाँ । एक बंदूक तो माउ बड़ाई हीरो की थी ।

तीव्रबुद्धि ने बाँधी द्वारा अपने आग्रह की सूचना दी। बाँधी पुनः
प्राकर तीव्रबुद्धि को सम्मानसहित बड़ी रानी के पास ले गई।

रानी ने उसे बैठने का संकेत किया।

तीव्रबुद्धि ने बैठते ही बीरे से कहा 'आपका स्वास्थ्य ?'

'जब अच्छा है पर मन बहुत ही चञ्चल है। बीजानकी छोटी रानी
ने सबको मोहित कर लिया। वह स्त्री न होकर मोहिनी बन गई।
अपने मंत्रों से सबको बाँध रही है। छोटे से लेकर बड़ा अधिकारी उसकी
आज्ञा के बिना चलने को तैयार नहीं है। पीर हम अस्तित्व बिहीन
होकर चल नहीं सकते। अधिकार की शूटा हमें भी सताती है।'

तीव्रबुद्धि निराशा से बोला "हम निरुपाय हैं महारानी सा। मात्र
उत्सव ही रहा है। मृत्यु संवीर के सरोवर में जब सारा प्रासाद मोतें
सजा रहा है तब हम इस धम्वरे में अपने दुर्भाग्य का कोष रहे हैं ?

'मात्र की बात है।

'नहीं महारानी सा हमें कुछ करना अवश्य होना।'

'हम कुछ भी नहीं कर सकते। न छोटी रानी को मार सकते और
न ही हम सत्ता पुनः हाथी सकते हैं एक उपाय और है ?'

'क्या ? तीव्रबुद्धि ने उत्साह से पूछा :

'बहिर्जमके लड़की हो जाय और मेरे लड़का "

'ऐसा भी हो सकता है। तीव्रबुद्धि के शब्द-श्रवण में आवाज़ फूट
गई थी। उसकी प्रविमा से ऐसा मन रहा था कि जैसे उसने हृदय कोई
हथ पा लिया है।

'कैसे हो सकता है ?' व्यथना से बड़ी रानी ने पूछा।

'यह भी हो सकता है कि उसका गर्भ ही मिरा दिया जाय।
महारानी मा छोटी रानी पुनः नि सम्मान को आ सकती है।'

'यदि ऐसा संभव है तो हमें की-अपमानित नहीं कर सकते।
तीव्रबुद्धि तुम इसका प्रवर्ण करो।'

‘मैं कम बात ही आपको पूरी जानकारी दूँगा। तीखबुद्धि बता गया।

उत्सव के बीच में ही ‘विश्व’ ने छोटी रानी को यह समाचार सुनाया कि घसी घसी घपनी बोरी गोधूमि ने पाकर निवेदन किया है कि बड़ी रानी आपकी सम्मान को पूरा होने में पूर्व ही समाप्त करना चाहती है।

छोटी रानी ने भीम से कहा “उत्सव का समाप्त होने को फिर इस तरह विचार किया जायेगा। गोधूमि को बड़ी घमास दो कि हर छोटी से-छोटी बात को ध्यान में लूने की पीर हमें मुश्किल करती रहे।”

विश्व जमा गया। उत्सव में राजस्थान की डोलनियाँ घाई हुई थी। राजस्थान के समस्त लोक-गीतों का रसास्वादन जन के लिए सभी सामन्त कीर सरदार उपस्थित थे। एक बीच में झपनी हुई का उठी—

बस बारन बीच बसके जी साथ।”

दूगरी डोलन में झुंझ नृत्य का एक चारर निजामकर घावे की पंक्ति को पाकर बड़ावा—

गोम गड़ियो निच लावे जी प्यारा।

दोनों का लम्बिमित्र स्वर मूँच उठ—

“बहू है कुमार बड़े रनिया।”

दोहर मूँच वाली घाई एक साथ बज उठी।

बानाबगर में प्रमत्तता का सागर सहसा रुड़ा था। जगमगति पर मुग्ध-सी नृत्य-मगीन का घामग्र म रही थी। छोटी रानी प्रहृष्ट बरी दृष्टि से बीच महेंधि को देग रही थी। जमकी दृष्टि प्रदिमा में स्पष्ट प्रनीत हा रहा था जब वह बहू रुड़ी थी—देता मेरा बज दीवान कीर बड़ी रानी दोनों हाथ-पर-हाथ रण बैठे रहूँगे।

धीरे बहोधि न मुनकरा कर दिया जैसे वह बहू रहा है कि रंझिया रोबनी कीर है खवाई जीमताई है।

१ रोनेवाले रोते रहते हैं और जानेवाने जाते रहते हैं।

महाराजा हर्महर्मन कसूम्बे से लगे में दूरे हुए थे। कभी-कभी उनकी दृष्टि ध्यानक छोटी रानी के कमरते मुख की ओर उठ जाती थी। उस दृष्टि में मुख की बुझी-बुझी सादरत जगता थी जो कभी-कभी वासना के छोटे से दहक जाती थी।

डोलनिर्बो का स्वर तेज हुआ—

धो रसिया जी बौने कण बिसमाया

सोझी रे बाबरी बड़ी ए बिसमाया

कई रे गुमान कर्के रसिया

पीठ की पक्षियों पर छोटी रानी को हँसी का पई—धो प्रीतम प्रापको किसने मोह लिया है? भरे प्राप छोटी के यहाँ बाँटे-बाँटे बड़ी के यहाँ बने मये?

पर छोटी रानी ने अपने प्राप मन से कहा छोटी के होते बड़ी महाराज को क्या बिलखा सकती है?

माचे रो रत वैमल लीयो

में ह रो रत पम्पामाक पीयो

कई रे गुमान कर्के रसिया

कनों रो रत लड़ियो जी लीयो

लड़ियो रो रत पम्पामाक जी लीयो

कई रे गुमान कर्के रसिया

मृत्यु अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया।

महाराजा ने प्रमत्त होकर एक सोने का गहना उन दोनों चरस्वानी डोलनिर्बो को दिया। उन्होंने उनकी बिरादु की कामना की।

अवस्थिति में जारी भूकता के पश्चात् एक हमचल-सी हुई। पीठ की धामोचना प्रत्यालोचना हुई। सभी प्रांगण में एक बुद्ध राजसी पोशाक में इनमनाता प्राया। उसके नाम रवेन थे—रई के सनात।

सभी उसे प्रीत्युक्त्य गरी दृष्टि में देखने लगे।

बूढ़ा परचाताप से भर जा रहा था। बार-बार वह तलवार की

देखकर जोरित हो जाने का अभिनय करता था। थोड़ी देर वह अपने समस्त धर्मों की बेवता रहा और धर्म में रोदन-मरे स्वर में बोला

“बाम पुराणी मन नयी गला बही समाज
घरी बचानी बावरी एक बार छिर घाव।”

एक और पुण्य जिसने अपने जीवन-काल में मनुष्यों के दमन और अपने मर की धानि-मुखा के लिए अपने जीवन का आनन्द ही नहीं छोड़ा वह व्यक्ति जीवन के बने जाने पर किसने मानिक स्वर में चिन्ताता है—“यह बमड़ी बकर पुरानी हो गई है पर यह मन बचक नया है और इन नयनों का स्वभाव भी बही है घट ए मेरे पापल जीवन तू एक बार गुन लीटकर जा जा।”

उसका अभिनय इनका उन्नीच था कि उपस्थिति में जीवन का संचार हो उठा।

गगाड़ा और बजा—टिड़-टिड़-टिड़ धिन
एक दुस्ती में प्रवेश किया। वह भी वृद्धी थी।

उसने एक बार उपस्थिति पर अनुपम दृष्टि आसन्न दृष्टि विवेक किया और धांगन में पल्लु बिछाकर जा उठी—

“जोवन बातो बाएली, सेली पल्लो बिछाय।
मूँची कर-करके बैबती बस्तूरी रे भाव।”

जीवन की बस्तूरी के भाव बेचना उपस्थिति को बड़ा प्रिय मया। सब सोन उसके हाथ भर अभिनय पर निपविताकर हैं बड़े। बड़ा समान सवाहर घाने बहुर होला—

“जोवन बाता छुब गया मिल में लीन अलप
सुरी मिलावण भी रमण पर तारवाहन छवण।”

एक धोना जिसकी उल्ल प्रायः हम बुर्की की इस दोहे को मुनकर मस्ती के नाच वह उठा “मूर्खनहूँ जी राजस्थानी यदि मैं बहुत टीक रहा है कि जीवन बला भी बला पर पार पार बहना स्त्री मुन-जोव मया मनुष्यों के छिर को काटने की तावत सब बली गई।”

इसके बाव नृत्य का जोर रहा ।

बूढ़ा और बुढ़ी नृत्य-कला में कुशल जान पड़े । उन्होंने दर्शकों को मोह लिया । इसके बाव स्त्री मुसकटाकर गा जठी—

“जोवन यथो तो जाय है तिर सँ ठनी बलाय
जनों जाने रो कसलो, धो बुझ सही न जाय”

धीर पुरुष ने भी धागे बढ़कर कहा—

“मुड़ भी भाजी जाइवो मरुजबाट तू छूट,
जतो यथो जोवन यथो प्रीत पुरानी दूट”

दूतरे पक्ष का प्रतिनय भी बूढ़ सजीव रहा । जोड़ राजस्थानी लोक-कला से प्रभावित हुए । दोनों पात्र भीतर की धार साधे ।

उपस्थिति में हर्ष-व्यंग्य की ।

दोनों पात्र पुनः बाहर निकलकर आ गये ।

इस बार दोनों एक साथ बोले—

“जोवनियाँ तहली रमल जय गंजल मय जल
घंरल फिर घाय है कई पीछल रा तल ।”

एक मोटा इसे चुनकर मूम सटा गया कहा है है तहसी से रमल करनेवाले हाथी के सह को भजन करनेवाले जनेकों सधुपों को चट्टान के सहृद रोनेवाले ए जीवन एक बार फिर आ । बाहू दे कवि और बाहू दे कलाकारों जय जय ।

यह हो गाना समाप्त हो गया ।

हर्ष-व्यंग्यों धीरे तुमुल प्रसन्नता-भरा बोध ।

दोनों कलाकारों को जूब सम्मानित किया गया ।

१ जोवन बला यथा प्रकृता ही हुमा, तिर से बला इस कई । इत जोवन के बार-बार कड जाने के बुझ है तो जय मये ।

२ मुड़ पड़ा या मरिजयाँ ला गई मजबनाहट से छूटे, जीवन बला जय, प्रकृता ही हुमा पुरानी प्रीत भी जल हो गई ।

बूझ एक पीढ़ी में उगमन ही बनी थी । उसके घृष्ट के इतिमम भय पर महाराज स्वयं प्राप्त प्रमत्त हुए और उन्होंने उन उसी दिन घबरे राखे की बिनाप डोलन का पद प्रदान किया ।

उत्तर की समाधि के बाद छोटी रानी और महाराज राखे की घोर पबारे ।

विद्र घन निवास-स्थान की घोर जाने को उछल हुआ । मेनका ने उसे रोका ।

एकान्त ।

मेनका ने बम्बीरना ने कहा 'प्रातःकाल नगर के प्रतिष्ठित घोडा विमुक्त घर को हमारे कक्ष में लेजना हम चाहते हैं कि यहाँ रानी का कोई अनन्त हम पर और हमारी किमी वस्तु की प्रभावित न करे ।'

विद्र ने 'हुँ' कहकर प्रत्यान किया ।

विद्र एक संवत्सोचन प्रत्यक्ष के लिए नितास्त भीन रहा । उसी रात महरी मैसी बागों में व्यापक का सामर सहरा उठा । घबरे हाथों को घन मंद पर ध्वनि ही फेरकर उसने बचा को घाने बजाया—

राज का महाराज सम्मति मंदार पर छा चुका था । महरी नीरवता स्वयं भय को उत्पन्न कर रही थी । कहीं-कहीं जलू की घोंघों की व्याप की मर्जन मुनाई बड़ जाती थी ।

लौकिक इम भयानक राज में संवत् की घोर भागा बना जा रहा था ।

बरपट ।

बागों तक ने जाने की दुर्गम में विप्रावत घात और भयानक ।

लौकिक वहाँ पाकर अकृत लड़ा हो गया । उसका मन मार्ग-मार्गों में बँट रहा था । हृदय की पड़कन मातृता के कारण बूझ लेज हो गई थी ।

लपटान पर निद्रितन धँपरा था ।

बसी हुई साँसें पड़ाकर पटककर उसके अन्तर में भग्न बना देती थीं ।

तीव्रबुद्धि ने उस धन्यकार में एक प्रचोरी को देखा । वह प्रचोरी अपनी तांत्रिक शक्ति से एक धन्यवती लाभ पर बैठ कर किसी मंत्र की सिद्धि प्राप्त कर रहा था ।

उसके कंठ-स्वर से बड़े विविध मंत्रों का सञ्चारण हो रहा था । तीव्रबुद्धि कई क्षण जड़वत खड़ा रहा पीर अंत में जब प्रचोरी विलकुल चुप हो गया तब बोला "महाराज ।"

प्रचोरी की दो धींसें उस धन्यकार में धँगारों की भाँति चमक उठी । कर्कश स्वर में बोला "मूढ़ पामर कुछ तुने मेरी साधना में विघ्न डाल दिया अब मैं तेरी लाभ पर अपने इस नये मंत्र की सिद्धि प्राप्त करूँगा । पीर उस प्रचोरी ने तुरन्त तीव्रबुद्धि को जख्मी पर पटक दिया । तीव्रबुद्धि अर्पण-सा पड़ा रहा । उसके मुँह से केवल इतना निकला, "महाराज मैं इस नगर का बीजान तीव्रबुद्धि हूँ ।"

"तु इस नगर का बीजान है । मुर्ख तु यहाँ क्यों आया है ? जानता नहीं यह हमारे महामंत्रों को सिद्ध करने का स्थान है । अमलकार-पुर्न बीजान के प्रथम चरण से लेकर अन्तिम चरण तक के साधन यही से साध्य होते हैं । बता तु यहाँ क्यों आया है ?"

"महाराज मैं आपकी शरण में आया हूँ ।"

"हमारी शरण में बता क्यों ?"

"बड़ी रानी छोटी रानी के पैर का धर्म निराना चाहती हैं ।"

"बस इतनी सी बात ?"

"बहु चाहती है कि वह भी गर्भवती बने पीर यह सब आपकी कृपा से ही हो सकता है प्रभु ।"

"हो सकता नहीं हो गया । कहकर उस प्रचोरी ने पीर से धंध का सञ्चारण किया ।

तीव्रबुद्धि ने देखा—वह धन्यवती लाभ बकायक उठकर बोलने लगी

है— बड़ी रानी का कार्य चीघ्र ही पूरा होगा वह माँ बनेगी घीर बेटे की माँ ।

तीव्रबुद्धि वाले जय के प्रवेश हो गया ।

जय जड़ने अपनी घाँवें सीनी सी उसने अपने समीप श्वास पाया ।
ऐसा कि वह अपनी घाँवें सेजबान है घीर केवल एक संगोद पहने हुए है ।

उस अपनी ने उसे जाने की आज्ञा देते हुए कहा "कस तु बड़ी रानी को हमारे पास लेकर आना ।"

तीव्रबुद्धि ने काँपते हुए कहा "ओ आज्ञा ।"

"घीर यदि न लाया तो ?"

तीव्रबुद्धि ने उसके कारण स्पष्ट कर लिए घीर उसे विश्वास दिलाया कि ऐसा कभी नहीं हो सकता ।

उसके जाने के बाद अपनी ने एक ओर का प्रहार किया ।

संकट मोचन ने रामू बनना घीर बम्बू पर बुद्धिपाठ किया । के तीनों बिलकुल संघीर थे । उनके नेत्रों में उत्प्रेक्षा के साप-साप घाँवका भी दौर रही थी ।

"किस गया हुआ ?" बनना ने हठाव पूछा ।

दूसरे दिन बड़ी रानी रानि के संघरार में उन अपनी के पास गई ।

अपनी ने तीव्रबुद्धि को वहाँ से वापस भेज दिया । उसे आदेश दे ही कि वह प्रयास होने से कुछ जाल पूर्व आकर बड़ी रानी को ले जाए ।

तीव्रबुद्धि के जाने के साथ ही अपनी ने अपने तीन बार समतार बड़ी रानी को दिखाये । बड़ी रानी जय घीर पुण्ड से प्रवेश हो गई । एक समतार में एक राखंडी एक बच्चे को ला रही थी । उस अपनी ने बड़ी रानी को बताया कि यही बच्चा तेरी मोर में आयेगा ।

रानी जब सावधान हुई तो उस अपनी ने एक झूठे में माँस का

सोपड़ा नास कपड़ा एक हड्डी का टुकड़ा यूँ प्रसाद आदि सामान लेकर कहा— 'दियम्बरी होकर इसे उस खब पर रख भा ।'

'दियम्बरी ?' रानी ने चौंकर कहा । उसके योगों हाथ उसके बस-स्वस पर रुक गये ।

'हाँ मंत्रों की टिड्डी का यही मार्ग है । सुन रानी यदि तू ने हमारे बच्चों का बरा भी सम्मान किया तो जानती हो कि तेरे तन से कोई फूट निकलेगा । वा दियम्बरी होकर उसे वहाँ पर रख भा ।'

रानी काँपते-काँपते दियम्बरी हुई । वह लम्बा से बड़ी जा रही थी । उसने सपकते हाथों से उस कूड़े को उठाया ।

ठहर ।" उस धमोरी ने उसे रोका ।

बड़ी रानी ठहर गई । धमोरी ने एक बार पिपासी की तरह रानी के उस कम को देखा जैसा कम लेकर उसने इस पुष्पी पर अपना प्रथम अन्त किया था ।

"ले इसे पी से ।" धमोरी ने एक मिट्टी के बर्तन में मटमैले रंग का पानी दिया "इसके पान के पश्चात् तुझे मर नहीं सवेगा । वा और इसे उस खब पर रख भा ।"

बड़ी रानी उसे लेकर उस खब की ओर बढ़ी । धमोरी उसके साथ था । रानी ने जैसा ही उस कूड़े को माघ पर रखा वैसा ही उस धमोरी ने कहा, 'सात फरे लगा ।'

बड़ी रानी ने उस खब के चारों ओर सात फरे लगाए । केरे लगाने के बाद धमोरी ने रानी को अपने बूटने पर बैठ जाने को कहा । रानी उसके बूटने पर बैठ गई ।

बड़ा रानी पुनः प्रसाद लीटी तब उसकी वशा पर्यन्त खोजनीय थी । वह पारयम्तामि में बरी जा रही थी । उसके चेहरे पर जो पूर्ण नारी की धमिल मौम्यता थीस थीर पड़म् वा वह मुप्त हो गया था । यद्यपि उसके मैत्रों से धमू भी छलछला पाते थे ।

बहु धम्या पर आकर गिर पड़ी । बाहियों में उसका भी बहसाना
 हा पर उसने स्पष्ट शब्दों में कह दिया था कि उसे एकांत चाहिए ।
 एकांत !

धीरे धीरे के के कमत्कारपूर्ण शिथिल ।

धोरी ने कहा बिता की बात नहीं है प्रिये छोटी रानी अपनी
 स्थान का प्रमाण स्वरूप करेगी । तु माँ बनेगी बेटे की माँ । कैय
 विघोष पूरा होया ।

बड़ी रानी ने सात्वता की साँस ली ।

उसने जो पाप किया उसे क्षीन जानता है ? अज्ञात पाप सम्मान
 नीर प्रविष्ट का पातक नहीं होता ।

रानी इन्हीं उच्छ्वसनों में उलझती हुई सो गई ।

प्रभाव हो गया था ।

पर रानी के मन में नीर अन्धकार व्याप्त था ।

धोरी के कानों में या जाने के बाद बड़ी रानी उसे अपना तन मन
 नीर मन बार-बार झरान करने लगी ।

छोटी रानी ने अपनी समझता को विघोष धावक कर लिया ।
 यद्यपि उसे अँधों पर विरवाह नहीं था तो भी उसने घोष से कई मुरझा
 के मंत्र के टोटेके बनाकर पहन लिए ।

तीव्रबुद्धि का कुछ उलझे ही जाने लगा । बड़ी रानी अब पूर्ण रूप से
 धोरी की हो गई थी । तीव्रबुद्धि की राग्य-सिन्धु अन्धकारने लगी ।

धीरे एक दिन उसने तय किया कि वह उन धोरी की हत्या कर
 देगा । वह ऐसा कुछ धीरे पराधीन जीवन अनीन नहीं कर सकता ।
 वह उस में उस धोरी को समाप्त करके ही शान्त लेगा ।

धीरे ।

उमकी बिलबिलानी धून धीरे तन पवन ।

यद्यपि तीव्रबुद्धि बड़ी रानी के महल के बाया । बड़ी रानी बपुर

पलंग पर धरै-धामित थी ।

तीव्रबुद्धि आजकल उसे प्रणाम बाध नहीं करता था । बड़ा धीर भक्ति दोनों उसके अन्तर से आजकल कम हो गये थे । वह जानता था कि रानी का उन बीर मन पाप के पक्ष से इतना लज्जित हो चुका है कि वह उसके समक्ष भीलें उठाकर बात तक नहीं कर सकती ।

अधिष्ठिता के साथ उसने कम में प्रवेश किया । हाथ का संकेत करके उसने कहा 'एकोठ ।

सब बाँधियाँ खिर झुकाकर खी गई ।

"रानी प्रणाम ।"

"बैठो तीव्रबुद्धि ।"

तीव्रबुद्धि बैठ गया ।

बड़ी रानी ने तनिक सावधान होते हुए कहा "तुम्हें जानकर अत्यंत प्रसन्नता होगी कि मैं माँ बननेवासी हूँ ।"

"बधाई है ।"

"अब देखती हूँ कि छोटी रानी मछले बचकर कहाँ जावेगी ? अभी तो मैंने बीच भारल किया है और अब उसके बीच का क्या बड़ का नाश करके बीच से खोईनी ।"

तीव्रबुद्धि तरस-जरी हँसी हँसा "मूर्ख हूँ तुम । छोटी रानी भीलें मूँबकर नहीं छोई हुई है । उसके बीच का नाश इतनी सहजता से नहीं हो सकता जितनी तुम समझती हो ।"

बड़ी रानी ने धम्या पर करबट ली । अस्मिन् छ पीरे-पीरे कहने लगी "मैं चाहूँ तो एक दिन इस सिंहासन पर भी अधिकार कर सकती हूँ ।"

तीव्रबुद्धि झुक्ता उठा । बड़ी रानी की यह भावना उसे पसन्द नहीं आई । रानी मायक पैय का जपक उठाकर स्वयं पीने लगी । अधिष्ठिता की सीमा पर तीव्रबुद्धि का सम्मान भीख उठा "तुम उस घबोरी के संकेतों पर छोटी रानी क्या इस राज्य का भी सर्वनाथ कर सकती हो । मुझे

यदि ऐसा प्रतीत होता तो मैं उस छतिये पपोरी से तुम्हारी भेंट ही नहीं करता।”

“तीरबुद्धि मैं अपने घर के बिना अपना नूतन घर तुम्हारे ही पाली नहीं हूँ।”

“तुम उस तीरबुद्धि की नुब खड़ी हो जिसने तुम्हारा मन मन मन सभी कुछ छन सिया है। तुम्हें देखी से पतित और गरी से पापाणी बना दिया है। महाराजो जी। अब भी उसके बीमार और धूलित पाकड़न से मुक्त हो जाइये और

बड़ी रानी पाला से जलती हुई बोली “और मैं तुम्हारे बक मे जेन बाई। तीरबुद्धि। प्रतियोग की जान की जवाबदाई ध्यापक होकर नहीं जलती वे एक ही रिता में कर्षणगुनी होकर जलती हैं ताकि उनिज तारव को प्राप्त कर सकें। मुझे छोटी रानी।”

तीरबुद्धि तेज स्वर में बोला “महने छोटी रानी फिर महाराज फिर सिद्धासन और हमके बाह धर्ममरुत कर भोग विनाय के हमारी ताविकों का सामन विनाय का साधर, जानव भोग विनाय और मरामकना। एसा मैं नहीं भी नहीं होने देना।” तीरबुद्धि आवेष्ट में जाँचे लगा। उनके नेत्रों में पीड़ा-जनिज आँसु छलछलाये। स्वार्थ की छाया से धनुष तीरबुद्धि छाये का उद्घोष करते-करते घायल की उल ननुष को भी मूल गया जो बोड़ी देर पूर्व उनके मानस में संशय की तरह उठ रही थी।

बड़ी रानी चाहन मोरिम की माँति फगार उठी। वह इन तरह उलर रही थी जिस तरह कोई जवानक बुद्धिगमी किसी दिना के नीचे हल जाती है और ध्यानक जलार करती है।

“तीरबुद्धि हमने पहले कि मैं तुम्हें खरिदहीना और जमातार के धाराय में जाती बनबाई। तुम यहाँ मे जपक धारते जने जाओ। यह देरी पाका है कि तुम यहाँ से जने जाओ।”

तीरबुद्धि फिर भी नहीं गया। वह बाह धरी दृष्टि से वह बड़ी रानी

को देखते लगा जो कल तक महाराज थीर उसने सम्मान में झुकी रहती थी थीर आज करिबहीन होकर भी मर्ज रही है । उसने पराजित बंदी की तरह दृढ़ स्वर में कहा 'बहुत संमत्त के पाँव छठमा कही ऐसा न हो कि एक दिन इस धबोरी-बन के जमत्कारपूर्ण तब-जनों के मयामक-वीरिष्ठ प्राकट में तुम अपना सर्वनाश कर दो !

तीव्रबुद्धि जता गया ।

बड़ी रानी बहुत समय तक शय्या पर निहाल पड़ी रही । आत्मा की कोमल भावनायें उसके अन्तरास के मिथ्या आवरण पर उभर-उभर कर उसे इतना अज्ञान बनाने लगी कि उसे अपने जीवन में विनाश आत्महार के कुछ सूझ ही नहीं रहा था । धबोरी ने उसकी नारी-सुलभ भावनाओं को समाप्त करके उसे इस महार्थ की पूर्ण-वपेन भिला दी थी कि जीवन एक आनन्द है और आनन्द की प्राप्ति ही उसका परम सुख तथा सफलता है । उसे इतना मगधीत थीर आस्तिक्य कर दिया था कि धबोरी के विनाश किसी की आत्मा मानना उसे स्वीकार नहीं था । एक बार महाराज ने उसे टोका भी था । तब वह सिहनी की तरह बर्जकर बोली 'यदि आपने मेरी सावना में बिघ्न डाला तो परिणाम अच्छा नहीं होगा । मैं केवल आपकी सन्तान के लिए कठोर तपस्या कर रही हूँ ।

जर्म-मीर थीर ताधिकों की जमत्कारिक माया से परिचित सर्वमर्ज विवसता का घूंट पीकर रह गयी ।

बड़ी रानी ने तब देखा कि उसकी सम्पत्ति से वह धबोरी कई दिव्य रहने लगी है । सीमा पर स्थित उस महान गङ्गा में हर रात बिनाश का संसार भरता है और वह उस मोग की आंत तरणी है जिसे वह धबोरी कृपा-पात्रा समझकर प्यार करता है ।

बड़ी रानी की आँखें सजल हो उठीं । वह तक्रिये में डूब चियाकर सिसक पड़ी ।

तीव्रबुद्धि ने धबोरी के विनाश का प्रयत्न कर लिया । नि सहाय होकर

बहु पुनः छोटी रानी के पास आया। विप्र ने उसे तोरण द्वार पर ही रोक दिया और अपनी रानी की आज्ञा सेने वह अन्तर्पुर में बसा गया। सौटकर चलने तीव्रवृद्धि से कहा "आप भीतर जा सकते हैं।"

तीव्रवृद्धि छोटी रानी के समीप गया। छोटी रानी प्रभु की धारणा में निमग्न थी ऐंछा वहाँ के बागावरण से प्रतीत हो रहा था। अम्बन के छोटे पत्र-पत्र बिखरे हुए थे। भुव से करा सीरममय था।

छोटी रानी ने उसे सम्मान-सहित आसन पर बिठाया। उसके समक्ष प्रसाद की पाली रखी। उसमें से कुछ संपूर उठावे हुए तीव्रवृद्धि भिरावा से बोला, "रानी मा। बड़ी रानी के वृक्षों से आप परिचित हैं न?"

छोटी रानी हँस पड़ी "मैं सदा आपूत रहती हूँ प्रगाढ़ मित्रा मुझे पसंद नहीं है।

"किर तो आप यह भी जानती होंगी कि बड़ी रानी ने अपना तन पतन बन "

"नारी का चरित्र विचित्रताओं से भरा है। मैं समझती हूँ कि हम अन्तर्पुर की नया आपसी कलह में समाप्त हो जायेगी। मेरो न आप जैसा अनुर बीजान अत्येक क्षण हम के बीच फैलता रहता है। अपूर्विका अपूर्विका सुनो मुझारे स्वामी आये हैं। धापी पतिबादन करो।"

अपूर्विका ने निर्ममतापूर्वक वक्ष में प्रवेश किया।

अभिवादन के नाच का अनन्तरक राड़ी हो गई।

"आपने इसे हमारे कक्ष में लेकर हम जान का पता लगाया बाह्य कि हम क्या पदार्थ रख रहे हैं? बीजानत्री अपूर्विका बहुत ही शिष्य वाली है, वह बेकारी हम कार्य में निगमन प्रगच्छन रही।"

तीव्रवृद्धि संक्षेप से कुछ बात नहीं कहा।

अपूर्विका पुनः सीन गई।

छोटी रानी ने अग्रत स्वर में कहा "यहाँ तक पदार्थ और अनुराग का प्रत्यक्ष है बड़ी तक में धारण्य है। मुक्त पराश्रित करना कठिन ही नहीं प्रगच्छ है। मेरिज में रक्त-निपातु नहीं है। वहाँ रक्तार्चन घोर

बुद्ध का प्रश्न था कि, वहाँ मैं विमूढ़ धीर पड़ हो जाऊँ। प्राणी द्वारा प्राणी की हत्या करना मेरे लिए संभव नहीं।”

पर रामी सा जब तक उस भबोरी को परलोक नहीं भेजा जायेगा तब तक धर्मगुरु सुरक्षित नहीं हो सकता।”

“मैं किसी की हत्या नहीं कर सकता।”

“फिर ?”

“महू काम थाप कर सकते हैं पर मेरी धामा से नहीं अपनी धामा की धामा से।”

बड़ा विविध सिद्धान्त है। दृष्टनीति में इतनी जटिल होने पर वह दुर्बलता क्यों ?

‘संस्कारों की बात है, क्षोणित-सम्बन्ध है।’

तीव्रबुद्धि अभिव्यक्त करके था गया।

‘छोटी रामी बड़ी विविध है। धीर फिर वह मृदुभाकर कह उठा “धर्मगुरु विविधताओं का केन्द्र हो गया है। विविध पात्र। विविध अभिनय संघर्ष।’

धीर अन्त में तीव्रबुद्धि ने निश्चय किया कि वह भबोरी को समाप्त करेगा ही।

निधिय का पहर।

छाँव नगर।

तारे ऐसे झिलमिला रहे थे जैसे मरमरी पत्तों जलती धीर बंध होती हैं। चाँद था नहीं इसलिए धम्मकार का साक्षात्कार एकाधिलय होकर अपने स्वामीत्व का जीव कर रहा था।

महाराज वर्णवर्णन कमूमे के नये में मन्त्र शय्या पर दो बाँधियों के संघ भीड़ा कर रहे थे। भीड़ा कल्ले-कल्ले जक गये तो निद्रा ने उन्हें अपने धँक में भर लिया।

महिषास बचा।

हो छप सैनिकों ने महाराज के कण में प्रवेष्ट किया। उनके हाथों में लक्ष्य वे जो रक्त रजित थे। रक्त-समे गद्गलों से प्रतीत होता था कि वे अभी-अभी मानव रक्त से अपनी जखम पिपासा को शांत करके पाये हैं।

दोनों सैनिक कुछ देर तक बय महाराज का काविरहींग मानगें बैठते रहे। इसका मूर्त धीरे उनका मुँह।

एक ने तनवार उठाई।

दूसरे ने रोका "क्यों मारते हो ?"

"बड़ी रानी की छात्रा है।"

"मह बूढ़।"

"तुम नहीं जानते हुआयी प्रत्येक बलि-विधि का बड़ी रानी को ज्ञान हो रहा है। वह मंत्रों की अभिप्रायी है। इस प्रकार की अचजा धीरे बिड़ोह भरा स्वर मूँह में निजामोने तो तुम भी कूले की पीठ मारे बाधोने।"

मुझे इन बड़ों पर क्या छात्री है।"

दया के देवता। बड़ी रानी की कूरता तुम्ही पर बड़का देगी।

मारो "

"मैं नहीं मार सकता।"

"ममका तुम बिड़ोह करना चाहते हो। कटी पर मैं अपने प्राणों को ध्वंस करी गंगा मकता। मैं अभी "

तुम्ही क्षमार्जन के नेत्र गुन मने।

हाइने धरने दोनों धीरे दो मगरम सैनिकों को देखकर जोर से कहा 'तुम जीन हो ?'

एक ने तनवार अपनी छात्री पर रक्त की "बुध हो पाइय महाराज भागने का प्रयत्न ध्वंस है। हम छात्रा हीरा करण के लिए पाए है।"

"मेरी क्यों ?"

"बड़ी रानी की छात्रा है।"

"मेरी रानी की छात्रा है कूट तुम झूठ बोल रहे हो ?"

‘हम सब बोल रहे हैं, महाराज आप मरने के लिए तैयार हो जाइये। एक ने टूटते स्वर में कहा।

‘तुम मुझे मारोगे ? अपने महाराजा को, मैं कहता हूँ कि तुम सब बने ~”

वो तनवारें एक साथ सर्वसर्जन के बल में मुर्छी धीरे पीछे से बाहर आ गईं।

शोकित का सायर सभा पर सहसा उठा।

महाराज ने पल भर के लिए भयानक चीखों को सोना। उस दृष्टि में गहरी गुणा अछाछा धीरे शोभ बघ बा। दूसरे पल उनका धिरे झुक गया।

उसी रात छोटी रानी की भी हत्या कर दी गई। अपनी एक दुर्बलता के कारण कि मैं किसी की हत्या नहीं कर सकती छोटी रानी ने अपना बिगाड कर लिया। केवल सुरक्षा सकल राजनीति नहीं।

बड़ी रानी निष्पेक्ष हो गई।

विद्रुक्क संकटमोक्षण के कैहरे पर गुणा भर आई। जनता का कैहण स्पाह हो गया पर बम्पू तनिक असेमित होकर कहने लगा “कुछ शासियों के अन्तर में महा अपराधी प्रवृत्तियाँ छिपी रखी हैं जो अपना अनुकूल वातावरण पाकर नष्ट हो जाती हैं। बड़ी रानी वास्तव में दुष्ट प्रकृति की थी लेकिन प्रतिकूल वातावरण ने उसकी दुष्टता को दबा रखा था।”

विद्रुक्क ने कहा, “अन्धवीर बातें मैं नहीं समझ सकता। मैं सत्य को सत्य की तरह रज सकता हूँ।

महाराज मारे नहीं, छोटी रानी की हत्या कर दी गई। हमारे पैर का गया बिनु बिना प्रथम कदम किये ही सभा के लिए बुला कर दिया गया।

पर तीक्ष्णदृष्टि ?

तीक्ष्णदृष्टि वालों का मोह छोड़कर इसी धीरे सन गया कि अब

तक वह उस घघोरी की समाप्त नहीं कर देता तब तक उसके प्राणों की सुरक्षा नहीं। घघ उसने उसी घत मादकता में मस्त घघोरी को मार दिया पर—

‘पर क्या?’ रामू घीर बनला एक साथ पूछ बैठे।

‘पर यह कि बेचार तीव्रबुद्धि घघने घापकी नहीं बचा सका। घघोरी को मारकर वह आसार की घोर महाराज को यह समाचार सुनाने के लिए आया था रहा था कि घापकी हत्या घाज की आनेवासी है कि रास्ते में उसका घोड़ा एक बट्ठा से टकरा गया और तीव्रबुद्धि घघनी सातसा की मन-ही-मन में लेकर मर गया।

सबेरा हुआ।

घनमपुर पर बड़ी रानी का शासन प्रारम्भ हो गया।

घनता महाराज की हत्या से बुद्ध घीर जोधित की पर सैनिकों का समन घने घान किए हुए था।”

विद्वरक ने एक लम्बी श्वांस ली “सिंहासन बदल गया घीर बदल गये उनके दावेदार। कम की पठितता भारतीय कोमल हृदय पत्नी मात्र घनमपुर की आत्म विधायिका ब्रि-हस्पारिण घीर नृगंस बन गई।

घघोरी की मृत्यु ने उसे घीर निर्धन कर दिया। वह घघनी इच्छा मुनार घनमपुर पर शासन करने लगी।

घीरे-घीरे विनाशिता घनमपुर के जीवन में घुसने लगी। राज्य का कोय विनाशिता के लिए उपयोग किया जाने लगा। सभी-नुरस सभी रास रंग में दूब गये।

‘साधो पीघो घीर घागद करो’ इन नारे को बुलन्द किया जाने लगा। यह नारा महार्जन की भांति वहाँ के निवासियों के घन्तर में बल गया।

इस विनाशक्य बातावरण में बड़ी रानी ने एक पुत्री को जन्म दिया।

उस दिन घनमपुर में प्रगल्भता की लहर दौड़ गई। उत्तम मृत्यु-भीत

‘हम सब बोल रहे हैं, महाराज आप मरने के लिए तैयार हो जाइये।’ एक ने दृढ़ स्वर में कहा।

‘तुम मुझे मारोगे ? अपने महाराजा को, मैं कहता हूँ कि तुम सब बले -’

वो तलवारें एक साथ दर्पमर्दन के बख में चुर्ची और पीछे से बाहर धा मढ़।

सोलिह का सावर शय्या पर लहरा उठा।

महाराज ने पल भर के लिए मयमल घाँसों को खोला। उठ दृष्टि में बहरी बूछा मथारखा और खोम मथ बा। दूसरे पल उनका तिर लुङ्क गया।

उसी रात छोटी रानी की भी हत्या कर दी गई। अपनी एक दुर्बलता के कारण कि मैं किसी की हत्या नहीं कर सकती छोटी रानी ने अपना बिनाश कर लिया। केवल सुरक्षा सकल राजनीति नहीं।

बड़ी रानी निष्कण्टक हो गई।

बिहूषक संकटमोचन के चेहरे पर बूछा भर धाई। जनता का चेहरा स्याह ही गया पर बम्पू तनिक उत्तेजित होकर कहने लगा “कुछ प्राणियों के धम्मर में महा अपराधी प्रवृत्तियाँ छिपी रहती हैं बा अपना अनुकूल बातावरण पाकर नम हो जाती हैं। बड़ी रानी वास्तव में दुष्ट प्रकृति की थी लेकिन प्रतिकूल बातावरण ने उसकी दुष्टता को बहा रखा बा।”

बिहूषक ने कहा “बम्पीर बातें मैं नहीं समझ सकता। मैं सत्य को सत्य की तरह रख सकता हूँ।

महाराज मारे गये छोटी रानी की हत्या कर दी गई। उसके पैर का नया शिपु बिना प्रबल अन्दन किये ही सदा के लिए बूँदा कर दिया गया।

पर तीव्रबुद्धि ?

तीव्रबुद्धि प्राणों का मौह छोड़कर इसी धोर लग गया कि बल

तक वह उस धोरी को समाप्त नहीं कर देता तब तक उसके प्राणों की सुरक्षा नहीं। यद्यपि उसने उसी रात मादकता में मस्त धोरी को मार दिया पर

“पर क्या ?” रामू धीर बनकर एक साथ पूछ बैठे।

“पर यह कि बेचारा तीव्र बुद्धि अपने आपको नहीं बचा सका। धोरी को मारकर वह मादक की ओर महापराज को यह समाचार सुनाने के लिए जाना था कि आपकी हत्या घाब की जानेवाली है कि रास्ते में उसका थोड़ा एक चट्टान से टकरा गया और तीव्र बुद्धि अपनी जानसा की मन-ही-मन में लेकर मर गया।

सबेरा हुआ।

धर्मपुर पर बड़ी रानी का शासन प्रारम्भ हो गया।

जबकि महापराज की हत्या से कुछ धीर अभिहित भी पर सैनिकों का बमन उसे शांत किए हुए था।”

•

•

विप्लव ने एक लम्बी स्त्रोत की “सिंहासन बहक गया और बहक गये उसके शवहार। कल की पतिव्रता भारतीय कोमल हृदय पत्नी घाब धर्मपुर की माय विवाहिका पति-हत्यादिन धीर नृसंह बन गई।

धोरी की मृत्यु ने उसे धीर निरंक कर दिया। वह अपनी इच्छा नुसार धर्मपुर पर शासन करने लगी।

धीरे-धीरे विनाशिता धर्मपुर के जीवन में सुनने लगी। राज्य का कोप विनाशिता के लिए उपयोग किया जाने लगा। स्त्री-मुख्य सभी राज रंग में दूब गये।

“आपो पीसो धीर घाब करो” इस नारे का मुख्य किया जाने लगा। यह नारा महामंड की मांति बहू के विनाशियों के धर्म में बस गया।

इस विनाशमय आलावरण में बड़ी रानी ने एक पुत्री की जन्म दिया। उस दिन धर्मपुर में प्रसन्नता की लहर बह गई। जन्म नृत्य-गीत

का स्वार समझ पड़ा। उस को दीपों से सभी लभरवासियों ने घपते गूहों को सजामा। दीपों की पकित धाय की बहती हुई सरिता बतीत होती थी।

दिन मना उत्साह लेकर घाटा और उस मया समाप्त।

बहती धपनी बुरी पर भूमती रही।

समय व्यतीत हुआ।

राजकुमारी किछोर हो गई। उसका नाम भी बड़ी रानी ने बहुत ही प्यारा रखा था—दुखवती।

दुखवती के मनोरथनाथ मेरी नियुक्ति हुई। मैं सदा हँसमुख रहता था। उपहास-मच्छास मेरा इतना प्रसिद्ध और लोकप्रिय हुआ कि वह जन-जर्वा का विषय बन गया। हाथिर-बहाबी और बाव बाव में बात-निकासना मेरे बाँधे हाथ का खेल था।

मठ में सदा के लिए गढ़ की बहारखीवाटी का बिहूपक बना दिया गया।

दुखवती को रोते-रोते हेमा हेमा ही मेरा कार्य था।

एक बिहूपक का और उपयोग हो क्या?

एक बार दुखवती और मैं विनास भवन के प्रकोष्ठ में बैठे थे।

सीत आनु थी।

झूठा पढ़ रहा था।

दुखवती ने सामने बने सरोवर की ओर संकेत करके प्रश्न-सूचक स्वर में पूछा “बाबा इस सरोवर का जल कहाँ जमा गया?”

“देख नहीं रही हो कि वह बर्फ बन गया है।”

“बर्फ कैसे बन गया?”

“ठंड से।”

तभी हम दोनों ने देखा—

कड़कड़ाती ठंड में ही सैनिक एक तपण को लोह शू जसा में घाबरा करके उस सरोवर की ओर ले जा रहे हैं। वह तदन भय के मारे कसल कर रहा है। बार-बार जोर से कह रहा है, “मझे मुक्त कर दो

मुझे मुक्त कर दो। मैं निरपराधी हूँ मुझे मुक्त कर दो।”

पर कौन सुनता उस बरिह का कन्धन ?

पुणर्वती ने मुझसे पूछा “यह कौन है बाबा ?”

“यह अपराधी है।

‘इसमें क्या अपराध किया है ?

‘सुनते हैं कि इसने राजमाता के बरिह की धाजोचना की। इसने कहा कि राजमाता प्रजा के कोप को ध्वंस में समाप्त करके महानगर को निकट भविष्य में संकट में डाल रही है।

तभी उन सैनिकों ने उस लक्षण को सरोवर में जमी बर्फ पर सेटा दिया।

हृदय-विदारक कन्धन छटपटाहट धीरे मृत्यु !

पुणर्वती ने हँसकर कहा “मर क्या बाबा ?”

‘हाँ बेचारा मार दिया गया।”

उसने मेरा हाथ पकड़कर कहा “बाबा आ तू भी वहीं सो जा।

मैंने उसे बुलाते हुए कहा “नहीं बेटा यह बहुत ठीक है, वहीं सोने से प्राणों मर जाता है।”

‘मर जाता है तो क्या ? जाओ वहीं सो जाओ।

मैंने उसे समझाया “देखा नहीं कहते बेटी।”

“नहीं जाओ न जाओ ” उसने धारम्य भावह से कहा पर मैं नहीं गया। वह रोने लगी धीरे मैं उसे बहलाने लगा। वह नहीं मानी धीरे रोती ही गई।

संयोगवश महाराणी का ज्वर से धागमन हो गया। उसने घांटे की पुष्प “पुणर्वती क्यों रो रही है, संकटमोचन ?”

“वह कहती है कि मैं उस बर्फ पर सो जाऊँ। मैंने हँसे कहा कि राजकुमारी का नहीं ”

“धीरे तू ने बगती बाघ के लिए हमारी बेटी के कितने ही धनमोल प्रतिभुओं को बहा दिया। संकटमोचन तू निरुपेक्ष है तेरा काम है केवल

हँसाना स्नाता नहीं बा पुणर्वती को हँसा ।”

मैं सरोवर की ओर चला ।

सोच रहा बा भैंसी माँ है बेसी ही बेटी होगी । साँपिन साँपिन को ही बच देगी ।

मैं बर्फ पर सोया रहा । मैंने देखा कि पुणर्वती को मेरे तड़पने में प्रतीक धारण प्राप्त हो रहा है । घनेत घनस्था में मैं राजद्वेष के घर पहुँचाया गया जहाँ सज्जता के साथ मेरा उपचार किया गया । दो-तीन दिनों के बाद मैं तनिक स्वस्थ हुआ । फिर भी मैं पूर्व की पीड़ा को स्मरण करके तड़प जाता था । मेरी गर्तों का रक्त बम जाता था । मुझे अपने जीवन और स्वभाव के प्रति बड़ा रोष जाता था ।”

संक्रामोपम मैं सखु भर के लिए निर्जीव-सी मृच्छा बारण की । उसकी स्थिर पक्षकों में दायण व्यथा सहता उठी । अचानक सज्जता का उद्घाटन उसकी स्थिर छाँवों में पाया जैसे उसे अपने जीवन के प्रति दहता संचोप है ।

वह धनिष्ठा ने कहने लगा “विद्वपक जीवन का किन्तु सनातन अभिभावक है कि उसे रोने का अधिकार नहीं ।

पुणर्वती मूलतः पक्ष के बाँव की तरह बढ़ने लगी ।

फिरोर की समेते स्वतंत्र होती है और जब जीवन धातुमन करता है तब उन पर नज्मा का घासीन आभरण छा जाता है ।

पुणर्वती मचा हो गई ।

माँ की कठोरता के साथ उसने अनुपम सीम्बर्स भी पाया । वह सौम्यप्रायः होकर दुष्ट होने लगी । उसके रहन-सहन बावलीय और प्रकृति सभी में उसकी दुष्टता-मरा व्यक्तित्व अंकित करता था ।

बड़ी रानी सब दुर्बल हो चुकी थी । धम-पतन की चरम सीमा भी उसकी । मादक पेयों में मग्न वह मृतप्राय सी पड़ी रहती थी । बाउगा उसकी दुर्बल्य देने लगी थी । साधारण स्वाम की भाँति वह बन्धी-कमी हुई जाटने का अचकल प्रयाग करती थी । तरकाल समझी दुर्बल्य देखने

को बनती थी ।

पुणर्वर्ती अपनी माँ की कोई चिंता नहीं रखती थी । दृष्ट प्रकृति की होने पर भी उसमें एक बहुत बड़ा गुण था । वह था—जीसुरी बारण ।

जीसुरी के स्वर्ण पर वह प्रभु की महत्ता के दर्शन करा देती थी । उस समय उसके नवानक सुन्दर मुन पर ईश्वरीय छवि थीर मृदुलता के दर्शन होते थे ।

उसके सौन्दर्य की जहाँ जहाँ-तहाँ होने लगी ।

एक दिन एक राजकुमार उसके ध्याह का प्रस्ताव लेकर आया । उसने उसका मध्य स्वागत किया और अन्त में बसते कहा 'मैं आपसे उनी विवाह कर सकती हूँ जब आप मुझे उस बीते की जान मा दें जिसकी जान साधारण बीते की जान से भिन्न है अर्थात् जिसकी जान की बारिजाँ सीले थीर थीर की हूँ ।'

मैं सुनकर जीवका यह गया—ऐसा बीता इस पृथ्वी पर संभव है ? मैंने काफ़ी विचार कर अपने मन को इस तरह जाँचना ही कि क्याचित यह संभव हो सकता है ?

बेबाप वह राजकुमार उस बीहड़ जन में भी गया जो आपस आना ही नहीं ।

इस प्रकार उसने अपने सौन्दर्य पर मुग्ध होनेवाले कितने ही राज कुमारों को मृत्यु-मुक्त में भेज दिया । उनकी मृत्यु के समाचार सुनकर वह नराल पर प्रसन्नता-नरा जीवन्त अस्तव मनाया करती थी । उसमें इस बात का प्रमुख अभिनय रहता था ।

इसी तरह के एक लोहार की राशि—

मेरी पत्नी उधर रोय के लड़क रही थी । मैंने अपने मेकट से राज कुमारी को कहला दिया था कि आज मैं आपकी सेवा में उपस्थित नहीं हो सकूँगा ।

थोड़ी देर बाद मैं देखता हूँ कि दो सैनिक मेरे बदन के लोण्ड हार

पर खड़े हैं।

मैं उनके सम्मुख गया।

उन्होंने मुझे देखकर धिष्टता से सिर नवाया। एक मे गमन स्वर में कहा "राजकुमारी की आज्ञा है कि आप अभी बिलास भवन में चर्चें। यदि आपने धनज्ञा की तो हम "

मैं उनके प्राणें बाण्य का तात्पर्य समझ गया।

पत्नी को कक्षपती-सङ्गपती छोड़कर मैं राजकुमारी की सेवा में उपस्थित हुआ। उस दृष्टि ने मुझे सहानुभूतिपूर्णक इतना भी नहीं पूछा कि मेरी पत्नी का स्वास्थ्य कैसा है ? वह तो मधु की मारकता में उगमस पड़ी थी।

मृत्यु हो रहा था।

मुझे नाचने की आज्ञा भी गई। मेरा विचित्र नृत्य हँसी का उत्पादक कहलाता था।

मैं नृत्य करने लगा। सब बाँधियाँ मेरा कूहन-नृत्य देख-देखकर सिलसिलाकर हँस रही थीं। उनकी सिलसिलाहट मेरे धमिर पर हवाइयों की चोट-सी गया रही थी। व्यथा से घामरोलित मेरा हृदय रो पड़ा।

मेरा रोदन जगका गया परिहास हो गया।

एक परिचारिका ने हँसकर कहा "देखा राजकुमारी सा इस नृत्य में रोना कितना अच्छा लगता है ?"

राजकुमारी ने मारन स्वर में कहा "नृत्य को रोज करने के साथ-साथ चतनी ही तीव्रता से रोओ।

मैंने नृत्य को रोज किया।

वास्तव में मैं कूट-कूटकर रोना चाहता था और कूट-कूटकर रोने के लिए नृत्य की मति में तीव्रता लानी आवश्यक था।

मैं दुःख में उगमस होकर जोर-जोर से उछलने लगा।

मधु व्यथा आभ और आत्ममत्ताभि।

सब बाँधियाँ धट्टहास कर पड़ीं।"

रामू ने देखा कि विद्वपक की धालें भर छाह हैं। उसने अपने कुप्टे से अपने नेत्र पीछे धीरे ध्यवा को धाने बहाये मया—

“उमके ठीगरे दिन इसी प्रकार के एक उत्सव में एक परिचारिका ने धाकर दुह-मंवाह मुनाया “राजमाता की तबीयत अचानक बिगड़ गई है, उन्होंने धायको इसी समय बुलाया है।

यै उस समय प्रभु से कामना करने लगा—“हे प्रभु इस समय यह अपनी माँ को कौन उत्तर दे दे ताकि इसकी माँ अपने दुर्भाग्य को अपनी तरह पहचान ले। यह जान ले कि जिस तरह मैंने अपने बंध का हवा नाश करके बाह-बाह में उन्हें कष्ट दिया था वही कष्ट आज इसकी अपनी संतान में उसे दे रही है।”

वही हुआ। पुणवती ने तपाक से उस वाली से कहा “आकर राज-माता से कह दो कि अभी हमें समय नहीं है हमारा उत्सव अपने चरमोत्सव पर है।”

परिचारिका लगी गई।

बड़ी रानी अपनी बेटी का बिना मूह देखे ही मर गई। अपनी रक्त से अपनी उमकी बेटी पुणवती ने माँ की मृत्पु पर ही प्रभु की नहीं बहाये। आमा पीछे धीरे धानगह करो।

धासन बल्ल मया।

राजकमारी ने प्रजा पर तनिक ध्यान नहीं दिया। प्रजा का अस्तंठोप बिगड़ने का रूप धारण करके मया।”

विद्वपक लुप्त मोचन ने कहा “जीवन घटनाओं का कैल है। वैचिष्य मया हुआ है उसके हर एक अणु में।

समय की कौन रोक सकता है ?

एक दिन रात के समय मलुवती एकाकी बेटी-बेटी बाँसुरी बजा रही थी। आज उसके स्वर में प्रसन्नता की बगह ध्यवा थी। आज उसके स्वर के माधों में उसके नारीत्व की बृथा धीरे धपधाम-जगित ध्यवा थी।

बाँसुरी बाज रोकर वह फिर कल की घटना पर विचार करने

सबी । कम एक राजकुमार घामा था । उसने उसको अपमानित किया ।

‘यह मेरा सर्वथा अपमान है । यह बड़बड़ाई—‘मुझसे सुन्दर, मुझसे अधिक गुणवंती मुझसे अधिक वैभव-सम्पन्न ? यह असंभव है, मत्ता यह कैसे हो सकता है ?’

फिर राजकुमार के शत्रु गुणवंती के कर्ण-कूहरों में घुसने लगे ‘तुम्हें यदि अपने रूप पर बंम है तो एक बार महिमपुर की राजकुमारी के दर्शन कर के पर तुम्हें वर्त्तन कौन करने देना ।’

अपमान घाम घीर पीड़ा ।

गुणवंती तिममिमा उठी । घावेस में उसने अपने अक्षर काट लिए ।

‘मैं उस राजकुमारी का मुख चाहती हूँ । उसका कटा हुआ मुख ।’

‘मत्ता नहीं’ एकदमोचन में पीड़ा से कराहते हुए कहा—‘ममू दुर्बलताओं को दूरा करने में सहजता से क्यों सहायक बन जाता है ? कदाचित् इसलिये की पापों की बुद्धि कर्ता के बिनाश का सीमा कारख है ।’

गुणवंती बेरना से अभिभूत हुई अपनी शय्या पर करवें बरत रही थी कि उसे बीछा का मधुर स्वर सुनाई पड़ा । वह बहुत समय तक उस बीछा के स्वर को सुनती रही और अन्त में उसने उस धीरे जाने का निश्चय किया ।

वही पाकर उसने देखा—एक आत्यन्त कपटान मुख है जो अपने रज के समीप पड़ाव डाले उन्मादित अवस्था में पड़ा है । उसके समीप एक पादक बीछा-बादन कर रहा है ।

उसने अपनी बाँधी को कहा और अपने आनमन की सूचना दी ।

वह आपत्तुक गुणवंती को देखते ही मुख हो गया और उसे एकदम देखकर कहा ‘मैं राजा रिसामू का अधिकारी बीर कर्णहू हूँ । मेरी विशेषता है कि मैं जिसे चाहता हूँ उसे किसी भी तरह प्राप्त करता हूँ ।’

गुणवंती ने ठपेला से दृष्टि घुमा ली ।

‘सुन्दरी !’

“तुम मुझे क्यापि प्राप्त नहीं कर सकते ।”

“बहु नहीं हो सकता । तुम बीसी सुन्दर मुवती को हर तरह प्राप्त करके घपने को लौभाय्यशामी समझेगा ।

“फिर तुमने यह निश्चय कर लिया है कि मुझे प्राप्त करोगे ?

“मैंने तुम्हें यह दिया है न कि मैं जिस वस्तु को चाह लेता हूँ उसे प्राप्त करता ही हूँ या उसे प्राप्त करने में घपना बलिदान कर देता हूँ । पर तुम्हें यह जानकर प्रसन्नता होयी कि अभी तक मैंने असफलता के कारण नहीं बुझे हैं । मैंने जो चाहा उसे पूरा किया है ।”

गुणवंशी ने अल्पकाल के लिए मौन धारण कर लिया । स्वसिंह उसे प्यासी घाँवों से देखता रहा । मैं इसे प्राप्त करूँगा उसने मन-ही-मन सोचा ।

“मुझे प्राप्त करने की प्रतिज्ञा धारणत छोड़ो है । क्या उसे पूरा कर सकोगे ?

“यशस्व !”

“मैं महिमपुर की राजकुमारी का मुख चाहती हूँ कटा हुआ मुख ।”

स्वसिंह पर जग-मर के लिए बिजली गिर गई । उसके मुँह से हठव निकल पड़ा कुप्ता ।

“बस दूट बने । मैं कहती थी न कि मुझे प्राप्त करना सरल नहीं है । तुम्हारे वेषा व्यक्तित्व—“मैं जिसे चाहता हूँ उसे प्राप्त कर सकता हूँ” यसे ही कह दे पर ऐसा करना बहुत कठिन है । नादान बीर, मैं कहती हूँ कि तुम घपने इस सिद्धान्त को धाज से बदल दो ।”

“स्वसिंह ऐसा नहीं कर सकता ।”

“मैं तुम्हें बीसी लगती हूँ, स्वसिंह ?” गुणवंशी ने मातों के दल को बरता ।

“सुन्दर !”

अथम दृष्टि-बिभ्र प्रेम का प्रभाव मैं समझती हूँ तुम पर पूर्ण रूप से छा गया है ।”

“हाँ।”

“मैं समझती हूँ कि तुम यह भी चाहते हो कि मैं गुलबर्ती से विवाह करके धनगपुर का महापुत्र बन जाऊँ ?”

“हाँ।” हठात् उसके झूठ से निरुत्ता।

गुलबर्ती ने तुरन्त धनुमान लया लिया कि यह तक्षण उस पर पूर्ण रूप से दास्यत्व हो गया है। अब यदि इसके बंस को बड़ा और उभारा जाय तो यह बड़ा से बड़ा अपराध कर सकता है।

बासना सब विवेक पर विजय पाठी घाई है।

मैं समझती हूँ क्यासिंह ओ तुम कह रहे हो उसे कर नहीं सकते। कबली से करनी अश्वस्त बुझर है।” इस बार गुलबर्ती ने अपना मुँह उल्टा। वूसरी ओर घूमा लिया। यह उल्टा क्यासिंह के लिए असह्य हो उठी। उभा रिसामू भी उसका सम्मान करते थे क्योंकि उन्हें इस बात का पूर्ण विश्वास था कि क्यासिंह ओ कह देता है उसे पट करके ही छोड़ता है।

एक बार उभा रिसामू ने उससे इतना निवेदन किया था कि उसे सोनपुर की राजकुमारी चाहिए। आदेश मैं उसने ‘हाँ’ कह दी। फिर क्या ? वह प्राणों की बाजी लगाकर उसका अपहरण कर लाया था।

क्यासिंह उठावशी से बोला “मैं महिमपुर की राजकुमारी का क्या हुआ मुझ तुम्हें लाकर दूँगा।”

“प्रतिज्ञा।

“प्रतिज्ञा।”

फिर तुम निश्चित रहो कि तुम्हारे आगमन पर मेरी पत्नई तुम्हारे घरणों में बिठी होगी।”

क्यासिंह ने कहा “यच्छा मैं जाता हूँ।”

“आविष्म ग्रहण किए बिना मैं आपकी नहीं जाने दूँगी। कम से कम सात रात-भर के लिए आपको मेरे यहाँ विधायन करना ही होगा।” गुलबर्ती ने साइड कहा पर क्यासिंह क्यासिंह के बलीमूत हो गया था।

पीर बिदु बिनेक से सर्वसा होन बह करण बढ़ाने हूए बोला 'अब तो मैं आपका आतिथ्य सफलता के परचात ही ग्रहण करूँगा ।'

गुस्सबंदी ने चाते-चाते सर्व्वम्ब कहा 'कहीं असफलता हाथ लगी तो ?'

'तो स्पतिह अपने आपको बिसर्जन कर देना ।

महिमपुर घनघनुर का पड़ोसी नगर था ।

मुन्ही पीर समूह, बीसा स्वर्ण । मोला-माया जसा धिब । सुन्दर पीर गुल्लो बीमा बिष्णु ।

कनिह साध्य-जसा म महिमपुर पहुँचा । सराय में उसने अपना डेरा डाला । सराय की स्वामिनी एक मासिन थी—फूलकुँवर ।

मौज की सीमा पार करके उसका मन प्रौढ़ता की ओर झुक जा रहा था । बहूँदा रम मछीला उन पीर मधुर-आपिणी ।

उसने स्पतिह का बटोही जालकर मध्य स्थापित किया । आतिथ्य-प्रथा महिमपुर की विशेषता थी । मासिन ने भक्ति-भाव से उसकी सेवा की ।

सेवा में जीआतिपीम निवृत्त हाकर उसने स्पतिह से आपना की "अब आप बड़े समय के लिए बिभाम कीबिण, मैं सभी राजकुमारी को फूल देकर आई ।" पीर उसने अत्यन्त जस्वाव के साथ यह भी कह दिया "राजकुमारी की केवल मेरे हाथ के गुँबे फूल ही पसंद है इसलिए वह इस अधिकृत दागी को फूलकुँवर के नाम से पुकारती हैं ।

स्पतिह ने उत्साह में कहा "इसका मतलब यह हुआ कि तुम्हें राजघराने की ओर से विषय सम्मान प्रदिष्टा प्राप्त है ।"

"हाँ ।"

"फिर तो तुम्हारा यह पीर मासिनों से ठँका होगा ?

"निस्सन्देह ।"

"तुम्हें यह भी बखिबार होगा कि तुम जिसे चाहो अपने साथ

घन्ट-पुर में ले जा सकती हो ।”

“हो ।”

“फूलकुंवर !” कर्पसिंह ने कोमलता से कहा / क्या तुम मुझे घन्ट-पुर में ले जा सकती हो । मैं प्रासाद का अवलोकन करना चाहता हूँ । इस अवलोकन के बखते मैं तुम्हें बीस सोने की मोहरें दूँगा ।”

फूलकुंवर के मुँह में पानी भर आया । प्रसन्नता के मारे वह बोस नहीं सकी । कर्पसिंह ने कहा ‘सुनता आया हूँ कि मानिमें बाहें तो बड़ का हार रहस्य बटा सकती हैं । पीर तुम तो फूलकुंवर हो । बड़ की विशेष मानिग हो राजकुमारी की प्रिय मानिग हो । क्या तुम मेरे लिए इतना नीमहीं कर सकती । सो ये बीस मोहरें पीर यह बन्धहार ।”

फूलकुंवर बन्धहार बँधकर मुग्न हो गई । उसने सही पल बन्धहार को अपने सीने से सजाया ।

तारों की तरह चमकते हुए हीरे, बिजली की भाँति दमकती सोने की साँकलें ! सुन्दर पीर अनुपम !

“यह उपहार है फूलकुंवर !”

फूलकुंवर ने कहा आप तुरन्त मात्मी के बस्त्र पहन लीजिए, मैं आपकी बड़ में ले चर्चूँगी ।”

कर्पसिंह ने बस्त्र बदल लिए ।

साध्य-नीति समाप्त हो गया था ।

रजनी का तारों-भरा घाँबल संसृति पर आच्छन्न हो गया था ।

महिमपुर की राजकुमारी स्नान से निवृत्त होकर अपनी सखियों के संग ठिठोली कर रही थी । मानसरोवर में गहरी हँसिनी की बाँधि उसका सच स्नाति तन मसाल की भीमी ज्योति में बमक उठा था ।

मानिग के साथ कर्पसिंह ने गढ़ में प्रवेश किया । उसका ध्यान बड़ के रास्ते सब बीधियों पीर मोहों पर पड़िक था । वह बड़े ध्यान से बड़ के निर्मास की देख रहा था ।

मानिग कमी-कमी लक्ष्मि हो उठती थी ।

पूछ नी बैठी थी "एसे बुर-बुरकर क्या देख रहे हो ?"

"ओह, कितना भव्य प्रासाद है ! मनोहर, सम्पुष्ट मैंने ऐसा सुन्दर प्रासाद कभी नहीं देखा । फूलकुँवर, वास्तव में तुम बड़ी भाग्यशालिनी हो इस प्रासाद में तुम्हारा सम्मान देख मुझे भी बाह होने लगी है ।

फूलकुँवर अपनी प्रशंसा सुनकर खूबी नहीं समा रही थी । उसे ऐसा लग रहा था जैसे वह कोई छात्राएँ मानिन नहीं अपितु सदा प्राप्त कोई अधिकारिणी है ।—

क्यासिह ने हठात् पूछा "फूलकुँवर, तुम्हारी राजकुमारी का निवास स्थान कहाँ है ?"

"वह रहा सामने ।"

राजकुमारी ने एक मीने रेशम की लूंगीबार जोड़ी पहन रखी थी । उसकी बंदुकी केवल उसके बल को इकट्ठा हुए थी । केवल राशि उसकी चुली थी ।

मानिन के साथ एक अपरिचित मुक को देखकर वह बोली "वह कौन है ?"

फूलकुँवर ने मत्त-मस्तक होकर विनम्र धम्कों में कहा "वह मेरी बड़ी बहन का बड़का क्याकुँवर है । प्रातः के द्वार इसी के बनाये हुए हैं ।

क्यासिह ने प्रसन्न किया । फिर उसका ध्यान राजकुमारी के मुख मंडल की ओर होता हुआ उसकी बर्तन पर रुक गया । राजकुमारी कितनी सुन्दर है उसकी वास्तु कितनी आकर्षक है, उसकी आँखें हिरण्य जैसी हैं या नहीं उसकी नाक छोटी जैसी है या नहीं उसके धवरों पर तस्लाई की भस्माई विद्यमान है या नहीं इस किया की ओर उसका ध्यान जरा भी नहीं गया । उसकी दृष्टि केवल राजकुमारी की बर्तन की ओर लगी हुई थी ।

फूलकुँवर ने अपने पाँव से उसे सावधान करते हुए कहा "मैं समझती हूँ कि राजकुमारी को हमारे यौने के बनाए हुए द्वार बर्तन बनाये होने ?"

अपना अपराध स्वीकार कर लगी ।

•

•

रक्त-सना बीभत्स और भयानक मुल की बार-बार बत्तों में परि
वेष्टित करता कर्णसिंह अमरपुर की ओर भागा था रहा था । उसके ज्ञान
तंतु इसने खंचल हो सठे थे कि उसे इसके अलावा किसी भी वस्तु का
ध्यान नहीं रहा कि वह बाकर गुणवंती को महिमपुर की राजकुमारी
का मुख से ओर उसे कहे कि वह अब उसकी प्रसन्न-वत्नी बनकर अपनी
प्रतिष्ठा पूर्ण करे ।

भापते भापते उसका समस्त बदन पसीना-मसीना हो गया था । उसकी
अपनी स्वांस बोड़े की स्वांस की आँसि फूल रही थी । व्यास के बारे उसका
मना सुखा था रहा था । लेकिन वह तीव्र गति से भागा था रहा था ।

उसके मस्तिष्क में तीन शब्द गूँज रहे थे —

फटा हुआ मुख ।

गुणवंती !!

बिवाह !!!

अचानक उसकी दृष्टि अमरपुर के शहर पर पड़ती हुई ध्वजा पर
पड़ी । उसके समीप बड़ी मछाल बन रही थी । उस मछाल में उसके
बिना जाहे ही उसकी दृष्टि अपने हाथ के बरत की ओर जाती गई ।
रक्त से सना बीभत्स साल-साल बरत ।

वह काँप उठ्य ।

उसने धरु-वर के लिए मेघ मूर्खकर प्रभु की साहस मीमा । एकाएक
बोड़ा हिमहिमाकर रुक गया । कर्णसिंह ने उस बलकार पर वह एक
कदम भी धाये नहीं बढ़ा ।

साधार उसने धागे की ओर देगा ।

एक धजगर फल फैलाये हुए था ।

मृत्यु की धारिका प्यार की धारिका पर बड़ गई । मुख गुणवंती
ओर बिवाह इन सब पर मृत्यु का अंककार गहरा और अधिक गहरा हो

गया। उसे बस मृत्यु के नितान्त बंधड़े ही दिखाई पड़ रहे थे। उसने बोड़े को दो कदम पीछे किया और तबबार खींचकर बाजपुर के पन के दूसरी धोर में बढ़ा। धपपर बहुत भारी का धत वह पीछता से बूम नहीं सका और बर्पासिह ने उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिये।

मृत्यु पर विजय पाकर उसने महिमपुर की राजकुमारी के मुन को संभासा। मुख बरन में से कहीं नुक्क गया था। जीभा—सामने एक और पत्थर के टुकड़े की तरह पड़ा था।

स्वर्तिह ने उसे उठाया। न चाहते हुए भी उसने उसे देखा। सहसा उसकी नर्सी में शम का संवरण हुआ और पन-भर बेसे हुए उस उन्मत्त मुख का रूप-रसंन उसके नेत्रों में छैर उठा। वह मातिन के साथ राज कुमारी के प्रासाद में गया था। राजकुमारी ने उसे असम्म और प्रोत्साहित करने के लिए अपना कंठहार दे दिया था। कितना शुचितापूर्ण सीन्धर्य का उसका प्रमाणन उसके कमल की तरह श्रितर धामन पर प्रदीप्त थी। सरन बीजन और मोला स्वभाव।

‘मैंने उसे लथ भर में मार दिया। घात्सा की पहराइशों से एक ज्वनि बठी। स्वर्तिह कोप बठा। घात्सा की पहराई से निरन्तर उमझी हुई ज्वनि—‘तू ने उस पवित्र प्रतिमा का श्रंजन कर दिया उसके शुचिता के आचार बीजन की विरुद्ध कर दिया तू महापापी और दुष्ट है। मुटिलता के कहने पर सहस्रमता का इनन करना बहामुदता है ‘ओ बापी, एक दिन अपराध में घामन लेनेवासी कुलवंती इत्या की जीवन सुख समझनेवासी कुलवंती कहीं तेरे घोणित की मांग न कर ले। और तू शक्ति मायेध में भाकर अपने आपका तर्पण न कर दे क्योंकि वह बहुत दुष्ट है वह बहुत निष्ठुर है वह रक्त-पिपासु है।

स्वर्तिह का मन और नन विधिस हो गया। महिमपुर की राज कुमारी का मृग उसकी मधुर मुसकान उसका सीन्धर्य बार-बार उसकी पीछों के धाये नाचने लगा। वह बबरा हो उठा। उसने तपकर मुख प्रभासा बरन में सपेठा और धर्मनपुर के प्रासाद की धोर बढ़ा—यह

सोचता हुआ कि ईश्वर को करता है प्रणाम ही करता है।

यह भी बहारहीबारी में बरण रखते हैं। मुण्णबंती ने उसका राजसी सम्मान किया।

कक्ष में प्रवेश करते ही उसने एक धीरे बर्षसिंह को घासन पर बिठाकर कुम्हने का बचक बमावा धीरे दूसरी धीरे उस मुख को हाक में सेकर घट्टहास किया। घट्टहास बड़ा भयावह था। बर्षसिंह कांप उठा। उसके हाथ का बचक नीचे गिर गया। उसके मुँह से हठात् बीजे स्वर में निकल पड़ा 'भूर।'।

मुण्णबंती ने उसकी धीरे ठनिक भी ध्यान नहीं दिया। उसने मुख को अपने सिंहासन के नीचे रख दिया ताकि वह उसके बरणों का सहारा बन सके। बर्षसिंह को न-बाने क्यों क्रोध था गया। उसने पर्म स्वर में कहा 'क्यों की राजी का इनाम घपमान क्यों करती हो ?'

प्रिये किसी का ठाना था कि महिमपुर की राजकुमारी का क्या तुमसे अधिक आकर्षक है। उसके पाँवों की होड़ भी तुम नहीं कर सकती। वह व्यक्ति धान होता तो कितना अच्छा होता। मैं कहती—देखो यह मेरे पाँवों का घासन है।

केवल तुमने इतनी-सी बात क लिए इस नेचापी के प्राण तिका सिये।"

'बात की मार आपत्त पीड़ाजनक होती है प्रिये। छोड़ो इन बातों को। घायो धान इस ज़ुली में नश्य-गीत हो जाये।"

बर्षसिंह का मन एकाएक पृष्ठा से भर गया। व्यक्ति का मया उत्तर चुका था। उसने देखा कि गंगावती का मुख कर्मकों से भरा हुआ है। उसकी मुसकान बिपमरी है। उसकी पाँवों में देवता का सागर सहारा रहा है। धीरे उसकी दृष्टि में विनाश की संज्ञा कटारी।

वह विचलित हो गया। फिर संजता। दुर्जसता जायी।

उसने प्यार से पुनरा प्रिय मैंने तुम्हारे मन की इच्छा पूर्ण की है धीरे तुम मेरे मन की क्या एक इच्छा पूर्ण कर सकती ?"

धनस्य ।”

“बचन बेती हो ?”

“बेती हूँ ।”

रूपसिंह ने एक बार गुरुवर्ती का अनुकूलितपूर्व नृम्बन लिया ।

फिर उसने कहा “अपनी बीम को बाहर निकालो न धिये ।”

गुरुवर्ती प्रयास धातिलय में भाग्य हो गई । नृम्बनों की बीजार में बिभोर-सी होकर उसने पूछा “धिये तुम्हें छटना पसीना क्यों पड़ा है ?”

“तुम अपनी बीम निकालो ।”

वह तो मैं निकाल रही हूँ । पर मैं पूछती हूँ कि तुम इतने बहरा क्यों पड़े ? मैंने तो कहनों के प्राण लिए, फिर भी इतनी नहीं बहराई ।”

“मैं कहाँ बहरा रहा हूँ धिये तुम बीम निकालो न सब तुम बड़ी विविध बीर सुन्दर हो । बताओगी धन तुम्हारी क्या इच्छा है ?”

“सब तुम प्यार करते रहो जो वह बीम ”

गुरुवर्ती ने बीम निकाली । रूपसिंह ने एक बार उसे प्यार से चुम्बा और बीरे-बीरे उसने अपनी कमर में छिपी कटार निकालकर गुरुवर्ती की बीम काट डाली ।

गुरुवर्ती ने मार्ग किया । फिर वह पत्थर हो गई । रूपसिंह अपने कलाट का पसीना पोंछता हुआ गवन-वेग से प्रासाद से बाहर हो गया ।”

•

•

•

विदुषक संकटमोचन ने भरती पर विविध चित्र बनाते हुए कहा, “वह पूर्णी प्रचवंती है प्रभात ही प्रभा के सम्मुख जब इस रहस्य का उद्घाटन हुआ तब वह विरोध करने पर उठाऊ हो गई । राज्य-कोप समाप्त हो गया था प्रभा धर्म और धातुमक वस्तुओं के धमार में पीड़ित थी । मैं भी उसमें सम्मिलित हुआ । मुझे इस दृष्ट गुरुवर्ती ने बहुत मार्मिक संख्याएँ दी हैं, इसलिये मैं इस बात के लिए कटिबद्ध हूँ कि किसी भी तरह उसे बन्दी बना लूँ और उसके किए का बदल दूँ । पर वह

सूखछीने की भाँति चौकड़ी भरती ही रहती है। पवन-वेग से मावटी है। मैं उसे बम्बिली बनाने में सबसेषा प्रयत्नरत रहा। लेकिन अब मुझे विश्वास है कि मैं उसे बम्बिली बनाकर ही छोड़ूँगा।

जल-मर के लिए गहरी निस्तब्धता छा गई जैसे सभी संकीर चित्तन मनन में लीन हैं।

बारह

घपराहूँ बेला—

राजा रिशामू घपराहूँ-कला में यकान मिटावे के लिए तन्त्रिम घबस्ती में पड़े थे। घाब उन्हें अपने जीवन के उस पक्ष की घोर घोर निपटारा नजर आ रही थी जिस पक्ष को प्रेम या घपनापन कहते हैं। अपनी क्रूर-पक्षा के कारण उनके चेतन प्रीति घबस्तेतन मन में जो आत्ममत्तानि के पीड़ित भाव उत्पन्न हो गए थे उन्हें छुपाने के लिए उन्हें कभी-कभी आत्मत कूर बनना पड़ता था। मानवीय-नीया का उत्सर्जन करना पड़ता था। दया का प्रतिष्ठापन करना पड़ता था और धर्तकार की समय कर अपने मालस की समस्त कस्तु अनुमूर्तिवों का मलर घोट देना पड़ता था।

कभी-कभी वह सोचत घोर आत्म-आलोचना भी करते थे। तब उन्हें अपना जीवन उस पर्वतीय पक्ष से कम दुर्बल नहीं जान पड़ता था जो नातिन के चलने के आकार-सा प्रतीत होता है। उस पक्ष के निर्वास में उनकी ध्वंस-भूमियां अट्टहास किया करती थी। कहती थी कि तु मनुष्य

नहीं धारम-ध्यान से पीड़ित एक संन्यास है जो जलता है धीरे जलकर दूसरों को भी जलाता है ।

रानी का एक क्षुब्ध जीवन के पीछे मायकर अपना जीवन उत्सर्ग कर देना राजा रिसालू के लिए अतिशय प्रश्न बना हुआ था ।

“क्या नारी प्रेम का बहता हुआ तूफान है ? यम वैभव निवास महारानी का जब सबको छोड़कर एक साधारण व्यक्ति के पीछे चरित हीन कस्ता व्यक्तिचरिणी बुराचारिणी बनकर भाग जाना धीरे फिर मृत्यु का बंध अनुपम बरवान समझकर ग्रहण कर लेना इसे क्या कहा जा सकता है ? क्या यम के प्रारम्भ में नारी कोमल धीरे धीरे में कर्तव्य निष्ठ हो जाती है ? ढूंढो ! नारी कितनी महान् धीरे देखे ! फूस की तरह कोमल धीरे ईश्वर की तरह निर्दोष ।”

“तो ?” राजा रिसालू को कोई घटना स्मरण हो उठी । उनकी दृष्टि रावण-कन्य के एक चित्र पर पड़ गई । एक मायता हुआ हिरण का बोझा था । सुन्दर धीरे स्वस्थ । नीकला धीरे बचल ।

“पर राजा रिसालू जीवन के यम के अन्तिम छोर पर भी घबरेला है ? नारी के तन पर घाबिपत्य बमानेवाला यह राजा नारी के मर् के सम्मुख पराजित हो गया । रथमें बोनियाँ धीरे अपहरण की गई युवतियों से उसके मातस की प्रेम-लगा छात नहीं होती वह तो विन-अतिविन प्रबल होती जा रही थी उसकी सुमन्य वेश्वा को पीड़ा पहुँचा रही थी उसकी समस्त इच्छाओं को नाचते हुए स्वल्प को विकृत धीरे अपने बना रही थी उसकी महत्वाकांक्षा को कुटिल कर रही थी । वह लुटा बी—नारी के तन पर विषम परती के कन में किसी सौंदर्य-सम्पन्न युवती का छे सहर स्वीकार करना ?” राजा रिसालू अपने भाग पर लड़क उठे ।

पर उनकी कुकुरता पीराक्षिप्त रीत्य-सी कुकुरता देव-कन्या का हृदय विषम करने में सर्वथा असमर्थ रही । बातना की विपुलता ने उनके ध्येन को पैगोभूत नहीं होना दिया—एक केग पर । विषय यह प्रसक्त रहे । मैनिन धाम यह निर्दोष कर रहे थे कि यह अपनी तीसरी रानी का हृदय

प्यार से भीतरों से सब पर बसात्कार और धरतीप्यार नहीं करेंगे। वह कृष्ण-पता की बसा धीरे प्यार के धावरण में विस्मृत कर देंगे।

चतुर्दश के आगमन ने उनकी विचारधारा को भंग किया। वह धीरे के निष्ठुर धाकर भीमे स्वर में बोले 'सम्मा धन्यवाता ने।'

'कहो?'

'आर्यों की याचना करता हूँ, महाराज।'

'असम। कहा कपनगर के महाराज ने क्या कहा?

'मैं नहीं गया था।'

'महाराज भिमे?'

'हाँ उन्होंने मेरी बहुत ही आश्चर्य की।'

'तुने हमारा सन्देश कहा।'

'मैं आपकी आज्ञा का पालन करना अपना कर्तव्य समझता हूँ। मैंने आपका सन्देश सुनाया।'

'उन्होंने क्या कहा?

'महाराज उनके उत्तर को आज नहीं सुनें तो अति उत्तम होगा?'

'क्यों?'

'आज कई दिनों के पश्चात् आपकी भीमुख पर शांति की रेखाएँ देखी हैं। नूयी रानी ने आपकी अज्ञाति को हर्षण कर दिया।'

'उरा महाराज शांति को मृत्यु और प्रसन्नता को विष समझता है, यदि किसी ने उनकी किसी भी माँग का अनादर किया हो तो?'

'उन्होंने कहा कि राजा रिसानू प्रसन्नता के मरने का सारे संसार की मान प्रतिष्ठा खरीदना चाहता है। उसे जाकर कह दो कि कपनगर का राजा सिद्ध की सन्तान है। यहाँ मर जायेगा पर भास नहीं जायेगा। बेटी को मारकर अपने अहम् और धातु-सम्मान की रक्षा कर लेना पर राजा रिसानू की अपनी बटी लेकर अपना मस्तक नहीं रुकावेगा। धान और धान नहीं बेचेगा और -'

'युव क्यों हो गये सब कह जानो।' राजा रिसानू इतने अविचल हो

नये जैसे छती की भूख पर समयान धिन हुए ने ।

“धीर मैंने कपनगर के नरेश से कहा कि आप महाराज रिसालू की व्यक्ति को जानते हैं । उमड़ता हुआ शानर जिस प्रकार छोटे से द्वीप को अपने में समाहित कर लेता है, उसी प्रकार कपनगर का बिन्दू तक मिटा दिया जायेगा । उन्होंने उत्तर दिया कि हम जानते हैं कि शानर में रहकर ममरमन्त्र से बीर नहीं किया जाता पर यदि मगरमन्त्र छोटी-छोटी मछलियों के प्राण हरने पर उठाऊ ही हो जाय तो क्या किया जाय ? माना कि राजा रिसालू के पास अपराजय व्यक्ति है पर भगवान के समक्ष अपराजय का भूस्वाकन व्यक्ति द्वारा नहीं पाँका जाता । वह तो आप धीर पुष्प के सहारे मनुष्य धीर मनुष्य के कर्मों का सेखा-बोखा करेगा ? हम कपनगरवासी प्रताधिकार धीर आपाचार सहने के धापी नहीं हैं । मैंने समझा कि मैं राजकुमारी से स्वयं मिलकर उसकी भी राय जान लूँ । पर उस अभिमानीनी ने कहा कि मैं काने धीर कल्प व्यक्ति को देखना भी पसंद नहीं करती ।”

“काना उसने हमें काना कहा । बतुरसिंह । सेना को रवाना करो । हम कपनगर की ईंट-ईंट बजाकर उसे लतना ही कल्प बना लेंगे जितने कि हम हैं ।”

बतुरसिंह चला गया ।

राजा रिसालू दर्पण के सम्मुख खड़े हो गये । कल्पना हाहाकार कर उठी । बीमब धीर विमास उपहास से खिलखिला पड़े । बृणित उपहास के बासावरण की उनके चारों ओर सर्जना हो गई । काना-कुरूप काना कल्प काना-कुरूप से दोनों शब्द उनके कर्म-कूरों में घुंजने लगे । दर्पण में उन शब्दों को लक्ष्य बना दिया । क्रोधावेश में राजा रिसालू ने दर्पण को बूर-बूर कर दिया ।

खंडित दर्पण के टुकड़ों में राजा रिसालू की कल्पता के कई रूप दीखने लगे । उसने जोर से पुकारा “बतुरसिंह ।

राजी ने जाकर कहा “नहीं नहीं है ।

माया सेनापति भी से कहो कि सेना को घाज ही कुछ करा दिया जाय ।”

बासी बनी गई । राजा रिसालू की बहमकदमी कमरा बढ़ती गई—
मझे काना कह दिया । घातकी घोर भमौला की अगह काना कल्प
में कल्पनगर को विध्वंस कर लूना विध्वंस ।”

गुरुदेवी ने जब सुना कि महाराज में कल्पनगर को विध्वंस करने की
प्रतिज्ञा कर ली है । तब वह माया माया राजा रिसालू के पास गई ।
उसके चरण स्पर्श करके घबुमरी घातों से राजा रिसालू की घोर
देखा । राजा रिसालू की कूटा घोर बुद्धिवा न-जाने लूनी रानी के सामने
क्यों लुप्त हो जाती की ?

“न रो रानी ।” राजा रिसालू ने धीरे से कहा “यह राजनीति है
वही मरुत-रूपीहार सरा मनाया जाता है । तु निर्दिष्ट रह, तेरे राजा का
कोई भी भाव बाँका नहीं कर सकेगा ।”

राजा रिसालू ने उसे अपने हृदय से लबा लिया । लूनी सिसक पड़ी ।
“रोती है नाबाल तु समझती है कि तेरा पति निर्बल हो गया है ?
नही रो राजा रिसालू की शक्ति अजेय है । उसका विरोध बिनाय है ।
जा तु विध्वंस कर ।”

लूनी बनी गई ।
राजा रिसालू ने सोचा “न जाने इस लूनी पर मेरा अन्तर इतना
क्यों हुरामु है ? मैं क्यों नहीं इसके समस्त सत्य का उद्घाटन करता कि
मैं भी ही अपनी परिस्थिति को मानेवाला हूँ । मेरी प्रभुति घोर वास्तव
में तनिक भी अन्तर नहीं भाया है बेचारी लूनी ।”

राजा रिसालू ने सच्चा पर करबट बदल ली ।

तेरह

रात का गहरा सन्नाटा ।

कानची हुई गुन्धला । अमनीत पवन । घाँट करती बरखी वीक्षित
धीर अन्तहीन मिट्टी का जन्म । सास्वत लई और लई का बरत ।

सैनिकों के नृपसकारी पद । भुङ्क की बिभीषिका मयमीत तारों की
बुझी-बुझी ज्योत्स्ना । राजा रिताभू का क्रोध विनाश मनुष्य के मर्म
की हत्या नृप का हारण जीवन की हत्या । दुष्कर्म पाप और प्रमाद ।
कोई नहीं जानता वा यह विनाशकारी मर्म किसे सुम्बर और अद्भुत
अद्वान को लड़-लड़ करम बड़ा जा रहा है ?

तीसरे दिन सोरह को राजा रिताभू की प्रबल सेना कपतल की
सीमा पर पहुँची ।

राजा रिताभू स्वयं घड़बाकड़ थे । उनके हाथ में चाप की भीम की
भाँति लालसायी तमवार थी । सैनिकों के बीच में खड़े होकर उन्होंने
को ही पत्र कहे—“तुम्हारे देवता का पुत्र इस बहारसीबारी के राजा

द्वारा धपमागित हुआ है। देखना उसका बरता चाहता है।"

घोर का कोप हुआ "राजा रितामू की बय ! राजा रितामू की बय !!"

रणभेटी बजी।

मुझ के सखाइों ने बयक-बयक बजकर छैनिकों की बरसाहित किया।
छैनिकों ने कपलपर पर धाकमस कर दिया।

ममानक मुझ हुआ।

सातवें दिन कपलपर का राजा लड़ते-लड़ते मारा गया। मरते समय उसके मुख पर पड़ी मानव का 'स्वतंत्र' छोड़ परतन नहीं। यदि मानव बस परतन बना दिए जायें तो उस पक्षी की तरह सतत प्रवृत्तनीत छोड़ जिने विजरे में बड़ी बना दिया गया है और जो अपने स्वामी की उस धकेल धक्का की प्रतीक्षा करता है जिस समस्या में वह अपने धनु स्वामी को पराजय कर सके।

प्रजा ने अपने राजा के शवों का अनुसरण किया।

राजा रितामू ने नगर पर वृष्टिपात किया। बनता हुआ मरभट सुनसान और आवाज। समझ-जगह मानव-मांस की बस-जनकर बिट-छाने की आवाज।

दुर्वर्ग और लड़ाक।

राजा रितामू के होंठों पर गूर मुगलान नाच उठी। वह सोच बैठा "वह काननर काना ही नहीं बग्या ही गया है। कृष्ण ही नहीं निरुप हो गया है।"

बाज की भाँति फाटकर एक वृद्ध ने राजा रितामू की मर्दन दबोच ली। एक मिनट में घाऊर उसे गूर किया। वह बिपाइ पड़ा "ओ वृष्ट ! देन इस नगर को। यह तेरा परिवार है, जलन है, सुप्ला है। तुने मेरे कनेज के टुकड़ को छीन लिया है। मगधान तेरा मुख और शानि छीन ले।" शोध में उसकी मुद्रित्या बँस गई। धीँधी से बूला की चिनपाटियाँ बरत पड़ी "वह काननर बाज तेरा नगर है। बाज तु इसका नाप मरबाइ

रखना धीर से जितने धब है, उन्हें हाटों धीर प्रासाधों में सजाकर इसका उस भावान् वासक की मूर्ति धबभोजन करना जो अपनी माँ से पूछता है कि यह क्या है ? धीर माँ कहती है कि यह चाँद है तेरा मामा हमें रात को प्रकाश धीर ठंडक देता है । तू मुझसे प्रेम करना मैं तुम्हें नहीं संसार से कहींपा "यह राक्षस है मानवी रक्त-मांस पीता धीर खाता है । ये हैं इनकी धारणा के महान् वचन—धब । विह्वल धीर पृथिवी माँसें जिनोनी दुगन्ध देवेवासे ककाल ।" धीर वह बूढ़ ओर की घट्टास करता हुआ समीप पड़े धब पर कट बूख की मूर्ति धिर पड़ा । एक पल धिमका एक पल ठरवा धीर एक पल में उसकी धारणा समके वन से निकल गई ।

तालिक पहरी उबासी राधा रिसालु के बेहरे पर छन गई । वह जाने बड़ा । बार करम बना ही था कि एक सुन्दर युवती प्रतिमा सी उसके सम्मुख लड़ी हो गई । वह उसे उस विचित्र दृष्टि से देख रही थी जिस दृष्टि से हम एक अकल्पनीय वस्तु का निरीक्षण करते हैं ।

राधा रिसालु ने झटकर पूछा "तू कौन है ?"

युवती विलसिताकर हँस पड़ी । बोली "तू मुझे नहीं पहचानता है ? मैं भरती की बेटा हूँ विचित्र बेटा । देख मेरे वस्त्र काले धीर कासे हैं ? धरे, तू मुझे नहीं पहचानता भरती का स्वामी होकर भरती की बेटा को नहीं पहचानता । तू कठोर की पराकाष्ठ का प्रतीक है । मेरा सुहान झूटकर भी मुझे याद नहीं रखता । हैन मेरा स्वामी भरती की पोष में किठना छाँव पड़ा है । इतना नाँव जिनने नाँव बहैसिए के तीर से भरकर भगवान् श्रीकृष्ण पद से श्री कृपालु राधा । क्या तू इस बीन युवती पर इतनी क्या नहीं कर सकता कि यह भी अपने पति की मूर्ति धिर धाँधि पा से । मैं युवती हूँ—वासनाओं धीर लालनाओं की धानार पाप का भंडार पर तू यह भी जानता है कि पनि के होते से समस्त बुराईयाँ एक घण्टे मोड़ में अपना रास्ता बदल लेती हैं पर धब ? वो क्या । तू अपनी बटार से मेरी धारणा निकाल से ताकि मैं उस दैत्य का भुँह नहीं देनू जो मृत्यु के कोन से नहीं डरता जो मानवी रक्त-मांस से अपनी

मान घोर मान का झंडा फहराना चाहता है। जो आपने यहूदों की सृष्टि के लिए जीवन की प्राणियों के साथ है।" घोर बुद्धि ने विजयी की भाँति कीकट रात्रि रिमासू की कटार अपने नीचे में धोके ली।

रात्रि रिमासू पल-धर के लिए विचलित हो उठा। मानव-संहार का ताण्डव नृत्य विह्वल रात्रि के रूप में हो रहा था। पर उसके अन्तर्गत की रक्षा को एक धारिणीय सुष की धनुषीति हो रही थी मानो वह कह रही थी कि कल्पन वह भूल गया कि तू कल्प है काल है।

तब रात्रि रिमासू ने कल्पन की धनुषी सपत्ति पर अधिकार करके अपना झंडा उसके नीचे पड़ पर बाँटा। बीमान भुजसिंह को यह भावना थी कि सारी लार्सी के बसाने घोर नदी में बहाने का प्रयत्न करके वह महाराज से लगे में विमें।

रात्रि रिमासू नगर के बाहर पाई गए लोगों की ओर चले। तभी एक सैनिक ने आकर समाचार सुनाया।

"बम्मा घमनाता।"

"क्या है?"

"रात्रिदुमारी बन्दी बना ली गई है।"

रात्रि रिमासू के चेहरे पर इतनी बेर के बार के भाव आये जिन्हें विजय न उत्तरमान मान कह सकते हैं। धनुष-धर स्वर में वह बोले "हम विजयी हो गये। अगुसिंह, हम वास्तव में विजयी हो गये।"

"सैनिक! उनको जितने बन्दी बनाया?"

"जिसे मैं नहीं वह अपनी इच्छा से बन्दिनी हुई।"

भुज-के भाव कीर थी है। उसे हमारे लगे में उपस्थित करो। हम उसे देखना चाहते हैं।"

"घमनाता? वह आपसे कल सुबह भेंट करना चाहती है। उसके साथ उसकी बायिका डोलन भी रहेगी।"

रात्रि रिमासू कुछ देर तक सोचते रहे। कल सुबह भेंट करने में क्या रहस्य हो सकता है, इस पर विचार-विमर्श कर उन्होंने निराशा

झोड़ा। जमीर स्वर में बोले "रात को कहा पहुँचा रखा जाय। ध्यान रहे यदि राजकुमारी भाम गई तो हम पहरेदारों को भीखें बीमारों में बाँट देंगे। बतुरसिंह ! हमें तुम पर अधिक विश्वास है। तुम्हारे साथ विश्वासघात नहीं कर सकता। इसलिए यह कार्य ठीके नेतृत्व में संभालित धीरे पुरा होना चाहिए।"

बतुरसिंह ने सिर झुकाकर कहा "जो चाहा।"

"पर ?" राजा रिसालू कहते-कहते चुप हो गये। बतुरसिंह बाता-बाता रुक गया।

"देखो बतुरसिंह, हम एक बार राजकुमारी को देखना चाहते हैं।"

"क्षेमिये।"

"लेकिन उसे इस बात का पता नहीं लगना चाहिए कि हमने उसे छिपकर देखा है।"

"जो चाहा।"

राजा रिसालू के भायी-भरथम कबल राजकुमारी के खेम की ओर रुठ गये।

छापी रात राजा रिसालू की नीद नहीं आई। राजकुमारी का अनुपम सौन्दर्य उसने अस्थिरक में छोरम की भाँति छत्र रखा था। रूप की ऐसी आकर्षक छटा उन्होंने बहुत कम देखी थी। बहू याम्निष्य के लिये आकलन हो उठे उठप उठे।

प्रकाश होने में जोड़ी देर थी। मटमैला धन्वकार प्राची अन्तरिक्ष में छाया हुआ था। ओर का तारा किण्विलतामे के लिये आधुन हुआ घीर प्राची में प्रकाश की धामा बबकी। बेसते-बसते प्रकाश मारे संसार में छा गया।

राजा रिसालू ने द्वारपाल को आज्ञा दी "आधी बतुरसिंह को बहो कि राजकुमारी को हमारे सामने उपस्थित करो।"

राजा रिसालू ने अभी बावब सजाया ही नहीं बिपा था कि बतुरसिंह ने पहराये हुए स्वर में प्रवेष्ट करते हुए कहा "अन्नदाता-अन्नदाता !

घम्बेर हो गया ।

“क्या हो गया ?”

“घम्बेर घम्बेर ।

कुछ कहो ।”

“राजकुमारी ने सार” से घपना मुँह घोर हाव जता सिये ।”

राजा रिशामू अपने आपको नहीं रोक सके । पवन-वेग से वह उस डेरे की घोर माये जिसमें राजकुमारी बन्धनी बनाई हुई थी । वीच का शीघ्र प्रवेश किया गया । उपचार भी हुआ सेटिंग व्यर्थ ।

तबमय एक पहर के बाद राजकुमारी की बेठना लौटी । उसके पास बतुरसिंह उवास बैठा था । उसने माँझें झोलते ही पूछा “महाराज रिशामू कहाँ हैं ?”

“अपने लोमे में ।

“उन्हें बुलाया जाय मेरी घोर है प्रार्थना की जाय कि वह एक पल के लिए अपने दर्शन दे जाएँ ।”

बतुरसिंह वहाँ से जमा गया । राजकुमारी के पास अब उसकी प्यारी झोलन ही रह गई थी । राजकुमारी को कराहते देख उसकी माँझों में घामू भर घाये । मर्राये स्वर में बोली “यह क्या किया राजकुमारी सा ।”

“मैंने वही किया जो मुझे करना चाहिए ।” उसकी माँझों में भी घमू छलछलाये ।

“अपने घाग पर इतना घट्याचार करके आपकी दित बड़ेस्व की प्राप्ति हो सकती है मैं नहीं समझ पाती ।” वह जिज्ञासा से एकटक राजकुमारी को देखती रही ।

“वह रूप नहीं होता तो कपनवर की पैमी कुरंसा ही नहीं होती मैंने आवेश में एक ही गलती की कि कुछ देर कर दी । यदि पहले ही इसे जमा जामनी तो मैं घपरधिन नहीं होती । मेरे माता-पिता का इस रातस

के हाथों सबंसाध न हीता ।”

“राजकुमारी सा । भग्न भव आपसे डर लगता है ।” वह डरती हुई बोली ।

“बूछा नहीं होती ?

“होती है ।”

“मैं तुम्हें बहुत ही खुश हूँ डोलन ! मरते समय तुम्हें अपने सारा करने का बड़ी कारण है कि तुम्हें कभी भी लाचारी और भव से झूठ नहीं डोलना । तेरा सत्य भाषण मुझे बहुत ही प्रिय है ।” उसने डोलन का हाथ अपने हाथ में लेकर जूम लिया । डोलन फफक पड़ी । उसका कसेबा बुक के मारे फट गया । वह चीलकर रो पड़ी । राजकुमारी ने उसे सांत्वना दी—“पपमी ! तू रोती है । रीने से भाव्य की रेखाएँ नहीं बरसती हैं और न ही रीने से हृदय की कफला ही कम होती है । हाँ बरं बकर हल्का हो जाता है । लेकिन उस बरं के धमाके में धनुमूति दुर्बल हो जाती है और धनुमूति बिहीन तन होता है नैन का लोचका पावण और व्यर्थ । इतिनिबे बरं को भीषित रखो और बरं की लेकर मृत्यु की बोद में सो जाओ ।

सूरज का प्रकाश खेमे पर पड़ने लगा था । संघटी भव भी पहचान रहा था । वह भीतर की घुर्पटना से बच भी प्रभावित नहीं हुआ था । वह पृथ्वी की भाँति अपनी कर्तव्य पर रात से निरन्तर बककर सना रहा था—जमे के द्वार के भागे समय पहचान रहे रहा था ।

माटी-मरकम पद-व्यभि सुनते ही डोलन ने कहा “धरात मा रहा है राजकुमारी सा ।”

“ऐसा कहो कि मेरी मृत्यु या रही है ।

‘किर’ ? ’ डोलन के दुःख मरे नैन बोल उठे कि भगवान के निवे ऐसे अधुन बोल मूढ़ से न निकालिये ।

पपमी ! सत्य का प्रवृत्तन आत्मा यस्तिष्क की बिना आत्मा निवे हो कर होती है । यह मेरी मरणा का सत्य है झूठ नहीं हो सकता ।”

बसती चाँकों से धबिरस धधु-धारा वह बली ।

राजा रिशालू ने बोले में प्रवेश किया ।

हासन उठकर एक घोर खड़ी हो गई । राजकुमारी ने धधुमरी मुसकान धबरी पर जाते हुए हीसे से कहा 'महाराज की बय ।

राजा रिशालू अड़बड़ हो गये । बय-धमर में छिपे तीव्र ध्यम्य घोर मार्मिक ध्यथा न विमूढ़ हो गये । एक धपराधी की भाँति निरवस बड़े हो गये ।

"महाराज ! धाव धाप उदास है । क्या बात है ?"

राजा रिशालू पूर्ववत् दया में बड़े रहे ।

धाप बोलते क्यों नहीं ?"

"धापकी को कहना है वह धीमता से कहिये ।"

"धाप बैठिए न इतनी धीमता क्यों कर रहे हैं । धोह ! समझी धावध धाप मुझ भूल गए हैं । महाराज ! मैं कपनगर की राजकुमारी हूँ—रूप धम्म धीर विदुष की पुतली । मैं धापकी हार्दिक प्रेम करती हूँ महाराज ! धाप मुझ से दूर न होइये ।" कहते-कहते राजकुमारी ने राजा रिशालू का हाथ पकड़ लिया । राजा रिशालू ने चौंकर अपने हाथ को मुक्त किया ।

वह तप स्वर में बोले पड़ी—"धापकी मेरा स्पर्श धण्डा नहीं लपटा न लये पर मुझे तो धाप बहुत धण्डे लपटे हैं । इतने जितना धूरज जितना चाँद ।"

"धनुर्दंड !" द्वार की घोर उगमुक होकर राजा रिशालू बोले "मानूम होता है, राजकुमारी पावस हो गई है ।"

बसती हुई धाय में भी का धाहुति पड़ गई हो बले पर नमक छिड़क दिया हो सब प्रकार बिहृक पड़ी राजकुमारी "पावस मैं नहीं पावस धाप हो गये हैं । यदि धाप पावस न होत तो धपनी अलिर तुध्या के पीछ एक नगर का बिध्वंस नहीं करते मानवी-रक्त से बरती की नगर नहीं रंपते मिट्टी को लहनुहान नहीं करते "

राजा रिशालू क्रोधित हो उठे “बुप ! राजा रिशालू जिस वस्तु को पसन्द कर लेते हैं उसे प्राप्त करके छोड़ते हैं । ‘न’ सुनना उन्हें बरा भी पसन्द नहीं । पराक्रमी राजा अपनी धाकाघा को प्रसफ़ल होते कभी नहीं देख सकते । वह जिसे चाहते हैं उसे प्राप्त करते ही है, किसी भी अवस्था में ।”

“धीर मैं कितनी भाव्यशालिनी हूँ कि आपने मुझे प्राप्त कर लिया महाराज ! क्या आप मुझसे व्याहृ करनेवाले हैं ? बारह बड़ी बूनबाम से शाहवेगा । सहनाई मयाड़ा मबीर, डोल ! महाराज ! पीले हाथ बेसकर नारी कितनी प्रसन्न होती है ? दुम्हून के बेड में उसके पाँव बरती पर नहीं पड़ते वह जड़ती है स्वच्छन्द पंछी की भाँति नील निमग्न में जो घनग्न है भयम है प्रपराज्येय है ।

राजा रिशालू आहत हो उठे । ठाढ़ना-भरे स्वर में बोले ‘होय मैं आपो राजकमारी, होय मैं ।

‘मैं बहोश नहीं हूँ महाराज ! मेरा कमनगर क्या जाता कि मेरी बेतना का प्रभु-प्रभु जाय उठ । मेरी ब्यथा का कण-कण जाय उठ । घर में जीवक में कभी भी बेहोश नहीं हो सकती । मेरा घरम् पर्व क्षत्रि सम्मान सभी ठो निराधार हो गये । धाधारहीन कोई तरब भी नहीं रह सकता । घर में मानव हूँ पूर्ण मानव बिचार रहित मानव’ आइये मुझमें प्रेम कीबिए, मानिकन कीबिए ।”

राजकमारी हठवृत्त छठी धीर सनन राजा रिशालू के वल से लिपट जाना चाहा । राजा रिशालू कड़ककर बोले “एक जाया तुम्हारे पछोले फूट जायेगी पीर होयी ।

आप धरराइये नहीं पीर मेरे होगी होने कीबिए । मैंने कहा न पीर में जीवन का घामग्न है । वल आप मुझे प्यार कीबिए ।

राजा रिशालू क्रोधित हो गए ।

“बली बामा मैं कहता हूँ मुझे जाने दो ।

राजकमारी उनके जाने लगी हो गयी ।

“तुम मुझे नहीं जाने दोगी ?”

“नहीं तुम मुझे प्रेम क्यों नहीं करते ?”

राधा रिताम् की बूछा बोल उठी “हट जाओ मेरे सामने से ! नहीं तो मैं सैनिकों को पुकारता हूँ ।”

“महाराज !” वह खेरनी की भाँति लड़ी होकर बोली “अब तुम मुझ से प्रेम नहीं कर सकते । क्योंकि मैं उतनी ही क्रूर हूँ जितना तुम । मैं उतनी बर्णित हूँ जितना तुम । फिर भला यह कैसे समझ बा कि कोई तुम से प्रेम करता ? कोई नारी अपना कण्ठ-सा तन और मुन्ह मन तुम्हें अर्पण करती ? रूप के बिनासी ! रूप के अन्तर्हित क्या गन्तवा है, इसे अपनी छाँवों से देख । ऐसी ही बिरुद्ध ऐसी ही बूछा और ऐसा ही कंकास तुम में और मुझमें है । ईश्वर का निर्मित भीतर में एक सा है बाह्य से विभिन्न । पर रूप और वासना में मयात्म प्राप्ति वासना की विपुल पक्ष में फैलकर मानवी-सौन्दर्य की बमक-बमक के पीछे बाब की भाँति पड़ जाते हैं और उसका विनाश करके मानवता के कर्मक कह जाते हैं । तुम भी वही कर्मक हो ।

“तुमने केवल मेरे लिये एक सुन्दर नगर का नाश कर दिया सहस्रों घर उखाड़ दिये माताओं को अपने बेटों से बहनों को अपने भाइयों से और बरती को अपनी सत्ता से विमुख कर दिया । क्यों ? केवल इस लिए कि मैं तुम्हारी मयावह मूर्छ पर अपना सर्वस्व विसर्जन कर हूँ !”

“राजकुमारी ।

“मैं अब चुप नहीं रह सकती । मेरी बाबी अब तुम्हारी सत्ता की शक्ति से धक्का नहीं हो सकती । क्योंकि मैं अंध हूँ । मेरे पास अब कोई ऐसी वस्तु नहीं जिसकी सुरक्षा में मुझे भयभीत होना पड़े जिसके लिये मुझे प्रभु से प्रार्थना करनी पड़े ।

मैं अब निर्णय होकर कहूँगी कि तुम मानव नहीं दानव हो । पीरा तुम्हें दानव से अधिक हृदयहीन और कठोर और और बिनाधकारी !”

‘वे बलती ॥ बिनाये बचते ॥ नर-कंकाल और बन्ध रूपनर

किस पिशाच-जीना के कोप का भाजन नहीं जान पड़ता ? पर प्रकृति धीर प्रभु का विरक्तन निमग्न है । कोई भी प्राणी उससे बच नहीं पाया । सब जगते हैं धीर सब मरते हैं । सब विराट में मिलता है धीर एक दिन मैं धीर तुम भी उसी विराट में लीन हो जायेंगे । उस प्रकाश के महापुंज में एकाकार हो जायेंगे जिसकी हम एक ज्योति है ।

“तब महाशक्ति क समस्त अपने अपराधों की क्या सफाई दोगे ? यह स्यायालय तुम्हारी है । इसके स्याय धीर स्यायाधीश तुम्हारे सकेतों पर नाचते धीर बिरकते हैं पर जो ऊपर का स्यायामक है वहाँ व्यक्ति का कोई भेद नहीं कोई अस्तित्व नहीं । वहाँ नियम अपराधी को नहीं उसके कर्मों को देखता है । उस स्यायालय के बंद उसे ही समा करते हैं जो निरपराधी होता है ।

राजा रिशालू के ससाट पर स्वेद ऊँछ उमर धाये । उसका रोम रोम काँपने लगा । वह बसे स बाहर निकलने के लिए दर-दर झाँकने लगा । राजकुमारी उसकी ओर बढ़ती गई । उसकी छाँतो में खून छतर धाया था । वह दृष्टे हुए स्वर में बोली ‘तुम जाना चाहते हो वो जाओ पर जाने के पहले तुम्हें एक काम करना होगा । मुझे प्यार से स्पर्श करना हीमा । इनका कहकर राजकुमारी संभवत धीरे-धीरे धाये बढ़ी ।”

“मैं तुम्हें नहीं छऊँगा नहीं छऊँगा ”

“क्याकि मैं कुरूप हूँ धीर तू काना धीर कुरूप दोनों है । राजसं ।

मैं तुम्हें अभिगाप देती हूँ कि तुम्हें अभी भी सुख न मिले ।”

राजा रिशालू लगे के बाहर भाग पड़े । बीसन ने भीतर धाकर देखा—राजकुमारी बरती पर धबक पड़ी है । उसकी साँस टूट रही है । वह उससे बसे से धिपटकर रो पड़ी । हृदय-विशरक्त दूर्य था—बीसन धीर राजकुमारी के अन्तिम-मिलन का ।

“बहन ! तू जमी ।”

“हाँ बहन ! मृत्यु कब बुलाने या जायेगी यह कोई नहीं जानता ?

पर पयसी 'तू इस सत्य पर रोती क्यों है ?'

'रोऊँ कैसे नहीं बहन तेरे बिना' वह फिर फफक पड़ी। राज-
कुमारी के नेत्रों से बंगा-वसुना बह रही थी।

रोहन-भरे स्वर में राजकुमारी बोली "मेरी एक इच्छा पूरी
करोगी ?"

उसने रोते रोते हाँ कहा।

जब तू दुखी दुघा करती थी न ?

हाँ।

"तब तू वह पीत गाया करती थी ?

"कौन-सा ?

"विद्या का—वही पीत घाब मुझे सुनायो।"

होतन ने बर्ब-भरे स्वर में गाना शुरू किया—

सुण रे भामिनी "

बसुन्धरसह बीर वन्य लैनिक भी खेदे नें बा बए बे। वे होतन के
बर्ब-भरे स्वर में जो बर्ब।

स्वर तेज दुघा—

'सुण रे भामिनी,

छोड़ रे गहाने

जाली रे शेकली जाली रे शेकली

सुख रे भामिनी "

पीड़ित बरती बर्ब से कह लगी "सुन ए खड़ेली हमें छोड़कर प्रकैली
कहाँ बसी सुन लो "

बर्ब और बढ़ा—

"बानपखे री बाली बिसारे,

कमे बड़ी तू राखी बिसारे

पुर्खा-भर डुड्डी मुक-मिचली

हिरडे तू तू पिवा निघारे

सुण रे मामसी

रोता हुआ आकाश सुरज की किरणों से कह उठा "देखो वह भा रही है। बचपन की बातें और स्मृती रातों की भुलाकर दुर्ब-दुर्बिहा के खेल और धौल मिचीनी को भुलाकर। ऐ बहन ! तू इन सबको हृदय से कैसे भुला रही है।"

डोलन फूट पड़ी। ऐनिक की धीमे ठरस हो गई। प्रकृति ने कहा गा डोलन गा बिदा के पीत में बेर धक्की नहीं रखी। या इतने बर से गा कि संसार के धामू बने ही नहीं।

आमो पुकारे ठर का छिन मर

तू बिजली म्हारी तू है बड़कन

बरती पुकारे-तू म्हाये आई

इ म्हाये हिनके पी रहे तपन

सुण रे मामसी

बिदाई पीत करम हो गया।

हुलहिन ने सर्वे के लिए बिदा के ली।

खेमे में डोलन का करम का। ऐनिकों का बर का और पापाण चतुर्दश के हृदय की बया आम लालों के बार धीलों की राह बड़ी।

प्रधानक डोलन बीबी "राबकुमाये छ। राबकुमाये छ। मुझे भी ते बसो। मुझे भी ते बसो वह खेमे के बाहर नाम गई।

हूवरे निन का मुख बूब रहा का। संसार नीरबता के भावराग में बूबा का रहा का। पंछी साध्य-नीत गा रहे बे। बे पंछी सोक और बुक नि मुक होठे है। बचनभर की बिनास-मीला का इन पर छनिक प्रभाव

१ आकाश तुम्हें पुकार रहा है कि पस-भर के लिए एक जा क्योंकि तू उसकी बिजली है। बड़कन है। बरती कहती है कि तू मेरी बेटी है और मेरे प्रभुत्व की तपन है। ऐ बहन एक जा एक जा।

नहीं पड़ा।

चतुरसिंह पाप प्रसवस्थ था। रात उसने स्वप्न देखा था। स्वप्न में एक बुधती की बिरोही आत्मा की पुकार ने उसे आतंकित कर दिया था। उस आत्मा का बिरोह सक्ति की मायताओं को बहिष्कृत कर उस बारा की जाँठि प्रवाहित हुआ था जो निर्वाच होती है। उस स्वप्नमयी आत्मा ने चतुरसिंह का गला पकड़ कर लज्ज स्वर में कहा—मैं मर कर भी तेरा छाव नहीं छोड़ूँगी। जिस प्रकार पाप मनुष्य का किमी भी बन्धन में साब नहीं छोड़ता उसी प्रकार मैं भी तेरा साब नहीं छोड़ूँगी। मैं तुम्हें अपने साब लेकर बाँटूँगी। उस आत्मा ने उसे कड़े शब्दों में पटकारा भी कि तू मनुष्य है। सोचता और समझता है। तेरे हाथों में शक्ति का प्रखर झोट है। प्रलय का विनाश है। निर्माण का बोध है। लेकिन अपनी समस्त भावनाओं का खून करके तू उस व्यक्ति का दास हो गया है जो मनुष्य को मनुष्य नहीं समझता जिसके मानम में कसुणा की एक किरण भी नहीं है। ऐसे सम्बन्ध में अपने को सीग करके मनुष्य की संज्ञा से परे रहना कायरता है। ऐसे कायर पुरुष पृथ्वी पर भार-स्वकर होते हैं। उस आत्मा ने चतुरसिंह के समीप बेहरे परबहने हुए भ्रमों को देखकर साहस भरे-स्वर में कहा—तू समझता है कि तू नाचार है, तुझमें संघर्ष की शक्ति नहीं विरोध करने की समता नहीं। यह भी असत्य है। तू चिर-संघर्ष का सेनागी है। यदि तेरा मानव मरा नहीं होता तो तू अपने हाथ से कमलगर की ईंट से ईंट नहीं बजाता। बच्चों को बिखरते और नारियों को घातनाह करने नहीं देता। पर तू मरा हुआ है। तेरी यह आत्मा जी मर चुकी है जिसका निर्माण उस देवता ने किया है जो मनुष्य को सीग-हीन और पीड़ित नहीं देख सकता जो पूर्ण को हँसते कलियों को मिलाते और पंढियों को धनंत धाकाए में बिखरते देख बिभोर हो जाता है। यह अनु किमी को परतन्त्र नहीं बना सकता। जब सक्ति का कर्ता किसी को परतन्त्र नहीं बना सकता तो भला तुम्हें परतन्त्र बनानेवाला क्या ईश्वरीय-विभाग का सम्मेलन नहीं

करता । यदि वह करता है तो समझ ले कि वह अपराधी है । बन्धन है पापी है ।

उम स्वप्नमयी ने उसके सिर को सहस्रान्ते झुग कड़ा । पवन की बाँध रखने की क्षमता उस धबिनासी में है जिसके संकेत पर यह पृथ्वी अपमान की छाती पर नियमपूर्वक झुमती है । यदि तेरे राजा में पवन के बाँधने की शक्ति नहीं है तो समझ ले वह बेबता नहीं है । झूठ मक्कारी घोर कपट से मोम भागे लोगों को ठगकर सासक बन बैठा है घोर तुम्ही लोगों की अपराधमय ध्वस्त है तुम्ही पर शासन करता है । फिर भला बताओ कि क्या उस घनादि ने तुम्हें इसलिये धमि की है कि तुम एक दुर्बल व्यक्ति के नाकर होकर अपने ही भाइयों के सर्वनाथ का कारण बनो ।

तेरा हृदय प्रसन्न करेगा कि मेरा स्वामी भक्त है प्रभु को पूजता है, हर सबेरे प्रार्थना करता है ?”

“मैं उत्तर दूँगी कि तेरा स्वामी उस इन्द्र से कम पवित्र नहीं है जो वेध बदलकर सृजनों की प्रहिस्मा सृष्टि बहु-वटियों पर बसात्कार कर उन्हें स्थापित करता है । मरने घोर आत्महत्या के लिये विवश करता है । ऐसे पातकी के सज्जद जब तुम लोगों के पवित्र मस्तिष्क झुकते हैं तो क्या उस ईश्वर को अपनी सन्तान के प्रति शोभ घोर पीड़ा नहीं होगी, उसे अपने उस विद्यालय को बसाकर रख करने की इच्छा नहीं होगी जिसमें उसने अपने हर पुत्र को स्वतन्त्र तुम्ही बन्धुभीर शक्तिमान बनाकर इस बरत पर भेजा है । परतन्त्रता आत्म की देन नहीं हम आततायी का प्रत्याचार है जो केवल अपने मुक्त के लिये लाखों का मुक्त इस तरह हरण कर लेता है जैसे कोई गरिबहीन मिछी साध्वी का सत्य हरण कर लेता है । रही मन्दिर में जाने की बात ? मन्दिर में कई व्यक्ति धाते हैं उनमें धर्म से अधिक दमक होते हैं जो अपने हृदय की कुत्सित भावना को बुरा करने धाते हैं । जिसकी धार्मिक भवना की पावन मूर्ति पर लगी रहनी है घोर मन समीप लड़ी नारियों के कप-जीवर्य पर । कुछ ऐसे व्यक्ति होते हैं जो मन्दिर को ऐसा स्थान समझते हैं जहाँ वे अपने

परिवार को सँकर घास-भास गीर्बों घोर भयों की चर्चा करते हैं। कुछ सत होते हैं जिनकी धीर्धै केवल भगवान का मुख देखती हैं। कुछ मुखिये होते हैं—प्रहंकार के पुतले, जिनकी बाली से भगवत् टपकता है, धीर्धै में सहिष्णुता झमकती है पर जिनके हृदय गहरी बुद्ध के भगवत्कार से भी धमिक कमप होते हैं। ऐसे व्यक्ति ही देवता के दूत का गारा बुझा करके संसार से छल करत हैं। तेरा राधा ऐसा ही लक्ष्मी है सिंह की आस छोड़े बेड़ियाँ !”

चतुर्दश का तन पसीना-पसीना हो रहा था। वह अपने लमे से बाहर निकलकर चुले मीरान में धा गया। स्वप्न बाठावण ने उसके मन को छाँव ली। रह-रहकर उसके मन में वह घासका लस बुँद-सी लठ रही थी जो हवा को दूधित कर साँस बुँदाने लबती है। लमे लन रहा था कि राजकुमारी की आत्मा प्रेय-सी उसके पीछे लग गई है। यदि वह लसकी आत्मा नहीं मानेगा तो वह लसका भवश्य प्राणान्त कर देगी।

वह लमे में धाकर निवास होकर शय्या पर पड़ गया। भय धम भी उसके मस्तिष्क में छाया हुआ था। स्वप्नवयी राजकुमारी की आत्मा का स्वर धम भी उसके मन में बूँब रहा था। भय से सिहरकर लसने लमे की सारी बिड़कियाँ लोल ली।

रात का गहरा धन्वेरा फँस चुका था। तारे पीर-भरे लसों की भाँति लन रहे थे। कभी-कभी लम्बू की भीत्कार चतुर्दश के मन को घोर मुर्त कर देती ली।

सारी रात करबटें बललटे-बललटे लनेरा हुआ।

राजा रिशामू ने आत्मा ली 'सेना को बापस भगतनगर की घोर प्रस्थान कराया जाय।”

पहली बार राजा रिशामू ने चतुर्दश के लैहरे पर एही लूसमय बेरना देली कि वह भासंकिष्ठ हो लठे।

पूस लैठे “क्या बात है चतुर्दश ?”

“भाज मैं पस्वस्व हूँ धम्मराता !

‘तेरे जीवन में यह नहीं बटगा कौसी ?’

“महाराज ! मैं अब इस जीवन से ऊब गया हूँ बक गया हूँ, मुझे मुक्ति चाहिये मुक्ति ।” कहकर बतुरसिंह महाराज की घाँसों से दूर हो गया ।

राजा रिताक हृवप्रम रह गये । उन्हें अपने प्रिय विस्वास की नींव के पत्थर मुड़कते नजर आये पर वह संमसे । अपने आप से कह उठे “जिसने अपनी बुद्धि पीर बस से महानगर की प्रजा को हाथ की कठपुतली पीर पृथ्वी को अपनी बाँधी बना रखा है, उस बतुरसिंह के लिये मिट जाने की कल्पना भी अनुचित है ।

देना मे प्रस्थान क्रिया ।

रात को उन्होंने एक नाव में डेर डाला ।

पर बतुरसिंह को दूर समझ राजकुमारी की छाया पीछा करती हुई लगती थी । उसका चेहरे बना गया । वह पथक-पथीर हो उठा ।

बीवह

“जानती हूँ रामू रात के बहरे धम्बकार में मैं समाज धीर बर्ग के सारे बन्धन तोड़कर तेरे पास धाई हूँ। मैं यह भी जानती हूँ कि ज्वाले के साथ जनणा को सोम करिबहीन कुस्त्य धीर ध्यमिचारिणी कहूँगे धीर उठ पर बुला की बीवह उठसोये। लेकिन ये बहुत बुरा हूँ क्योंकि मैं उसके पास हूँ जिसके पास मुझे धात्र होना चाहिए।”

रामू प्रबोध बालक की भाँति जनणा के सुवर्णमय धामन की ओर निहार रहा था। उसके मुँह पर तेज चमक रहा था एक बुद्धि का भ्रमक रही थी।

रामू ने सहमते-सहमते पूछा “अज्ञानता में किया गया पाप परत की संज्ञा से नहीं पुकारा जाता है। जब नहीं अज्ञानता शायद ही हो जाती है। तब पाप भवर्ग का भावा पहल लेता है। इसलिए हमें धम्बकार में नहीं गटकना चाहिए। पवित्र प्रेम का रूप करिबहीन धीर ध्यमिचार के नाम से नहीं पुकारा गया है। अन्त में अपने भवबान को निम्नित नहीं

होने दिया। फिर मना में तुम्हें कैसे लाँछित होने दूँ।

‘रामु ! तू प्रेम के रस में इतना डूब गया है कि जीवन का मिठास और उसकी बढ़कन तक को नुल बैठा है। कर्त्ता का धावधकता से अधिक त्याग दुर्बलता के नाम से पुकारा जाता है। मुझे संभव-विश्वास बन धीरे मुक्त नहीं चाहिए। मुझे चाहिए तू तेरा कुछ और तेरे हृदय की मधुरता ‘घरोह ! तू कितना निर्बल है ?’

‘मैं निर्बल नहीं हूँ बनणा ! धाव से पहले मैं और तू दोनों यही जानते थे कि दो तन में एक आत्मा है लेकिन धाव उन दो तनों के बीच बर्म लड़ा हो गया है। तू बिबाहिता है और क्या किसी पत्नी के लिये यह उचित है कि वह अपने पति के साथ छल करे। समाज और बर्म की मर्यादाओं को बुर बुरकर अपने सुख के लिये अपने माँ-बाप के सर्वस्व के सुख को छीन ले।’

बनणा कुछ देर तक बितामन्न बैठी रही। बर्म का भय जो उसके संस्कारों में छाया हुआ था वह उसके नख-मस में छिप गया। कुछ देर के लिए मृत्यु-सी मूकता छाई रही। बनणा के मन में आबोधन होता रहा। प्राकृति पर आत्मा के बिरोह की ऐलार्यो छाने लगीं।

‘लेकिन रामु अब क्या हो सकता है ? मेरे हृदय में पवित्र धाम का जन्म हो चुका है। वह धाम इतनी प्रबल हो चुकी है कि अब वह मुक्त नहीं सकती।’

‘पवित्र धाम मुक्त नहीं सकती तो वह बूतों को जला भी नहीं सकती।

‘मैं किसी को भी नहीं जलाऊँगी।’

‘तू अपने कूटम्ब की मान-मर्यादा धाव-साव सभी को जलाकर राख कर देगी। प्रेम का इतना सर्वकन रूप उचित ही नहीं नर्ब मायक है।’

बनणा अब अपने मन की व्यथा को नहीं समाल सकती। सिसपकर रो पड़ी, ‘अबि तू चाहता है कि मैं अपने प्रेम का राख के प्रपचार में

मीन कर हूँ अपनी मावनाओं को धनुमृतिहीन करके निष्प्राप्त ही हो जाऊँ, तो मैं संसार हूँ। अन्यथा यह किसी भी स्त्री के लिए संभव नहीं है कि वह प्रेम किसी धीरे पुरुष से करे। धीरे उसका क्या है किसी धीरे पुरुष से हो। प्रेम धीरे पत्नी का कर्मव्यपारे रूप से तभी पूरा हो सकता है जब कि इन को वस्तुओं का स्वामी एक हो। प्रेमी ही पति हो। घर में तभी ही मन्त्रविश्व स्वी बन सकती हूँ। जब कि मैं वार्षिक विधान से मम करके अपने जीवन का नारकीय याचना के जीवते कुम्भी-पाक में मोक हूँ।”

“विधि का लेख धर्मिण होता है बनला।”

बनला की रामू की दुर्बलता पर लक्ष्य था गया। वह कड़ककर बोली “विधि के लेख की ही बात मैं तुम्हें कह रही थी। विधि का लेख यदि इतना निर्मम है तो मैं विधि के लेख की रेखाओं की मान्यताओं को घसीटकर करके नया पत्र निर्माण करनी हूँ। विधि का लेख नारी के हृदय का गूँज बनना कूँठा में करता है तो मैं विधि का विधान का विरोध करती हूँ कि वह सर्वथा मिथ्या है क्योंकि पवित्र प्रेम मानव-हृदय में प्रेम की कृपा में ही देखा जाता है, यह शक्ति उसकी ब्याकुलता से हमें प्राप्त हुई है यह हम निर्बोध हूँ।

‘तु निर्बोध है यह मैं जानता हूँ। दोषी है तेरी माँ धीरे तेरा बाप जिन्होंने तुम्हें धाव तक नहीं दत्तया कि तुम्हें क्या है तेरा पति साधारण नहीं महानगर का अजीबगर राजा रिमानु है। विद्वान् कण्ठप्रद छत्र है। बनला। यह समार नारी के हृदय कुल से परिचित हो जाय तो धामर वह नारी का उपहास करना ही छोड़ दे। किन्तु बड़ी बिहम्बना है कि एक धीरे मैं हूँ। जिनका प्रेम मैं तेरा संयम्य रूप भुजा है। जहाँ तेरा प्रेम स्वतन्त्र है धीरे कुलधि भरना है। हमारी धीरे वह पुरुष है जिसके स्वामीत्व में एक दिन तुम्हें ब्याकुल ब्याकुल मर्दव सङ्कपन के सिधे छाड़ दी जायगी। जहाँ तेरी मावनायें कष्टित होकर जन्मन करेंगी धीरे मासाद की निष्प्राप्त दीवारें तुम्हें सात्वता का एक सङ्घ भी नहीं कहेंगी। तुम्हें

के घाँसू रोती खेपी । तेरा हृदय हाहाकार करता खेगा और यह समाज और संसार तेरे घाँसुओं का पीछा और तेरे बर्भ की स्तुति मावेगा । कहेना कि बनणा सतबंती है पतिव्रता और कुछ घाबरणवाली है । पर वास्तव में बात विपरीत होगी । तब के साथ सोना हुआ नाटक बर्भ की विजय नहीं सब मारों तो बसात्कार है । लेकिन वह समाज उसी को ही प्रशंसक कहता है जिसे वह घाँसों से देखता है यस्तिक से समझता नहीं ।”

बनणा रुट होकर बोली “मैं जाती हूँ ‘रामू’ को होगा देखा बावया । तू बहुत दुर्बल है । अपने भयमान की पुजा में तू केवल भाव्य को ही महत्ता देने लगा है, पुण्यार्थ को नहीं । पर मैं तेरे बिना जीवित नहीं रह सकती ।

“मुझ धकेले में सगल की सक्ति नहीं है अतः मैंने सोचा कि मैं अपने प्रेम को प्रकट करने के लिये पाठ रूँ । तुम्हें जीवित देना चाहता हूँ । मुझे पतना ही संतोष होगा कि तू है, वर तू है बनणा । प्रेम की उदात्त भावना में बहकर कर्त्तक मत बनो । प्रेम स्थाय माँवठा है उस पर बसिदान हो जाओ ।”

बनणा न बाँटे-बाँटे कहा “प्रयत्न करूँगी ।”

दूसरे दिन प्रातःकाल ही बनणा ने अपनी माँ से बाधक इन्ड धुँक कर दिया । इन्ड का रूप भयंकर हुआ गया । बनणा ने अपने हाथ से अपने बालों को लीचकर कहा “माँ सा ! आपने मुझे जन्मते ही क्यों नहीं मार दिया ?”

एक माँ यदि ऐसा कर सकती है तो मैं भी कर सकती ?” माँ का जैय धक से ही बना हुआ था ।

“फिर धारने मेरा क्या बचपन मैं नहीं किया ?”

“तेरे पिताजी की लाचारी भी यदि वह ऐसा न करते तो राजा रिसामू तेरे पिता का सर्वनाथ कर देते ।”

क्यों क्या छाहुर सा के हाथों ने जूझी भी ईंट का पक्का घर

से नहीं दे सकते थे ?

“पहाड़ से टकराना सहन नहीं है। राजा रिसालू के हाथ बीर सभा से रही है। उसकी धर्मि धर्म्य है, इसलिए यही उचित था कि यौन भीर प्रजा के हित के लिये ठेरा बसिदान दिया जाय।

जनका के कलेजे पर तीर-सा लगा। कुछ से बचीभूत होकर उसने मैत्र भूँद लिये। उसे महसूस हुआ कि एक कसाई अपनी बकरी के कलेजे को कुछ पाल-मोछकर बड़ा करता है और एक दिन अपनी छुरी से उसको कत्त कर देता है। यही हाल उसका है। जिस माँ ने उसे जन्म दिया उसी माँ ने पासा केवल इसीलिए कि एक दिन बही निर्दयी राजा रिसालू के हाथों उसे सीप लेगी। वह कुछ से पराभूत हो गयी। उसको घूर्णना सी घाने लगी। माँ ने उसे लपककर संभाला।

स्वस्थ होते ही जनका ने कहा “माँ सा ! आप येरी मृत्यु का कारण बनेंगी वह मैं स्वयं मैं भी कल्पना नहीं कर सकी। ब्याह हो गया तो आपने मुझे यह क्यों नहीं बताया ? मुझे कुंवारीपन के जल में क्यों रखा ?”

माँ ने विह्वल होकर कहा “जनका ! मैं समझती थी कि राजा रिसालू धामद इस बात को भूल जाय और ठेरा फिर से ब्याह रचा दिया जाय क्योंकि इस बात को लियाम मेरे और छकुर सा के कोई नहीं जानता। जबबाले और बिरादरीबाले कधी-कभी पूछते भी तो तेरे बाबो सा यह कहकर अपने टाल देते कि ज्योतिषी का कहना है कि इसका ब्याह मठारह बर के बाद ही करना धर्म्यथा यह जीवित नहीं रहेगी। इस प्रकार बेटा हम इस बात को इतने साल तक छिपाते रहे पर कम तुम्हें बताना ही पड़ा। कम राजा रिसालू का बूँद थापा था। उन्होंने कहा कि महायज्ञ में करमाया है कि हम कम शोषहर को यौन में पधार रहे हैं। कम ही बुद्धिमान की बिदा थी जाय। फिर धका इस बात कैसे छिपाकर रखते ?

“माँ !” जनका माँ के घले से सिलपट गई। उसके कलेजे को चीतुधों के मिगीली हुई धार्त्र कंठ से बोलती, “माँ सा इस पृथ्वी पर जाय कीकी

हृदयहीन और निर्बली मैं नहीं होमी ।

मैं सबसे बिलस हो गई "यदि तू हमारी साचारी जान लेती तो ऐसा नहीं कहती । तू नहीं जानती राजा रितामू की क्रूरता और अत्याचार । उसकी हठ की अपूर्वता विमोघ को भीता है ।"

"मैं । घाय कहें तो मैं मात जाऊँ ?"

विस्ती के माध्य का झीका टूटा । और भी ने उसी समय प्रवेश किया । कड़ककर बोले "भागना सहज नहीं बनना । तू हमारी साच को ठोकर मारकर ही भाग सकती है । वह ठकुराइन की घोर उन्मुख होकर बोले "घाय भी ठकुराइन का हमारे साथ चल करने लगीं । इस नादान जोकरी के बहकावे में घाने लगीं ।"

"नहीं नहीं अमनशाता घाय ऐसा न कहिये । मैं तो इसे समझ रही थी कह रही थी कि "

"तू अपने बाबो का की पगड़ी उछालकर घाय का पूष्पीसिंह !"

एक तपड़े व्यक्ति ने बैठक जाने में प्रवेश किया ।

"पूष्पीसिंह ! बनखा पर नका पहरा रखो । यदि वह कहीं भाग गई तो हम तेरा सिर चढ़ से प्रसन कर देंगे ।

"ठकुर का ऐसा अत्याचार मत कीजिये ।"

"ठकुराइन सा । बेटी की पीड़ा को मैं भी समझता हूँ । कोई भी बाप अपनी बेटी को दुखी नहीं देख सकता पर हम अपनी एक बेटी के बरसे बाब की संकड़ों बेटियों के सुहाग को समझते नहीं देख सकते । घाय समझती है कि हम बर्न रहे हैं ? नहीं नहीं ठकुराइन नहीं हम तो अपनी साचारी और रोगे को झुठला रहे हैं । बेटा बनखा । तू अपने बाब के ठाकर की साचारी जानती तो यह हठ नहीं करती । कभी से कहती कि मैं राजा रितामू के नक मैं जाऊँगी जाहे वह राजस ही क्यों न हो ?" कहते-नहते ठकुर सिसक पड़े ।

बनखा का हृदय भर घापा । पिता की विषयता उसकी भाँखों के समग्र नाच डली । वह कम्पन हो उठी । वेदना से उसका गैह्य दिवर्न

हो गया। रोते हुए बोली "मैं राजा रिसामू के साथ बपती बाईजी पर बाबो सा घाव मेरी एक इच्छा पूर्ण कर दीजिये।

"कहो।

"बचन दीजिये।"

ठाकुर ने बचन दे दिया।

"रामू से एक बार मिलने दीजिए।

ठाकुर सा भी धाँधों में खुन छतर धाबा। पर बचनबद्ध होने के कारण ठड़पकर रह गये। अपना मुँह दूसरी ओर मुमाते हुए बोले "मिलने दिया जायगा पर यही। रामू के पास खिस्सा भिजवा देते हैं।" बतला के धबधब पर रामूमरी मुसकान नाच उठी।

हलकारे ने आकर जोखी की ठाकुर ओर भी का संदेश सुनाया। रामू समीप हो नहीं जा पर घर की छत पर सहे होकर उसने सन लिया कि हलकारा क्या कहकर जा रहा है।

वह पिताजी के पास धाया। जोखी एक सूखी धीर इन्जिम हँसी हँस पड़ा। उसने पूछा 'बापू! ठाकुर का हलकारा क्या कह गया?"

"कुछ नहीं कह नहीं।"

"बापू! तू झूठ क्यों बोलता है?"

"यह क्या कहते हो बेटा? मैं तुम्हने क्यों झूठ बोलने लगा रामू!" जोखी का स्वर भारी हो उठा "जरा अपनी माँ को देख लेते कुछ मैं बेचारी बीबी हो रही है। कहती है रामू जाना न जाये तो मैं कैसे बाई? उसके मुँह रहते यह जाना भिष के समान लयता है। जा बेटा पहले जाना जा ले दो कीर जा ले अपने सिये नहीं तो अपनी माँ के सिये जा ले उसने मुझे जख्म दिया है न?" जोखी की धाँधों में धामू छलछता घाये। रामू ने एक बार फिर उसे पुछकर देखा पर

बोली ने बड़ी उत्तर दिया जो उगने पहले दिया था ।

रामू ने भी कुछ नहीं कहा । वह माँ के पास घामा । माँ टूटे हुए मोचे पर निबाल-सी पड़ी थी । घर का सामान धस्त-धस्त पड़ा था । बगल-बगल कुड़ा-करकड़ बिछरा था ।

“माँ !”

“कौन रामू था बेटा कौन है तू ?”

“माँ ! तू ने यह क्या हाल बना रखा है ? वह माँ के पास बैठे हुए बोला । उसके चेहरे पर बहरी जबाब देना उमर आई ।

“बेटा ! तूने पाना का किया ? बेक मीने तेरे लिये बहुत बोली राखी बनाई है, कायेया ?”

रामू का हृदय भर आया—“वह माँ है जो अपनी सन्तान के दुःख से किसी भीतर रुक से रुकी होती है ।” बिचारकर वह माँ की छाती से लिपट गया । माँ धधु-भरी हँसी हँस पड़ी । उठकर उसके सिर पर हल्की चपल लगाते हुए उसने डाँटा “पबले कहीं के रोता है ! घरे, मैं तो बूँड़ी रोम सपटी हूँ । माँ का हृदय ही ऐसा होता है बेटा उससे अपने बेटे का उत्तर मुँह भी नहीं देखा जाता ।”

माँ ने जाना परोसा । रामू ने बड़ी कठिनाई से एक रोटी प्याई । बाक में बोला “माँ ! मैं जाता हूँ ।”

“कहाँ ?”

“झकुर सा के घर, जहाँमे मुझे बुलाया है ।”

“झकुर सा ने तुझे बुलाया है ?” माँ की मुद्रा से ऐसा मामूज दे रहा था कि उसे इस बात पर बड़ा आश्चर्य हुआ था ।

“हाँ माँ ! घाज बनला का बिदाई दिन है न ।”

माँ तड़ाक से बोली “बिदाई के दिन वह तेरी बलि देना चाहते हैं बेटा ! मैं तुझे नहीं जाने दूँगी । तुझे मामू से भी भय नहीं है, और मुझे प्रणय से भय है ।”

“क्यों ?” रामू की बुद्धि माँ पर टिक गई ।

“क्योंकि मैं माँ हूँ बेटा ! माँ का हृदय इतना कोमल धीरे संवेदनशील न होता तो ममता का रूप इतना निखरता ही नहीं । संसार यह नहीं कहता कि जब माँ नहीं तब कल नहीं ।”

माँ ! तू मुझे बुर्बल कर रही है मैं जाऊँगा । यह मेरी पीर बनना की अंतिम घंटा है ।”

“नहीं बेटा नहीं ।” माँ ने सपककर रामू के दोनों हाथ अपने हाथ में ले लिए । ऐसा जान पड़ता था जैसे उससे कोई अपना बेटा छीन रहा है ।

“माँ ! इस समय मुझे रोक मत यदि मैं मर जाऊँगा तो मुझे कुछ नहीं होपा । लेकिन ठाकुर सा ने सचमुच मुझे बनखा है मिलने के लिए बुलाया है और मैं नहीं गया तो बनखा रामू से बुला कर ले लगेगी और बनखा की बुला और उसका बिगड़ी होना क्या देरा रामू सह सकेगा ? माँ ! बनखा के लिए मुझे मर जाने दो । उसके लिए मरने में मुझे असीम सुख है ।”

“तू तो मेम में पापल हो गया है । बनखा ने तुझ पर कौन-सा मंत्र चला दिया है कि तू मृत्यु को जीवन समझने लगा है । स्वप्न में जागरण में उठते-बैठते केवल उसी की चट बनाया करता है । पर कभी तुने यह भी सोचा कि तू किसी की माँबों का ठारा है किसी बुढ़े की छाठी है ।”

माँ मैं सब सोचता हूँ पर बनखा के बाद नहीं । बनखा मेरी प्राण है । माँ मुझे जाने दो ।

“मैं तुझे नहीं जाने दूँगी ।” माँ ने उसे कसकर पकड़ लिया ।

“पर मैं जाऊँगा मुझे कोई नहीं रोक सकता ।

“तुझे ऐसी माँ रोकेंगी ।”

“माँ ! इत न कर यदि तू चाहती है कि रामू इन पत्थरों से सिर जोड़कर मरे तो मुझे मत जाने दे । ऐसी हृदय-विदारक मृत्यु क्या तू अपनी इन माँबों से बेख लकेगी ?”

“जा बेटा जा । मैं तेरी मृत्यु अपनी माँबों के सामने नहीं देख

सकती। का न रुक क्यों गया ?” माँ ने काँपते हुए रोदन-भरे स्वर में कहा।

‘माँ ! रामू रोकर अपनी माँ से लिपट गया। माँ ने उसे अपने में एकाकार करते हुए कहा ‘यदि ऐसा जीवन बनना बन गया है तो छठी में का मिल।’

रामू माँ के धाँसियन से मुक्त होकर घर से बाहर निकला।

बाबू ने पीछे से पुकारा “कहाँ जा रहा है रामू ?”

“बनना से मिलने।” रामू ने बिना देखे ही ओर से कहा।

बाबू बिस्मिता हुआ रामू की माँ के पास बीका “मह तुने क्या किया रामू की माँ जान-बूझकर बेटे को बसती धाय में भेज दिया।”

“नहीं रामू के बापू ! आत्मा को परमात्मा के पास भेजा है। रामू के मन को उसके प्रेम को कोई नहीं मार सकता।”

रामू को पये धाँसी बस गए भी नहीं हुए थे कि चम्पू आया। धाँसे ही प्राकृतता-भरे स्वर में बोला ‘माँ तुमने रामू को वहाँ कैसे भेज दिया ? जानती नहीं वहाँ उसके प्राणों’

चम्पू का मत्ता धवरड हो गया।

माँ दबोवा भरसि हुए स्वर में बोली “लघु लघु के पास जा रहा है। वो लघु मिलकर बिगड में भीग ही जायेंगे।”

धाँसा के नेत्र भर आये। वह संभसती हुई बोली ‘चम्पू, तु आज कल बीकठा ही नहीं। रामू कह रहा था कि बोपी की स्मृति तू नहीं भूल सका।’

‘माँ संसार में कुछ जरिज ऐसे जी पाते हैं जिन्हें भूलाकर भी भूल नहीं सकते। बोपी—नारी बिनाश है—का प्रत्यक्ष प्रमाण है। रही मेरी बात माँ मैं बाबला ठहरा इस बाँसुरी के स्वर में ही जीवन के कुछ दुख को एकाकार कर चुँगा। बीसी हूँ न संसार के प्रत्येक चुप धोर अक्षर में मेरा मान रखता है, मैं उसी में अपने को तामय कर चुँगा।’ वह बासु भर के लिए रुका और बोला “मुना है कि कपनवर बिजब करके

रत्ना रिसामू इतर था रहे हैं—अपनी बहु जगहों को लेने ।

“हाँ ।

“माँ इस बरती पर प्यार नहीं पल सकता । यह बरती सब अतृप्त रही है और सब अतृप्त रहेगी । परिवर्तन आयेगे सब कुछ बदलेगा पर प्यार कभी भी निर्वाचन रूप से नहीं पड़ेगा” अन्त में मैं उभू की ओर जा रहा हूँ ।”

‘जापस बस्ती बौटना बेटा ।

माँ के लेव भर आये ।

बम्बू के मन में गोपी का मुख पुनः जाने लगा । वह गोपी को कभी नहीं भूल सकता—राजिका के रूप में बाँसुरी-बाज बरती हुई गोपी का पवित्र और प्रेममय मुख ।

पन्नाह

राजा रिसालू की विद्याल बाहिनी ने गाँव के बाहर पड़ाव डाला ।
ठाकुर साहब की आजा से गाँव के सभी किसानों से बेमार ली गई ।
भोजन और नृत्य-गीत का प्रबन्ध भी ठाकुर बोरे ली की करता पड़ा ।
गाँव के बाहर एक नया नगर-सा बस गया ।

“बनसा की बिदाई होयी ।” यह बात बर-बर में फैल गई । बनसा
की सहेलियाँ छिप-छिपकर राजा रिसालू की देख आयी । देख-देखकर
मिन्न-मिन्न तरह की बातें करने लगी । कुछ जिन्हें पन धीरे-धीरे से मोह
बा बोली “बनसा महारानी बनकर जीवन का आनन्द लेयी ।

“इसे कहते हैं माम्र का बर । कितने बड़ राजा की रानी बनी
है । सुन से भी जर छडेया-॥”

पर कुछ ऐसी थी जिन्हें बनसा के माम्र पर रोना था रहा था ।
एक ने कहा “बनसा बिल्ली सुन्धर है राजा भी उतने ही क्रूर हैं ।”

“यह ऐसी है तो वह रास्ता है ।”

“उसके साथ बनला बेटी के समान लनेगी ।”

जिउने मूह उठनी बातें ।

राजा रिसामू कसूमो पीकर सब-मस्त हो गये थे । उनके सामने
पाँव की दो युवा डोसनियाँ भीत पा रही थीं ।

“बाब बाबा रो

पीरए बासो नांला रो ।”^१

बीच में ही बतुरसिंह ने प्रवेश किया ।

पीठ घीर नृत्य रुक गया ।

डोसनियाँ जेमे से बाहर हो गई ।

“क्या बात है, बतुरसिंह । राजा रिसामू क्रोध से बोले “मात्रकल
तू हमारे रंग में जंम करता रहता है । हमारी धागा की धमका करता
रहता है क्यों ऐसा क्यों ?”

“जम्मा घन्नदाता बुजर्नसिंह का एक विशेष सदिया है, उसका सुनना
घापके लिये बहुत जरूरी है ।”

“कहो ।” उन्होंने अनिच्छापूर्वक कहा ।

बुजर्नसिंह ने प्रवेश करते ही जम्मा घन्नदाता ने की ।

“कहो ।”

“घन्नदाता ! घापकी पगड़ी में तो सारे पाँव उछाली जाती रही
है ही लेकिन आज जबकि घाप यहाँ पर उपस्थित है उछाली जाने लगी
तब मुझसे नहीं रहा गया ।”

“पहिलियाँ मठ बुझापी क्या बात है स्वष्ट शब्दों में कहो ।”

“मैं राजपूतों के सम्मान को सुनार के हाथों अपमानित होते नहीं
देख सकता । घापकी महादानी दिन के बजाने में पाँव के रामू नामक
सुनार के घक में पड़ी रहे, यह सबस्त राजपूत जाति के लिए अपमान
की बात है !”

“क्या कहते हो ?”

“सच कहता हूँ धम्मराजा ! स्वयं ठाकुर सा ने रामू को घपने डेरे पर बुसाया है और वह जनजा से भुल-भुलकर बाँटें कर रहा है।” दुर्जन सिंह मगर में होली जनजा और राजा रिसालू की भली-बुरी चर्चाओं को बताते हुए कह पड़ा ‘भुक्तियों कहती हैं कि ठाकुर सा क्या ऐसा बबाई हुईकर लाये हैं ? कृष्ण और काना ।”

“बतुरसिंह !”

“सम्मा धम्मराजा !”

सेना को कहो कि बीच को पीर डाले ।

“अहाराम ! आपके क्लेश ने सिखाय बिनास के पीर कस नहीं किया । एक बार प्रेम का सम्मम लेकर तो देखिये । कदाचित् प्रेम आपके मन को समझ सके ।’

राजा रिसालू निराश होकर बोले “हम सब सह सकते हैं, पर वह नहीं चुन सकते कि हम कृष्ण हैं, काना हैं।”

बतुरसिंह के कानों में स्वाप्नमयी की बाखी बूँब उठी “मैं तेरा साथ नहीं छोड़ूँगी लेकर ही जाऊँगी।” बतुरसिंह काँप पड़ा । इधर-उधर टाककर बोला ‘मुझे क्षमा कर दो देवी क्षमा कर दो ।’

“क्या बात है बतुरसिंह ?” राजा रिसालू सबसे कंधा झिझोड़कर बोले, “कहाँ है देवी ? कौन है देवी ?”

बतुरसिंह की साँस तेज चल रही थी । शरीर पसीना-पसीना हो रहा था । मगभीत स्वर में बोला ‘धम्मराजा ! कोई मेरा यत्ना दबोच रहा है । कपनगर की राजकुमारी हर समय मेरा पीछा करती रहती है । कहती रही है कि मैं तुम्हें लेकर जाऊँगी मैं तुम्हें लेकर जाऊँगी ।”

“तुम्हें हमारे होते कोई नहीं ले जा सकता ।”

बतुरसिंह धैर्य-मुद्रा में खड़ा हो गया । ध्यान से राजा रिसालू के मुँह की ओर निहारने लगा । उसकी साँसें भयानक हो गई थीं । प्रायः ही बनत रही थी जैसे उसके धमतर का युग-युग से बबा बिग्रोह घाय

रवाना बिसोट करना चाहता है ।

“ऐसे क्यों बुर रहा है ?”

“देख रहा है अन्नदाता कि धाप वास्तव में कृष्ण है या नहीं ?”

राजा रिसालू का हाथ अपनी तलवार की मूठ पर जमा गया ।

“धाप सचमुच कृष्ण है, काने है ।”

“बतुरसिंह होश में था ।”

“यान ही होश में आया है अन्नदाता देवता और रीत्य का रूप धारण कर धाप प्रजा की यह मुलाका नहीं है सकते कि धाप मनुष्य नहीं है । वह प्रजा धापको मनुष्य के रूप में देखपी थी यह नहीं भूलेगी कि धाप कृष्ण और काने है । अन्नदाता । भयवान ने धापको खरित दी है इसलिए नहीं कि धाप विनाश करे ।”

“बतुरसिंह, हमें उपदेश मत दो ।”

“उपदेश नहीं है रहा है । कह रहा हूँ, देवता और रीत्य का रूप छोड़कर मनुष्य बनिए । एक बार मनुष्य बनकर उसका रस भी लीजिए । कृष्ण और काने रहकर जी प्रेम कीजिए, धारकी बनिए ।”

राजा रिसालू ने झटकर बतुरसिंह की गर्दन बढ़ से ग्रस्य कर दी । दुर्जनसिंह जानने लगा । राजा रिसालू ने कहा “कड़ सो इसे ।”

दुर्जनसिंह पकड़ लिया गया । वह बहुत बीछा और चित्तावा पर सब व्यर्थ । बतुरसिंह की लाप को उसी समय जमाने की आशा राजा रिसालू ने दे दी ।

बतुरसिंह का बून लेने में बिचरा पड़ा था धाम-माल । राजा रिसालू को पहली बार यह महमूश हुआ कि उन्होंने एक व्यक्ति की हत्या की जिसने उनकी अपार सेवाएँ की थी । लेकिन वह व्यक्ति भी क्या जो राजा की धर्मित का अपनी बुद्धि से नुस्कारन करमे हैं। हमें तो ऐसा रास चाहिये जो केवल आत्मा मानना जानता हो—“दुर्जनसिंह ।”

उन्होंने मृत्यु दुर्जनसिंह को बुलाया और कहा “हम तुम्हें बतुरसिंह की बचत रखते हैं । वह केवल हमारी आत्मा का पालन करता

“मैं भी पार्श्वना ।”

“दुर्जगतिह ।” राजा रिताबू पम्भीर होकर बोले, “कोई ऐसा उपाय निकाल कि रामू जर बाय प्रीर बनसुा रानी को पता भी न लये ।

“यह तो मेरे बायें हाथ का खेल है ।”

“हम देखेंगे । क्योंकि रामू ॥ जब तक बनसुा हमें हथिय से प्रेम नहीं कर सकती । सुनते हैं, वह धत्यन्त रूपवती है ।”

“हैं प्रेमदाता सम्भाव रूप की देवी है ।”

राजा रिताबू की धीर्धों से वासना जमक उठी ।

बिच समय रामू बनछा के घर पहुँचा ठाकुर जोर बी हरे की
झोड़ी पर बड़े-बड़े हुक्का पी रहे थे। एक बात ने उनका हुक्का धपने
हाथ में पकड़ रखा था।

रामू ने निर्भयता से पूछा "बनछा कहाँ है, ठाकुर सा?"

ठाकुर जोर बी के मन में धामा कि तलवार से इसकी गर्दन बड़
घात कर दे, पर बचनबद्ध होने के कारण वह बीस नहीं सके। ठिठ
उनकी आब-मुद्रा से स्पष्ट मालूम हो रहा था कि उन्हें रामू की
निर्भयता थक्की नहीं लगी। रामू ने इस तरह पूछा जैसे बनछा उस
घपनी करवाती हो।

रामू ने ठाकुर सा की निश्चय देखकर दुबारा पूछा "ठाकुर सा
बनछा कहाँ है?"

"भीतर बसे बाघी, बापल भी बस्ती धामा।"

रामू ठाकुर सा की बात का जवाब बिना ही भीतर बसा था।

जगन्ना निदान पड़ी थी जैसे उसमें प्राण नहीं। रामू को देखते ही उससे लिपटकर रो पड़ी। रामू भी अपने आसुओं को नहीं बाम सका।

कछ देर तक दोनों अपने-अपने हृदय की बेइनामी की तरह बहते गए। रामू ने उसके बेहूरे पर अपनी दृष्टि जमाते हुए कहा "जगन्ना ! अब फिर कब मिलेंगे ?"

जगन्ना ने बने कंठ से उत्तर दिया "जब प्रभु ने चाहा।

उमें कुछ देर तक बिचारता रहा। उसकी भाव-विमला से स्पष्ट मानून दे रहा था कि वह कोई अकल्पनीय निर्णय करने जा रहा है। उसने छत से सटकते हुए आड़-आंगूठ पर दृष्टि जमाते हुए कहा "जगन्ना ! तुने कहा था न कि मैं कायर हूँ। मैं भी सीधकर जान पामा कि मैं कायर हूँ, पर अब मेरी कायरता मेरे मन से छुट हो गई है। मैंने निश्चय किया है कि हम दोनों नाम जमें।

जगन्ना बड़बड़ हो गई। बिस्तरित नेकों से वह कुछ देर तक रामू को देखती रही। तब वह अपने नेकों में धनु भरकर बोली "यह तू उस समय कहता जब मेरा हृदय जस विनाश से अपरिचित था जिसका सम्बन्ध सबस बान से है। तो मैं तेरे साथ मान जसती। पर अब मैं भी बिबध हूँ रामू ! मुझ न पाकर राजा रिठानु बाब का सर्वनाश कर देना, जसाकर पक्ष कर देना। फिर हमारा प्रेम सीकड़ों का जीवन से देना।"

"धीर मदि प्रेम विनाश के बीज होता है वह प्रेम प्रेम नहीं। प्रेम त्याग चाहता है कस्याल की कामना करता है सभी तो इस जगत में प्रेम दुष्प्राम्य जाना गया है।"

जगन्ना ने कहा "रामू ! इस सीकिक तन पर राजा रिठानु का अधिकार होने पर तू वह न समझ बैठना कि जगन्ना का प्रेम नर गया है। यह हमारा बाब के लिए त्याग है। पर वह भी धुन सत्य है कि हम बकर मिससे।"

"विश्वास पर मानक बीबित है, जगन्ना जप-तप यजन-पूजा धीर सीकिक-पारलीकिक से सभी व्यर्थ हैं जबकि हममें विश्वास न हों।

बिनाश के सम्मुख कार्य असम्भव नहीं मन्ना बिना ।”

“रामू ! एक बार मुझे बरण-स्पर्श करने दे ।”

रामू धाई होकर बोला “बरण-स्पर्श सदैव मन्त करता है । मैं ही तेरा प्रभु हूँ, तेरे मन का तेरे प्रसन्न का तेरे मन का तेरे तन का यह अधिकार मेरा है ।”

बनला ने उसे रोफते हुए कहा “नहीं मन्त की मन्त्रि परि ईश्वर के दर्शन की समता रख लेती है तब उसे मन्त होने की आवश्यकता नहीं पड़ती । यह धर्मिण के योग्य हो जाता है ।”

तब रामू धीरे बनला धर्मिण में घाबरा हो पड़े । धर्मिण निम्न धूम्रवीरिण की धिर बेचना कसक धीरे तड़प ।

बाहर से ठाकर की धर्मिणपुर्ण घावा घाई “रामू !”

रामू डरे के बाहर निकल गया ।

बनला की सजाकर तैयार किया गया । उसकी सहेलिया घाबरा-रोकर निडास हो रही थी । राजा रिमालू भी वही उपस्थित थे । रामू बनला की बोली के साथ चल रहा था—गूँपा बुद्धि-युक्त धर्मिण हीन बंधनता । पर घाबरा बाँकवालों ने देखा कि रामू की धर्मिणों में धर्मिण नहीं होंगे पर तड़प नहीं हूबह में कसक नहीं । पर वह अपने आपसे किसी महा धर्मिण समाना कर रहा था कि बनला की धर्मिण पर किया गया इस निर्दोष घावक हाथ बनाकर कम प्रबंध विद्रोह के कम में उत्पन्न होना । कम बिनाश की वर्षा होनी यह धर्मिण कम जानेवा प्रकृति धर्मिण करेगी । तब धर्मिण की संगान राजा रिमालू धर्मिण की निष्पूर धर्मिणों में टकरा-टकराकर अपने प्राण देना ।

उमने बिनाश छोड़ा । राजा रिमालू की बुद्धि रामू पर गई । वह उसे इस तड़प देखा रहा जैसे मंदिर के देवता की देवता था । उसे उसमें धर्मिण की संगान के दर्शन हुए । वह निष्पूर धर्मिण का धर्मिण बन-ही-मन कीमने लगा ।

डोसी नाँव की पार कर चुकी थी । बगल्ला ने अपने प्रियबनों से अन्तिम बिदा ली । रामू की भारमा का सपीत भरने लगा । उसका प्रकाश मिटने लगा । वह धौंधी की भाँति बन की धीरे भाग गया ।

संझा की नौच प्रलीची के प्रायण से बीरे-बीरे उभरने लगी थी । राजा रिखालू ने दसगा तीसरा डेर एक बंयस के मध्य डाला । दोनों के जोड़ी दूर पर एक कूपाँ बा । पास ही पाँच पड़ता बा ।

दुर्जनसिंह धनी-धनी कुएँ पर जाकर भाया बा । वह बहुत ही प्रसन्न जान पड़ता बा जैसे उसे कोई बड़ा खजाना प्राप्त हो गया हो । बात थी कि उसने रामू को बाबर की हासत में देखा बा ।

राजा रिखालू चिन्तित थे । भय की हल्की रेखायें उनके चेहरे पर ऐसी ऊई हुई थी जैसे नील निमय में हल्की-हल्की सफ़ेद धारों की रेखायें छा जाती हैं ।

“भाप चिन्तित क्यों है भल्लावाता ?” दुर्जनसिंह ने सिर नवाकर कहा । उसके मुख पर दुष्टता-भरी मुसकान नाच रही थी ।

“हमें रामू का देखकर मन्दिर के बेरता की याद हो पाई । ऐसा मामूला देता है कि वह प्रभु की संतान है अवतार है । हमारे, भयपनों और पापों को वह जान गया है ।”

दुर्जनसिंह और का घट्टहास कर लगे । राजा रिखालू को यह घट्टहास असहिष्ट लगा । वह चीखकर बोले, “दुर्जन ! राजा रिखालू की आज्ञा के बिना हँसना ऐना छटना-बीटना भी अपराध कहलाता है ।”

“खम्मा भल्लावाता ! वह प्रभु की संतान है न मैं उस संतान की अभी समाप्त कर देता हूँ” दुर्जनसिंह संभलकर बोला ।

“कैसे ?”

“मुझे बगल्ला का छोड़ना चाहिए ।”

राजा रिखालू ने छोड़ना मंजूर कर दे दिया । दुर्जन छोड़ना लेकर कुएँ की ओर चला । कुएँ पर जाकर उसने वह छोड़ना रखा और फिर

वह सिझक-सिझककर रोने लगा । रामू एक कुल की घाबरा को पकड़े पकड़े 'बनखा बनखा' बिस्बा रहा था । दुर्जन को देखकर बोला, "ऐ माई ! तू क्यों रोता है ? तुम्हें क्या हुआ है ?"

दुर्जनसिंह रोता-रोता बोला "तू मुझे नहीं पहचानता रामू ? मैं दुर्जन हूँ दुर्जन ! क्या तुम पागल हो गए हो ?"

"हाँ माई तू कोई भी क्यों न हो ? पर धन ये माँलें सिबाय बनखा के किसी का नहीं पहचान सकतीं ।"

"धीरे ठेरी बनखा इस कुपे में बिरकर मर गई ।"

"क्या कहते हो ?"

"देखो यह रहा बसका छोड़ना बिबाई की बेला में पहना था न ?"

रामू ने छोड़ने को देखा धीरे फिर बीचकर रो पड़ा "बनखा ! बनखा !!"

दुर्जन बनावटी रोदन-भरे स्वर में बोला "रामू ! बेचारी बनखा के मुँह पर अन्तिम समय तेरा ही नाम था अपने रामू का ।"

"माई ! मेरे भगवान को उस कुप में मुझने बिसग कर लिया । यह राजा रिशानू हमारी बाजूधों की शक्ति से हमारे ही हृदयों पर अधिकार करके हमारी सबसे प्रिय वस्तु को छीन लेता है । यह कुप्ट वह स्वामी है, जो प्रजा के सम्मुख अपने का नेमक कहता है धीरे फिर सत्ता के जगमग में हमें अपना बास बनाकर रखता है । इसका मन हमारी आत्मा में मृत्तु पर्यन्त कासे बावलों की भाँति इसलिये छाया रहता है कि यह हमें अपने आपकी प्रभु का धंधा बताता है । ऐ माई ! जो व्यक्ति नारी के हृदय को घावात पहुँचाता है उसको उन वार्षिक बन्धनों का मय दिखाता है जिनको उसी ने बनाया है, वह व्यक्ति क्या कल नये वार्षिक बन्धन बनाकर हमारा जीवन गरक नहीं बना सकता ? देखो उसने मेरी बनखा को छीना मेरे हृदय के उस दीपक को बुझाया वो मुझे घालोक दिखाता था । वह व्यक्ति कल तुम्हें भी समाप्त कर सकता है ।"

रामू के मन धनु से परिपूर्ण हो गया । स्वर काँप उठा "देखो —"

इस कुएं में है भाई ! तूने बनछा को देखा है, वह प्रभु की भांति पवित्र की पीर धिनु की भांति निर्दोष ।' रामू कुएं की घोर निहारने लगा "बनछा ! तू मेरी सर्वस्व की आत्मा पीर परमात्मा भी । जब तू नहीं तब मैं क्यों ? इस लक्ष्मी को उस बिराट में मिथ जाना चाहिये इस दार्किनन को उस घनत्व में लीन हो जाना चाहिये ।" कहते-कहते रामू कुएं में कूद गया ।

एक घसड़ा बेवना-भरा मीन पक्ष भर के लिए वहाँ पर छा गया ।

दुर्जन वहाँ से उठा । घोर का तुफान बेकठे-बेकठे उठा । घोर घनकार बहूँ घोर फैल गया । दुर्जन बनछा के समीप आकर बोला "बनछा ! तेरा रामू तेरे लिए कुएं में कूदकर मर गया ।"

"मेरा रामू !"

"हां तेरा ।"

बनछा घोड़ी की तरह कूद की घोर पायी । वह 'राम राम' चिस्साती जा रही थी ।

दुर्जन माथकर रामा रिसानू के पास पहुँचा ।

बारसों की गर्जन मृगी बरती को कह रही थी—हम तेरी प्यास अभी बुझा देते हैं, तेरी पीर अभी हर मेटे हैं ।

"घमनवाता की जय !"

"नया बात है ?"

"घबर हो गया ।"

"कैसे ?"

"बनछा रागी था कुएं की घोर आन बई है । रामू को मैंने ठिकाने लगा दिया है ।"

"बनछा !" रामा रिसानू कुएं की घोर झपटे ।

बरती उनके भारी-भरकम कदमों से काँप रही थी ।

निबिड़ घनकार छाया हुआ था । बिजली काँपी । रामा रिसानू ने देखा कि बनछा कुएं के पास खड़ी है । वह कह रही है "रामू ! घबर

या मुझे छोड़कर मत जा मैं धाई मैं धाई ।”

राजा रिसामू चिल्लाए, “राणी सा ! रुक जाइय ! रुक जाइये
दुर्जन पकड़ा, पकड़ो ।”

पर बनरुता बीए में कूदकर अपने देवना के पास चली गई ।

प्रकृति कुपित हो गई ।

सपननाडी सावित्री-सी बिजली कीवकर पृथ्वी पर पड़ी घोर अपनी
बपनी से राजा रिसामू घोर दुर्जन को बसाकर राख कर दिया ।

बरती का पाप खत्म हो गया । उसकी पीर मिट गई ।

दूतरे दिन जब गांव से राजा रिसामू की सेनाये हीमान जी के
नेतृत्व में लौट गई तब पौरबाने उस वए पर आए । गांवबानों ने सुना
कि एक बई-भरा नील भूख पड़ा है—

झिरमिर-झिरमिर मेंहू पड़ेंगी

घोर छड़ी वाली बालू

घर है बिछड़वा रे के

रामू प्यास कर जी भितस्यो

हई एक किराणन हई प्रीत की ब्यामा सहाराने लयी घोर घाव मो
राजस्वान की बरती इन पीर की सन्तुष्टि किए या रही है पाटी
रौमी—हमेशा सदा पस-नस ।

इस कुर्र में है आई ! तुने बनणा को देखा है, वह रामू की भाँति पवित्र की पीर सिखू की भाँति निर्दोष ।” रामू कुर्र की घोर निहारने लगा, “बनसा ! तू मेरी सर्वस्व की आत्मा और परमात्मा भी । अब तू नहीं सब में क्यों ? इस सब को उस विराट में मिला जाना चाहिये इस अकिञ्चन को उस धनन्त में मीन हो जाना चाहिये ।” कहते-कहते रामू कुर्र में कूब गया ।

एक घसह्र बेरना-भरा मोन पल भर के लिए वहाँ बर छा गया ।

दुर्जन वहाँ से उठ्य । पीर का तुराग बेसते-बेसते छटा । पीर अन्धकार वहाँ घोर फैल गया । दुर्जन बनणा के समीप जाकर बोला “बनसा ! तिरा रामू तेरे लिए कुर्र में कूबकर मर गया ।”

“मेरा रामू !”

“हाँ तेरा ।”

बनणा झोबी की तरह कुर्र की धार भागी । वह ‘रामू-रामू’ बिस्ताती जा रही थी ।

दुर्जन भागकर रामा रिसामू के पास पहुँचा ।

बारतों की बर्जन सूजी बरती को कह रही थी—हम तेरी प्यास सभी बुझा देते हैं तेरी पीर सभी हर भेते हैं ।

“मानदाता की बर !”

“क्या बात है ?

‘बैबर’ हो गया ।

‘कैसे ?’

“बनणा रामी सा कुर्र की घोर भाग गई है । रामू को मैंने छिकाने लगा दिया है ।”

“बनसा !” रामा रिसामू कुर्र की घोर झपटे ।

बरती उनके मारी-मरफम कदमों से काँप रही थी ।

निबिड़ अन्धकार छाया हुआ था । बिजली झोबी । रामा रिसामू ने देखा कि बनसा कुर्र के पास खड़ी है । वह कह रही है ‘रामू ! मर

का मुँह छोड़कर मउ का बँ धाई मैं धाई ।”

राजा रिशामू बिस्वाए, “राखी सा ! एक बाइय ! एक जाइये
दुर्जन बझा, बझो ।”

पर बनसा कँए में कूटकर अपने देवता के पाय बसी गई ।

ब्रह्मि बुझि हो गई ।

सरसराती सावित्रीजी बिबली कौबकर घुम्मी पर पड़ी घीर अपनी
मयों से राजा रिशामू घीर दुर्जन को बसाकर राख कर दिया ।

बरती का पाय छल हो गया । उसकी पीर मिट गई ।

दूसरे दिन जब गाँव से राजा रिशामू की सेनावें बीबान जी के
केतल में लौट गईं तब बाँबानों उस कँए पर घाए । बाँबानों ने सुना
कि एक दरं मरा पील बूँब रखा है—

मिर्छमिर-नीमिरमिर मैंह पईकी

घीर डंकी बाली बासू

घर के बिछड़वा रे के

रामू प्यारा कर जी मिलस्यो

बन एक बिरमल दरं पील की ब्यबा लहराने लयी घीर माय जी
राजसगन की बरती इस पीर को घमँहिण बिए ना रही है, पाटी
छेदी—हमेषा ब्या पन-पन ।

इस कुएँ में है माई । तुने बनणा की देखा है, वह रामू की भाँति पवित्र की पीर घिसू की भाँति निर्दोष ।" रामू कुएँ की घोर निहारने लगा "बनखा ! तू मेरी सर्वस्व की आत्मा घोर परमात्मा भी । जब तू नहीं तब मैं क्यों ? इस रामू को उस बिछड़ में मिल जाना चाहिये इस प्राक्कवन को उस घनस्थ में लीन हो जाना चाहिये ।" कहते-कहते रामू कुएँ में डूब गया ।

एक मसहूर बेचना-मरा गीत उस घर के लिए वहाँ पर छा गया ।
 दुर्जन वहाँ से छठा । मोर का नूतान देसठे-देसठे उठा । मोर
 मन्त्रकार बहूँ मोर केन गया । दुर्जन बनणा के समीप जाकर बोला
 'बनखा ! तेरा रामू तेरे लिए कुएँ में कूँकर मर गया ।'

"मेरा रामू !"

"हाँ तेरा ।"

बनणा घाँधी की तरह कर्ण की घोर मापी । वह 'रामू रामू
 बिस्साठी का रही थी ।

दुर्जन मन्त्रकार राजा रितामू के पास पहुँचा ।

बाबलों की गर्जन मुन्नी भरती को कह रही थी—हम तेरी व्यास
 घसी बुद्ध देते हैं तेरी पीर घसी हर लेते हैं ।

"घमनवाता की जय !"

"क्या बात है ?"

"घंघर ही गया ।"

"कैसे ?"

"बनणा रामी सा कुएँ की घोर भाग गई है । रामू को मैंने ठिकाने
 लगा दिया है ।"

"बनखा !" राजा रितामू कुएँ की घोर भाँटे ।

भरती उनके भारी भरकम करमों से काँप रही थी ।

निबिड़ घमनकार छाया हुआ था । बिजली कीभी । राजा रितामू
 ने देखा कि बनखा कुएँ के पास लड़ी है । वह कह रही है "रामू ! ठहर

जा मुझ छोड़कर मत जा मैं धाई मैं धाई ।”

राजा रिसामू चिल्लाए, “राणी सा ! रुक जाइय । रुक जाइये
पुर्जेन पकड़ो पकड़ो ।”

पर जबला कुएँ में कूदकर अपने बेचना के पास जाती गई ।

प्रकृति क्रुपित हो गई ।

जयलपानी सापिन-सी किमसी कीककर पृथ्वी पर पड़ी थीर अपनी
सपनों से राजा रिसामू थीर बुर्जन को बलाकर राज कर दिया ।

बरती का पाप बाल्य हो गया । उसकी पीर मिट गई ।

दूसरे दिन जब गाँव से राजा रिसामू की सेनायें बीबान जी के
मैगुल में लौट गईं तब पौरबाग उस कुएँ पर घाए । गाँववालों ने सुना
कि एक दर मर गीत पूँज रहा है—

झिरमिर-झिरमिर मैं हूँ पड़ेंजी

धीर डंडी बाली बामू

घब के बिछड़मा रे के

रामू प्यारा कब जी मिलस्यो

दरें एक चिरमग बर्द भीत की ध्यासा सहाराने लगी थीर धात्र की
राजस्वाम की बरती रुक पीर को घम्टाहिन किए या रही है पाती
छेपी—इमेया सदा पल-पल ।